ॐ तत्सत्

सलभ-ज्योतिषज्ञान

लेखक व प्रकाशक

पं० वासुदेव सदाशिव खानखोजे

बिलासपुर सी० पी०

प्रथम संस्करण १०००]

[मूल्य तीन रुपया

कै० रा० रा० पं० सदाशिव बलवंतराव खानखोजे,
विलासपुर, सी० पी०

जन्म
शके १७७० आषाढ
कृ० प० तृतीया

मृत्यु
शके १८५[illegible] भाद्रपद
शु० प० एकादशी

समर्पण

कैलासवासी पू० पिता जी तथा माता जी

आपके गुरु-मंत्र, कृपा, प्रसाद तथा शुभ आशीर्वाद का ही यह फल है कि आज ज्योतिषशास्त्र जैसे सर्वश्रेष्ठ और नित्योपयोगी शास्त्र पर यह ग्रंथ लिखने का मुझे सुअवसर प्राप्त हुआ। यह कार्य यदि आपके समक्ष पूर्ण हुआ होता तो मैं अपनेको अत्यंत भाग्यवान समझता, तथापि मेरा यह विश्वास है कि आप स्वर्ग से ही अपना हर्ष प्रकट कर मुझे आशीर्वाद देंगे और उत्साहित करेंगे।

आपके अनंत उपकार व महान् ऋण से अंशतः ही क्यों न हो, उतऋण हो सकूँ, इसी प्रबल भावना से प्रेरित होकर यह ग्रंथ फूल या फूल की कली के रूप में आपके कमल-चरणों पर अनन्य भाव से सादर समर्पित करता हूँ।

आपका

आजन्म ऋणी व नम्र सेवक

वासुदेव

श्रद्धाञ्जलि

इस ग्रंथ को प्रकाशित करने के लिये इस जिले के दानवीर विभूति तथा सम्माननीय महोदय श्रीमान् दीवान रुद्रसरन प्रतापसिंह जमीनदार उपरोड़ा स्टेट तथा सरबराकार सा० कोरबा स्टेट जिला विलासपुर ने मुझे आर्थिक सहायता पहुँचाकर अपने उदार अतःकरण तथा साहित्य-प्रेम का पूर्ण परिचय दिया अतः मैं उन्हें कोटिशः धन्यवाद देता हूँ। वर्तमान, विश्व संकट के समय इस ग्रंथ का प्रकाशित होना असंभव था किन्तु आपकी सद्बुद्धि, कृपा-दृष्टि व उदाराश्रय के कारण ही यह ग्रंथ आज मैं जनता की सेवा में उपस्थित कर रहा हूँ। आपके इस महान उपकार के लिये अपने हृदय की सदिच्छा व्यक्त करने के अतिरिक्त मेरे लिए अन्य कोई साधन नहीं। अतः रुद्रावतार (काशी विश्वेश्वर) से मेरी सविनय व नम्र प्रार्थना है कि उक्त रुद्रशरण (जमींदार साहब) को पूर्ण ऐहिक सुख प्रदान कर चिरायु करे।

विलासपुर सी. पी.
मु०—काशीक्षेत्र
ता० ५-४-१९४३

आपका कृपाभिलाषी,
वासुदेव सदाशिव
खानखोजे

श्रीमान्

दीवान रुद्रसरन प्रताप सिंह जमीनदार साहब उपरोड़ा स्टेट

तथा सरबराकार मा० कोरबा स्टेट, बिलासपुर, सी० पी०

ॐ

महामना पंडित मदनमोहन मालवीयजी
भूतपूर्व व्हाईस चांसलर तथा
रेक्टर हिंदू-विश्वविद्यालय
और
सभापति अखिल भारत-वर्षीय
महासभा सनातन धर्म
काशी ।

सुलभ-ज्योतिष-ज्ञान नामक ग्रन्थ की अनेक विद्वान ज्योतिषियों ने प्रशंसा की है। फलित-ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त करने में यह पुस्तक विद्यार्थियों की सहायक होगी।

— o —

विद्या वागीश राजेश्वरदत्त शास्त्री, आयुर्वेद शास्त्राचार्य ('B. H. U.) मेंबर बोर्ड आफ इंडियन मेडिसिन यू० पी० गवर्नमेंट, भूतपूर्व प्रेसीडेंट दशम यू० पी० आयुर्वेदिक कान्फरन्स आयुर्वेदिक फिजीशियन व प्रोफेसर आयुर्वेदिक कालेज हिंदू यूनिवर्सिटी बनारस :—

श्री पं० वासुदेव सदाशिव खानखोजे की लिखी हुई 'सुलभ ज्योतिषज्ञान' नामक पुस्तक देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। पुस्तक वस्तुतः यथा नाम तथा गुण है। केवल ज्योतिष विद्या के श्रद्धालुओं के लिये ही नहीं अपितु वैद्यों के लिये भी बड़ी उपयोगी है। किस ग्रह की दशा में कौन कौन रोग हो सकते हैं इसका सम्यक् विवेचन किया गया है जिससे दैव व्यपाश्रय चिकित्सा करके वैद्य युक्ति व्यपाश्रय के प्रयोग करते हुए शीघ्र सफलता प्राप्त कर सकते हैं तथा आतुर स्वयं इस पुस्तक से शान्ति का मार्ग पा सकता है। आशा है इस ग्रन्थ से जनता का परम उपकार होगा।

शब्दों का अर्थ

नाम	अर्थ
लग्नेश	कुंडली के प्रथम स्थान का स्वामी
धनेश, द्वितीयेश, मारकेश	,, द्वितीय ,, ,,
तृतीयेश, पराक्रमेश	,, तृतीय ,, ,,
सुखेश, चतुर्थेश	,, चतुर्थ ,, ,,
सुतेश, पंचमेश	,, पंचम ,, ,,
षष्टेश	,, षष्ट ,, ,,
सप्तमेश, मारकेश	,, सप्तम ,, ,,
अष्टमेश (मृत्यु)	,, अष्टम ,, ,,
नवमेश, भाग्येश	,, नवम ,, ,,
दशमेश	,, दशम ,, ,,
लाभेश, एकादशेश	,, एकादश ,, ,,
व्ययेश, द्वादशेश	,, द्वादश ,, ,,
केंद्र	१-४-७-१० स्थान
त्रिकोण	५-९ ,,
मारकभाव	२-७ ,,
उपचय	३-६-१०-११ ,,
त्रिक	६-८-१२ ,,
आपोक्लीम	३-६-९-१२ ,,
चतुरस्त्र	४-८ ,,

नाम	अर्थ
अशुभग्रह	र० मं० श० रा० के० और निर्बलीचंद्र ।
शुभग्रह	चं० बु० गु० शु०
मारकग्रह	२-७ भावके स्वामी
नक्षत्र	राशी का भाग
राशि	आकाश का १२ वां भाग
कारकग्रह	विशेष कार्य का कर्ता ग्रह ।
भाव कारक ग्रह	भाव का नैसर्गिक ग्रह
युतियोग	दो ग्रहों का योग ।
प्रतियुति योग	दो ग्रहों का परस्पर सप्तम भाव में रहना
द्विर्द्वादशयोग	एक ग्रहसे दूसरा ग्रह का द्वितीय और द्वादश भाव में रहना ।
त्रिरेकादशयोग	एक ग्रह से दूसरे ग्रह का तृतीय आर एकादश भाव में रहना ।
केंद्र योग	एक ग्रह से दूसरे ग्रह का चतुर्थ और दशम भाव में रहना ।
षडाष्टकयोग	एक ग्रह से दूसरे ग्रह का छठवें और आठवें भाव में रहना ।
नवपंचक	एक ग्रह से दूसरे ग्रह का पांचवें और नवम भाव में रहना ।
स्वामी	राशि का मालक

नाम	अर्थ
ग्रहदशा	जन्म नक्षत्र के अनुसार ग्रहों का भुक्त व भोग्य समय काल।
अंतर्दशा	ग्रहदशा के अंतर्गत ९ ग्रहों का समय काल।
विदशा	अंतर्दशा के अंतर्गत ग्रहों का समय काल।
ग्रहांश	ग्रहों के अंश।
स्पष्ट ग्रह	ग्रहों के अंश स्पष्ट करने की रीति
साढेसाती	शनि के साढेसात वर्ष का काल

हिंदी नाम	इंग्रेजी नाम
रवि	Sun
चंद्र	Moon
मंगल	Mars
बुध	Mercury
गुरु	Jupiter
शुक्र	Venus
शनि	Saturn
मेष	Aeries
वृषभ	Tauras
मिथुन	Gemini
कर्क	Cancer
सिंह	Leo
कन्या	Virgo
तुला	Libra

वृश्चिक	Scorpin
धन	Sagitarius
मकर	Capricon
कुंभ	Aquarius
मीन	Pisces
ग्रह	Plannet
राशि	Signs or Zodiac
नक्षत्र	Constillation or Asterism.
मित्रक्षेत्र	मित्रराशिका भाव
भाव	स्थान

लेखक के दो शब्द

ज्योतिषशास्त्र के गणित व फलित विभाग विषयों पर सर्वमान्य संस्कृतभाषा में तथा सटीक हिन्दीभाषा में व अन्य भाषाओं में अनेक आधार भूत ग्रंथ उपलब्ध होते हुए यह अल्प ग्रंथ लिखने का प्रयोजन क्या है इसके विषय में प्रथम यहाँ दो शब्द लिखना हम आवश्यक समझते हैं। ज्योतिष शास्त्र यह संस्कृत भाषा में श्लोक रूप में वर्णित है और आधुनिक युग में अधिकांश सुशिक्षित समाज इस देव वाणी से सर्वथैव अपरचित है। ऐसी स्थिति में इस शास्त्र के जिज्ञासू व प्रेमियों को इसे अवगत करना तथा सर्वसाधारण जनता को इसके रहस्य, मर्म, तत्व व उपयोग से पूर्णतः परिचित होना असंभव है। जनता के समक्ष यह एक कठिन समस्या दीर्घ काल से उपस्थित है और इसे कुछ अंश क्यों न हो, हल करने के हेतु यह अल्प ग्रंथ विशुद्ध हिन्दी भाषा में लिखने का हमने संकल्प किया। उद्दश यह है कि इस शास्त्र पर अविश्वास या अन्ध विश्वास व्यक्त करने वाले लोगों को तथा इस देश के तरुण पिढी को यह क्लिष्ट, तिरस्कृत, परन्तु नित्योपयोगी विद्या अल्प कष्ट, खर्च व समय में प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हो और यह त्रिकालदर्शी विद्या उनके आदर को शीघ्र ही प्राप्त हो सके। इसके साथ ही इस सर्व श्रेष्ठ विद्या का प्रचार देश के समस्त सुशिक्षित सज्जनों में अधिक प्रमाण में होकर उन्हें इससे नित्य लाभ उठाने का सुअवसर मिल सके।

इस देश में इस शास्त्र का जन्म कई हजार वर्ष पूर्व मानवी प्राणी के कल्याण के लिये अर्थात् हताशों के हृदय में नवशक्ति उत्पन्न करने के लिये, दीनों का दुःख दूर करने के लिये, मूढ़ों के मन का अन्धकार नष्टकर उनमें कर्तव्य कर्म स्फूर्ति की ज्योति प्रज्वलित करने के लिये, मार्ग

भ्रष्ट लोगों को सन्मार्ग दिखाने के लिये, मदांधों को मद से जागृत करने के लिये, दुखियों को सुखी, अज्ञानी को ज्ञानी, नास्तिकों को आस्तिक, तथा प्रारब्धवादियों को प्रयत्नवादी बनाने के लिये, पतितों का उद्धार करने के लिये, समाज शुद्धि के लिये और राष्ट्र भावना व संस्कृति उद्दीपित करने के लिये हुआ है जिसके ज्ञान से प्रत्येक व्यक्ति, कुटुम्ब, व समाज को लाभ होकर राष्ट्र को लाभ होना निश्चित है। जगत में राष्ट्रीय धर्म, राष्ट्रीय भावना, राष्ट्रीय संस्कृति व राष्ट्रीय विद्या के प्रति राष्ट्र के प्रत्येक संतान के मनमें अभिमान जागृत हुए बिना किसी भी राष्ट्र की उन्नति होना असंभव है। अतः यह ग्रंथ हमने इस शास्त्र के अल्पसंख्य ज्ञातों के लिये नहीं किंतु देश के समस्त सुशिक्षित सज्जन तथा विद्यार्थीगण के लाभार्थ लिखा है।

ज्योतिष विद्या की महानता व अनमोल उपयोगिता तथा अद्भुत चमत्कार से जगत् के विद्वज्जन पूर्ण परिचित हैं परन्तु शास्त्र की क्लिष्टता तथा रुक्षता के कारण यदि अनभिज्ञ लोग इस शास्त्र पर अज्ञानवश कटाक्ष करते हों तो उसपर दुर्लक्ष करना ही योग्य होगा। इस शास्त्र की उत्पत्ति, प्रगति व महति तथा प्राचीन व अर्वाचीन इतिहास का पूर्ण विवेचन हमने प्रस्तावना में किया है अतः यहाँ उसकी पुनरावृत्ति करना उचित नहीं। किन्तु विषयारंभ करने के पूर्व प्रथम यह जानना आवश्यक है कि (१) ज्योतिष शास्त्र क्या है और (२) क्या मानवी जीवन सुखमय बनाने के लिये इस शास्त्र के ज्ञान की आवश्यकता है?

(१) ज्योतिष शास्त्र यह एक दूरबीन यंत्र है जिसके द्वारा मनुष्य अत्यंत दूर को शुभाशुभ घटनाएँ प्रत्येक क्षण अत्यंत स्पष्ट रीति से देख सकता है अर्थात् इस विद्याके बल मनुष्य को भविष्य काल में होनेवाले शुभाशुभ घटनाओं तथा समय का निश्चित ज्ञान वर्तमान समय में ही हो

सकता है। यह एक ऐसी विचित्र विद्या है कि सुख के समय यह दूरबीन का कार्य करती है और दुःख आने पर यह टार्चलाइट याने प्रकाश देने का कार्य करती है। अर्थात् यह एक ही विद्या भिन्न २ समय पर भिन्न २ रूप से अपना कार्य कर मनुष्य को भावी संकटों से जागृत कराती है। इसीलिये इस जगत में इसका अस्तित्व, महत्व और प्रभुत्व आज तक कायम रह सका और प्रतिदिन बलवत्तर होता जा रहा है।

(२) मनुष्य यह एक आशावादी प्राणी है और वह प्रायः आशा पर ही जीवित रहता है । मानवी जीवन को श्रेष्ठता केवल वर्तमान घटनाओं के ज्ञान से नहीं किंतु भविष्य में होने वाली शुभाशुभ घटनाओं के ज्ञान ही से सिद्ध हुई है। और भविष्य का ज्ञान प्राप्त करने का एकमेव साधन याने ज्योतिष शास्त्र है। अतः भविष्य ज्ञान प्राप्त कर जीवन सुखमय बनाने के लिये इस शास्त्र की मनुष्य को अधिक आवश्यकता है। इसके सिवाय दूसरे दृष्टि से विचार करने से पाठकों को यह ज्ञात होगा कि मनुष्य यह एक प्रवासी प्राणी है। वह मृत्यु की टिकट ले जन्म स्टेशन से कालकी गाड़ी में बैठकर नित्य प्रवास किया करता है। परंतु जिस तरह रेलगाड़ी का प्रवासी प्रवास आरंभ करने के पूर्व या आरंभ करने पर अपने स्टेशन से मुकाम तक के प्रत्येक अगले छोटे बड़े व गाडी बदलने वाले जन्कशन स्टेशनों का तथा मार्ग में मिलनेवाले सुख दुःखादि और निश्चित समय का ज्ञान अनुभवी प्रवासी से अथवा रेल्वे गाईड से स्वयं प्राप्त कर लेता है, अथवा मोटर गाड़ी का प्रवासी अपने स्थान से मुकाम तक के स्थान का तथा मार्ग में मिलनेवाले नदी, पुल वा सड़क की स्थिति आदि का ज्ञान अनुभवी प्रवासी से अथवा मोटर गाईड़ से स्वयं प्राप्त कर लेता है उसी तरह कालरूपी गाड़ी के प्रवासी को जन्म स्टेशन से मृत्यु स्टेशन तक मिलने वाले

छोटे, बड़े व जङ्कशन स्टेशनों का व मार्ग के अनेक सुख दुःखादि समय का निश्चित ज्ञान अनुभवी भविष्यज्ञों से अथवा ज्योतिष शास्त्र से स्वयं प्राप्त कर लेना चाहिये। अन्यथा रेल व मोटर गाड़ी के अज्ञ प्रवासी को मार्ग में अकल्पित कष्ट मिलना तथा उसकी यात्रा कष्ट समय होना जिस तरह निश्चित है उसी तरह कालरूपी गाडी के प्रवासी की स्थिति होना भी निर्विवाद है। तात्पर्य समय के ज्ञान के सिवाय रेलगाड़ी से प्रवास करने की जिस तरह चेष्टा करना है उसी तरह ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान के सिवाय आयुष्य का कालक्रमण करने की चेष्टा करना है। इस शास्त्र के आधार पर मनुष्य आगामी प्रत्येक शुभाशुभ समय, यशापयश, हानिलाभ, भावी परिस्थिति, और परिणाम आदि स्टेशनों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर ऐसे प्रसंगों से सावधान रह सकता है तथा उन्हें प्रतिकार करने के लिये वह पूर्व ही से सामर्थ्यवान हो जाता है। इस शास्त्र से इस तरह का ज्ञान प्राप्त कर सूज्ञलोग अशुभ प्रसंगो को घटाने या हटाने के प्रयत्न में संलग्न हो जाते हैं किंतु अज्ञजन भविष्य मालूम होने पर भी शास्त्र के सत्यता का अनुभव लेने के हेतु वे स्वस्थ बैठते हैं; यही समंजस और असमंजस मनुष्य में अंतर है।

प्राचीन ग्रंथों में ऐसे कई उदाहरण दिये हैं जिससे प्रत्येक मनुष्य को यह स्पष्ट मालूम होगा कि इस शास्त्र का ज्ञान कितना पोषक व तारक है। उन सबों का यहाँ उल्लेख करना असंभव है किंतु उदाहरण-रूप में एक दो घटनाओं का यहां उल्लेख करना आवश्यक है। जैसेः——

(१) भारतवर्ष की प्रसिद्ध कन्या सती सावित्री को उसके विवाह होने के पूर्व यह मालूम हुआ कि उसका भावी पति अल्पायुषी है। उसने उसी समय से शिवाराधना शुरू की और अपने सत् कर्मों द्वारा समय आने पर यमराज का सामना कर अपने पति को मृत्यु के पंजे से बचा कर जीवन शक्ति दिलाई।

(२) दूसरी सती सीमंतिनी के जन्म समय उसके पिता (राजा) ने ज्योतिषियों को फलित वर्णन करने के लिये कहा। परंतु यथार्थ भविष्य कथन करने में ज्योतिषयों को कुछ संकोच हुआ। अंत में एक तज्ञ ने यह स्पष्ट रीति से कहा कि "इस लडकी को तेरहवें वर्ष में वैधव्य प्राप्त होगा"। कुछ वर्षों के बाद सीमंतिनी को यह हाल मालूम हुआ और संकट निवारणार्थ उसने शिवाराधना शुरू की। परिणाम यह हुआ कि विवाह होने पर ठीक १३ वें वर्ष उसका पति कालिंदी नदी में डूबकर बह गया परंतु सीमंतिनी की आराधना कायम ही थी। अंत में वह प्रवाह से बच कर तीन वर्ष के पश्चात् सीमंतिनी के समक्ष पुनः प्रगट हुआ।

भारतवर्ष के इन सतियों को यह ज्ञान यदि न होता तो क्या वे इन आपत्तियों का सामना कर उन पर विजय प्राप्त कर सकतीं ? भविष्य के ज्ञान से प्रत्येक मनुष्य के मनमें बुद्धि, शक्ति व धैर्य उत्पन्न होता है यह स्पष्ट है।

कई आधुनिक पंडितों का यह कहना है कि आकाशस्थ ग्रहों का पृथ्वी के चराचर वस्तु और प्राणियों से कोई संबंध नहीं परतु जबतक दुनियाँ में सूर्यप्रकाश कायम है, नभो मंडल में वायु नित्य बह रही है और चंद्र सूर्य के ग्रहणों का अनुभव लोगों को मिल रहा है तबतक ऐसे पंडितों के निर्मूल विधानों का सूज्ञ जनतापर कोई परिणाम नहीं पड़ सकता यह हमारा पूर्ण विश्वास है। इसके सिवाय इनका दूसरा आक्षेप यह भी है कि ज्योतिषज्ञ लोग जनता के अज्ञानता का लाभ उठा उनसे अर्थ प्राप्ति करते हैं। यह यथार्थ में सत्य है किंतु इन आक्षेपकारों से क्या हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि इस मार्ग का अवलंबन आंग्ल विद्या विभूषित पंडित नहीं करते ? हमारे समझ में दोनों में सिर्फ इतना ही अंतर है कि आधुनिक विद्या के पंडितों को राजाश्रय होने के कारण

लोगों से द्रव्य उपार्जन करने का उन्होंने लायसंस मिलाया है किंतु इस प्राचीन विद्या के आचार्यों ने ऐसा कोई लायसंस प्राप्त नहीं किया है और केवल इसी कारण इस विद्या को निरूपयोगी ठहराना याने सूर्य के तेज को हथेली से रोकने का प्रयत्न करना है। तथापि ऐसे आक्षेपकारों से हमारा यह निवेदन है कि वे इस शास्त्र से स्वयं परिचित हो ऐसे प्रसंगों से बचने का प्रयत्न करें क्योंकि इस जगत् में अज्ञानी से अज्ञानता का फायदा ज्ञानी लोग ही उठाया करते हैं अतः उनके लिए इनसे बचने का यही एक राजमार्ग है।

ज्योतिष शास्त्र यह सर्वोपयोगी शास्त्र होने के कारण अनादि काल से यह कट्टर विरोधियों के आघातों को टक्कर देते हुए अपनी प्रगति कर रहा है। इस शास्त्र का जन्म इस देश में होते हुए आज बीसवीं सदी में इङ्गलैंड, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, जापान आदि समस्त देशों में ज्योतिष विषय पर नित्य नई पुस्तकें प्रसिद्ध हो रही हैं और केवल अमेरिका में आज दिन ५०००० से अधिक ज्योतिषज्ञ हैं यही इसके प्रगति का प्रत्यक्ष प्रमाण है। क्लेपर जैसे महान विद्वान पाश्चात्य ज्योतिषज्ञ को सैकड़ों वर्ष पूर्व यह मान्य करना पड़ा कि ग्रहों के योग व प्रतियोग का प्रत्यक्ष अनुभव मनुष्य को नित्य मिलने के कारण इनके शुभाशुभ परिणामों पर निःसंशय विश्वास करना चाहिये। परंतु इस देश के आधुनिक पंडितों का इस शास्त्र पर यदि विश्वास न होता हो तो उनसे हमारा यह नम्र प्रश्न है कि:—

(१) अधिकार, ऐश्वर्य व वैभव के शिखर पर रहने वाले महानुभावों को जगत के सर्व साधन उपलब्ध होते हुए भी उन्हें शारीरिक तथा मानसिक संकटों का सामना करने का दुर्धर प्रसंग तथा स्त्री पुत्रादि के वियोग वश शोक सागर में एकाएक डूबने का उन पर जो दुर्भाग्य प्राप्त होता है इसका क्या कारण ?

(२) संपन्न स्थिति में जन्म लेने वाले सज्जनों के परिस्थिति में आकस्मिक परिवर्तन होने के कारण अपरिमित कष्ट से आयुष्य क्रमण करने का उन्हें जो दुर्भाग्य प्राप्त होता है, व इसके विपरीत विपन्न स्थिति में जन्म लेने वाले सज्जनों को अकल्पित सुख और ऐश्वर्य प्राप्त होकर अत्यंत सुख से आयुष्य क्रमण करने का उन्हें जो सौभाग्य प्राप्त होता है, इसका क्या कारण ?

ज्योतिष शास्त्र यदि ऐसे अनेक बिकट प्रश्नों का तथा अनेक शुभाशुभ घटनाओं का अत्यंत समाधान पूर्वक उत्तर देने के लिये समर्थ है तो आधुनिक विद्वज्जन इस विद्या के प्रति अपना अविश्वास किस न्याय से प्रगट करने का साहस कर सकते हैं। यह हमारे ध्यान में नहीं आता। अस्तु। हमारा यह विश्वास है कि ज्योतिष के ज्ञान के विना आयुष्य क्रमण करना याने घोर अंधःकार में दीपक के सिवाय मार्ग क्रमण करना है। आधुनिक सुशिक्षित समाज यदि इसी प्रकार से अपना आयुष्य क्रमण करना चाहते हों तो हमारा कोई आग्रह नहीं। क्योंकि हम यह जानते हैं कि इस जगत में मनुष्य प्राणी ईश्वर व पशु इन दोनों के मध्य खड़ा है अर्थात् वह इन दोनों पातों के बीच का एक साँधा है। चाहे तो वह महान से महान होने का प्रयत्न कर सकता है अन्यथा वह पशु से पशु भी हो सकता है और उसके विचार व कर्मों पर से दुनियाँ को यह मालूम करना कठिन नहीं।

आकाशस्थ ग्रहों को तीन अवस्था है अर्थात उच्च, मध्यम और नीच और इन ग्रहों के अवस्थानुसार प्रत्येक मनुष्य सत्, रज और तम इन तीन गुणों से युक्त हो वह इस पृथ्वी पर जन्म पाकर तज्ञ, सूज्ञ और अज्ञ कहलाता है। इस जगत् में प्रत्येक मनुष्य इन ग्रहों के प्रभावानुसार जन्म से मरण तक कालरूपी गाड़ी के पहिले, दूसरे और

तीसरे दर्जे के डब्बों में बैठ कर अपना प्रवास करता है। और इसी क्रम से उसे सुख या दुख का मिलना निश्चित है। इन सब बातों का विचार न करते हुए यदि कोई मनुष्य तीसरे दर्जे से प्रवास करते हुए इस शास्त्र के बल पहिले दर्जे के सुख की आशा करे तो उसे अवश्य निराश होना पड़ेगा। परंतु इस शास्त्र के द्वारा वह यह जान सकता है कि कब से कब तक वह किस दर्जे से प्रवास करने योग्य है और उसी स्थिति में रहकर वह अपनी जीवन यात्रा किस तरह सुखमय बना सकता है। यह भविष्य तथा आगामी सूचना किसी भी दृष्टि से मनुष्य को हितावह और लाभदायक है इसमें संदेह नहीं।

इस देशके प्राचीन तथा अर्वाचीन धुरंधर विद्वान ग्रंथकारों ने इस शास्त्र के संस्कृत श्लोकों का हिन्दी भाषा में अनुवाद कर सटीक हिन्दी ग्रन्थों द्वारा इस शास्त्र के प्रति देश के विद्वानों की भावना तथा श्रद्धा आजतक जीवित रक्खी। अतएव वे विद्वत्‌रत्न और ज्योतिषज्ञ धन्यवाद के पात्र हैं अन्यथा इस देश से संस्कृत भाषा का लोप होते ही यह परोपकारी व त्रिकालदर्शी विद्या भारतवासियों को सदैव के लिये अपरिचित हो जाती। वर्तमान युगमें मानवी जीवन का कलह प्रतिदिन भयंकर स्वरूप धारण कर रहा है और मध्य: स्थिति के लोगों की स्थिति अत्यंत शोचनीय व कष्टमय होती जा रही है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति को इस शास्त्र के ज्ञान से विशेष लाभ होना निश्चित है। और इसी हेतु से "सुलभ ज्योतिषज्ञान" नामक ग्रंथ सरल हिन्दी भाषा में लिखने का हमने साहस किया है। हमारे इस प्रयत्न से यदि जनता को लाभ हुआ तो जनता जनार्दन की सेवा करने का हमें हर्ष व संतोष होगा इसमें संदेह नहीं।

इस जगत में ईश्वर सर्वज्ञ है और मनुष्य अल्पज्ञ है। ऐसी स्थिति

में इस क्लिष्ट विषय पर कोई खास नई बातें लिखना असंभव है। इस संबंध से ऋगवेद संहिता में कहा है कि "धाता यथा पूर्वमकल्पयत्" अर्थात् साक्षात् विधाता ने जैसी सृष्टि पूर्व में थी वैसीही फिर से निर्माण की तो उस विधाता निर्मित मानवी प्राणी में से हमारे समान एक अत्यल्प मति के मनुष्य के लिये ज्योतिषशास्त्र जैसे समुद्र की तरह अगाध, गहरा, अफाट, व त्रिकालदर्शी शास्त्र के अनेक अंगोंपर पूर्ण प्रकाश डालना तथा उसके अनमोल उपयोगिता से जनता को परिचित करा देना केवल अशक्य है। तथापि हमने इस एक ही ग्रंथ में अनेक ग्रंथो का निष्कर्ष तथा अनेक विषयों का समावेश कर सरल भाव व भाषा में लिखने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है। परंतु हमारे इस प्रयत्न में हमें कहांतक यश मिला अथवा नहीं इसका निर्णय करना विद्वान ग्रंथकार और सूज्ञ पाटकों पर सर्वस्व निर्भर है।

व्यासोच्छिष्टं जगत् सर्वम् "There is nothing new under the sun" इन कहावतों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि इस जगत् में नया कुछ नहीं है। अर्थात् सब कुछ पुराना ही है। तथापि यहां यह लिखना आवश्यक है कि जिस परमेश्वर ने यह अल्प लोक सेवा करने की हमें बुद्धि प्रदान कर यह कार्य पूरा करने के लिये शक्ति और यश दिया उस सृष्टिकर्ता सर्वव्यापी विश्वेश्वर को अनन्य भाव से शरण जाकर यह लेख हम समाप्त करते हैं। संभव है कि इस ग्रंथ में कुछ त्रुटियाँ रह गयी हों किंतु विद्वान ग्रंथकार तथा क्षमाशील पाठकगण हमें क्षमाकर यदि हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित करने की कृपा करें तो हम उनके अत्यंत आभारी होंगे।

यह ज्योतिष विद्या हमने कै० पं० बी० सूर्यनारायणराव, बी० ए०, एम० आर० ए० एस, यफ० आर० यच० यस, इत्यादि अनेक अंग्रेजी

ज्योतिष ग्रंथों के लेखक व संपादक बगलोर, तथा सुप्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य, ज्योतिषरत्न, पं० रघुनाथ शास्त्री पटवर्धन संपादक "ज्योतिर्भूषण" व अनेक मराठी ज्योतिष ग्रंथों के लेखक, मंत्री शुद्ध पंचांग प्रवर्तन सभा पूना, अधिपति भारतीय ज्योतिर्मंडल, डायरेक्टर लांग लाईफ इन्शुरंस कंपनी लि० पूना के ग्रंथों द्वारा प्राप्त की है। अतः इन गुरुवर्य व अप्रतिम विद्वान ज्योतिषाचार्यों के हम आजन्म ऋणी हैं। परंतु यह ग्रंथ लिखने के लिये और इस शास्त्र के अनमोल उपयोगिता पर हमारा विश्वास होने के लिये इस देश के सुप्रसिद्ध ज्योतिषज्ञ कै० शंकर बालकृष्ण दीक्षित "ज्योतिर्विलास" व "भारतीय ज्योतिषशास्त्र" के लेखक तथा गणेश शास्त्री देशिंगकर ज्योतिषज्ञ, लेखक व संपादक "ज्योतिर्विजय" के प्राचीन ग्रंथ सर्वस्व कारणीभूत हैं। अतः इन विद्वद्रत्नों को हृदय पूर्वक धन्यवाद देना तथा उनका मनः पूर्वक आभार मानना हमारा आद्य कर्तव्य है।

इस ग्रंथ को हिन्दी भाषा में लिखने के लिये हमारे परम प्रियबंधु श्रीयुत वामन रामचंद्र खानखोजे, बी० ए०, एल० एल० बी वकील बिलासपुर ने हमें आग्रह किया तथा हमारे प्रिय मित्र पं० वृन्दावन बिहारी मिश्रा, बी०ए० एल० टी०, विशारद, एल० एल० बी०, वकील बिलास पुर ने हमें उत्साहित किया इसलिये हम उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं। उसी तरह इस प्रान्त के धुरंधर साहित्य प्रेमी व सुप्रसिद्ध "भानुकवि" महामहोपाध्याय, रायबहादुर, श्रीयुत जगन्नाथ प्रसाद "भानु" साहित्य—वाचस्पति व साहित्याचार्य" रिटायर्ड एक्स्ट्रा असिस्टंट कमिश्नर, बिलासपुर, सी० पी० तथा महाकोशल मध्य प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री ठाकुर छेदीलाल एम० ए० (आक्सफोर्ड) बारिस्टर, एम० एल० ए०, सी० पी० बिलासपुर व राव बहादुर श्रीमान् डाक्टर गणपतराव रामराव

गोवर्धन एल० एम० एण्ड एस०, रिटायर्ड सिविल सर्जन, विलासपुर ने हमारे कार्य में हार्दिक सहानुभूति दर्शाकर समय २ पर हमें प्रोत्साहन दिया अतः हम इन महानुभावों के अत्यंत आभारी हैं।

हमारे ग्रन्थ के हस्त लिखित लिपिको पुण्य नगरी श्री काशी क्षेत्र के धुरंधर विद्वान, भास्कर सिद्धांत, दैवज्ञ-वाचस्पति, संस्कृत कालेजों के प्रधानाध्यापक, ज्योतिषाचार्य, आयुर्वेद शास्त्राचार्य व गणितज्ञों ने पढने में अपना अमूल्य समय खर्चकर बहुमूल्य सूचनाएं द्वारा हमारा उत्साह बढा हमें उपकृत किया। अतः हम उस पुण्य क्षेत्र के ज्योतिष रत्नों को हृदय पूर्वक धन्यवाद देते हैं। साथ ही काशीनिवासी हमारे मित्र पं० गणेशप्रसाद शर्मा ने हमें यथाशक्ति सहायता पहुँचाई अतः हम उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

इसके अतिरिक्त हमारे प्रांत के विद्वत्‌रत्न श्रीमान् डाक्टर बल्देव प्रसाद मिश्रा एम० ए०, एल० एल० बी० (लिट), नागपुर युनिवर्सिटी, ना० यु० हिन्दी विभाग के मुख्याधिपति व मध्यप्रांत के अनेक साहित्य संस्थाओं के अध्यक्ष तथा कलकत्ता, नागपुर, पटना व पंजाब युनिवर्सिटीज के हिन्दी परीक्षक, रिटायर्ड दीवान, रायगढ़ स्टेट (विलासपुर) रायपुर सी० पी० और मान्यवर पुरुषोत्तम बालकृष्ण साठे, बी० ए०, एल० एल० एम, मीमांसा-भूषण, एम० आर० ए० एस० (लंडन) डायरेक्टर एल० एल० एम स्टडीज (नाग०-युनि०), लेखक-सुलभ अर्थशास्त्र व अनेक मराठी ग्रंथों के कर्ता तथा सबजज, द्रुग० सी० पी० ने हमारे ग्रंथ को पढ़ने में अपना अमूल्य समय खर्चकर हमें उपकृत किया। अतः इन दोनों विद्वत्‌रत्नों को हार्दिक धन्यवाद देना हमारा परम कर्तव्य है।

अंत में जिनके कृपा प्रसाद से हमें इनचार शब्दकणों का लाभ हुआ और जिनके शुभाशिर्वाद से यह ग्रंथ लिखने का सुअवसर प्राप्त हुआ उन

स्वर्गीय पूज्य माता पिता के चरणों पर मस्तक रख साष्टांग प्रणाम करते हुए ये दो शब्दों का लिखना हम समाप्त करते हैं।

बिलासपुर सी० पी०
मु० काशी क्षेत्र
ता० ४-१९४३

विद्वज्जन कृपाभिलाषी
वासुदेव सदाशिव खानखोजे

॥ श्रीः ॥

प्रस्तावना

जगत के इतिहास संशोधकों ने एक स्वर से यह घोषित किया है कि भारतीय आर्यों का वेद ग्रन्थ जगत के सर्व ग्रन्थों में अत्यंत प्राचीन, सर्वोत्कृष्ट, सर्वमान्य और आद्य ग्रंथ है। इस ग्रंथ में जगत के सर्व शास्त्रों अर्थात् ज्योतिष शास्त्र, गणित शास्त्र, धर्म शास्त्र, तर्क शास्त्र, न्याय शास्त्र वैद्यक शास्त्र, संगीत शास्त्र इत्यादि का संपूर्ण विवेचन संस्कृत भाषा में बीज रूप से किया है। अतः जगत के सब शास्त्रों की उत्पत्ति का केंद्र स्थान वेद ग्रंथ है यह स्पष्ट रीति से सिद्ध हो चुका है। वेद इस शब्द की उत्पत्ति विद् इस धातु से हुई है जिसका अर्थ "जानना" या ज्ञान है। इस ग्रंथ पर से जीवात्मा के ज्ञान के साथ ही परमात्मा का भी ज्ञान हो सकता है अतः इसे वेदचक्षु भी कहते हैं। इस अप्रतीम व परम पवित्र ग्रंथ में प्रत्येक शास्त्रों का वर्णन बीज रूप में होने के कारण भृगु, लोमस, आदि महर्षियों ने संस्कृत भाषा में भृगु संहिता, लोमस संहिता तथा सूर्यारुण नाम के स्वतंत्र ज्योतिष ग्रंथ अनादि काल पूर्व निर्माण किये। जिसमें प्रायः प्रत्येक घटी, पल, नक्षत्रादि पर जन्म लेनेवाले मानवी प्राणी के कुंडलियों का फलित संपूर्ण रीति से वर्णन किया गया है ऐसा कहते हैं। इन महान तपस्वी महर्षियों को धन्यवाद है कि जिन्होंने अपना सर्व आत्मबल व तपोबल, जगत कल्याण के लिये समर्पण कर इन आद्य ग्रंथों द्वारा मानवी प्राणी को त्रिकाल ज्ञान की दिव्य दृष्टि दी, अन्यथा भविष्य के ज्ञान के विना मानवी जीवन की प्रगति असंभव हो गई होती। ज्योतिष शास्त्र यह वेद का अंग

होने के कारण इसे वेदांग-ज्योतिष भी कहते हैं। भृगु महर्षि आदि जैसे त्रिकालज्ञ महर्षियों ने अपने सामर्थ्य व योग बल के आधार पर आकाशस्थ ग्रहों के मानवी प्राणी पर होने वाले शुभाशुभ परिणामों का चिकित्सक बुद्धि से अनुभव के पश्चात् जो सिद्धांत निर्माण किया उसे फलित शास्त्र कहते हैं। इसके पश्चात् वशिष्ठ, पाराशर, व्यास, गार्ग, मरीचि, अत्रि, सूर्य, पितामह, भारद्वाज, जैमिनी, शुक्रादि जैसे महान तपस्वी महर्षियों ने अनेक ग्रंथों द्वारा तथा रावण समान महान तपस्वी राक्षस राजा ने भी रावण संहिता द्वारा इस शास्त्र को अधिक उज्वलित किया इसलिये वे महर्षि भी कोटिशः धन्यवाद के पात्र हैं, अन्यथा यह दुःखमय भवसागर मानवी प्राणी के लिये सुख से पार करना असंभव हो गया होता। इस शास्त्र के–गणित व फलित शास्त्र ये दो मुख्य भाग हैं और सिद्धांत, संहिता और जातक ये तीन विभाग हैं। गणित शास्त्र के अंतर्गत सिद्धांत और संहिता विभाग और फलित शास्त्र के अंतर्गत जातक विभाग का अंतर्भाव किया है। हजारों वर्ष पूर्व इन्हीं महर्षियों ने गणित शास्त्र के आधार पर ग्रहों के गुण, धर्म, रूप, रंग, स्वभावादि का समस्त चराचर वस्तु और प्राणियों पर पड़ने वाले शुभाशुभ परिणामों का विस्तार पूर्वक वर्णन फलित शास्त्र में किया है। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि इन महर्षियों को शास्त्र का संपूर्ण ज्ञान था अन्यथा इन्हें अनादिकाल पूर्व यंत्रों के विना ग्रहों के बलाबल व फल के विषय इस शास्त्र के फलित भाग पर स्वतंत्र ग्रंथ लिखना असंभव हुआ होता। इन महर्षियों की प्रचंड शक्ति तथा त्रिकाल दृष्टि और उनके सर्वज्ञ होने का पूर्ण परिचय जगत के विद्वजनों को वेदांग ज्योतिष तथा सूर्य सिद्धांत आदि भारतीय शास्त्रों में वर्णित किये हुए फलित तथा भविष्य कथन पर से मिल चुका है। इसके अतिरिक्त जिस आर्यावर्त के अलौकिक विद्वान ज्योतिषाचार्य मय, सत्याचार्य,

वराहमिहिर, आर्यभट्ट, केशव दैवज्ञ, गणेश दैवज्ञ, ब्रह्मगुप्त, जीव शर्मा विष्णुदत्त, कल्याण वर्मा, माणिक्य आदि ग्रंथकारों ने अपने अपने ग्रंथों में ज्योतिष शास्त्र समान जाग्रत शास्त्र पर जगत के कल्याणार्थ सूक्ष्म विवेचन किया। उसी देश के लोगों का इस सर्वश्रेष्ठ शास्त्रों के प्रति उदासीनता का भाव दिखता याने अपने पूर्वजों के प्रति अपने अभिमान शून्यत्व का जगत को साक्ष्य देना है। गणित शास्त्र के आधार पर वार्षिक पञ्चांगों में दिये हुए सूर्योदयास्त, ग्रहांतर, राश्यांतर, ग्रहणादि के शुभाशुभ परिणामों का प्रत्यक्ष अनुभव लोगों को नित्य मिलता है किंतु इसी शास्त्र के आधार पर निर्मित किये हुए फलित शास्त्र के सिद्धान्तों पर यदि लोगों का विश्वास अज्ञानता के कारण न होता हो तो इसका दोष शास्त्र पर नहीं परंतु लोगों पर है ऐसा दुःख से कहना पड़ता है। तथापि वर्तमान युग में—पाश्चात्य देश के संशोधकों ने (आकाशस्थ ग्रहों की स्थिति व गति का ज्ञान) गणित शास्त्र के आधार पर अनेक यंत्रों द्वारा पुनः जगत को जो दिया है इससे भारत वासियों को अवश्य लाभ होगा इसमें संदेह नहीं। ज्योतिष शास्त्र यह अत्यंत प्राचीन शास्त्र है और इसके इतिहास से आधुनिक विश्व-विद्यालय पंडित यदि परिचित हो जायँ तो उनका स्वाभिमान अवश्य जाग्रत होगा ऐसा हमारा विश्वास है।

ज्योतिष शास्त्र का प्राचीन तथा अर्वाचीन इतिहास

पृथ्वी के प्राचीन राष्ट्रों में से जिन्हें ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान था ऐसे केवल दो राष्ट्र हैं एक भारतीय आर्य और दूसरे ग्रीक लोग। परन्तु क्रमशः इसका ज्ञान एशिया खंड के भारतीय आर्य, पारसीक, खाल्डिया प्रान्त के लोग, चिनी लोग तथा पश्चिम के ग्रीक व इजिप्त लोगों को हुआ और कुछ काल के बाद वहाँ के लोग इस शास्त्र में कितने निपुण हुए यह नीचे लिखे हुए ऐतिहासिक उदाहरणों से सहज सिद्ध होगा।

(१) इजिप्त तथा बाबिलोनिया के प्राचीन देवालयों के दिवालों पर ५२२६ वर्ष पूर्व लिखे हुए बारह राशि के चित्र लेख पिछले १००' वर्ष के अन्दर वहाँ के लोगों को मिले।

(२) खाल्डियन लोगों को ४७०० वर्ष पूर्व राशि, ग्रह, नक्षत्रादि का पूर्ण ज्ञान था।

(३) चीनियों को ४४५५ वर्ष पूर्व सूर्य ग्रहणादि का पूर्ण ज्ञान था।

(४) पारसीक लोगों को २५०० वर्ष पूर्व चांद्र और सौर मास तथा वर्ष का ज्ञान था।

ईस्वी सन् के कई वर्ष बाद इस देश में केशव दैवज्ञ व गणेश दैवज्ञ ये दो पिता पुत्र जैसे महान विद्वान ज्योतिषज्ञों का जन्म हुआ। इसके पूर्व इस देश में इस शास्त्र का वट वृक्ष इतना पुराना व ऊँचा हो गया था कि उसकी घनो छाया में अनेक जाति के लोग आश्रय लिया करते थे। वर्तमान समय पाश्चात्य लोगों ने इस शास्त्र को पूर्णावस्था में लाने के लिये जो भरसक प्रयत्न किया है वह उसी प्राचीन अति भव्य वट वृक्ष की एक डाली है जो जमीन से मिलकर पुनः एक स्वतन्त्र वट वृक्ष के रूप में दिखाई देती है और आधुनिक सुशिक्षित लोग इसे पाश्चात्य ज्योतिष शास्त्र कहते हैं। जिसका इतिहास संक्षिप्त में नीचे लिखे अनुसार है:—

ईस्वी सन् के पूर्व ग्रीक देश में पिथ्यागोरास नामके ज्योतिषी का जन्म हुआ व इसके पश्चात् हिपार्कस नामक ज्योतिषी का जन्म हुआ किन्तु ग्रीक ज्योतिष पद्धति के उत्पादकत्व का बहुमान वहाँ के ज्योतिषी हिपार्कस को देते हैं। इसने सूर्य चन्द्र के गति व स्थिति नियम पर एक ग्रंथ निर्माण किया। ई० सं० १५० में टालमी नामक

ग्रीक के राजा ने अलेकजंड्रिया में वेधशाला स्थापन की और इसने ग्रहों के परिक्रमा काल अयन, गति, ग्रहण आदि पर सिंटाक्स नाम का ग्रंथ लिखा जो आलमाजेस्ट नाम से प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ अरब और पाश्चात्य लोगों में १४०० वर्ष तक ईश्वर प्रणीत ग्रंथ माना जाता था।

टालमी के पश्चात् ई० सं० ७०० के लगभग मुसलमानों ने अलेकजेंड्रिया के प्रख्यात वाचनालय को जलाकर विद्यापीठ की स्थापना इस शहर के बदले बगदाद में की। ई० सं० ७३३ में खलीफा के दरबार में एक हिन्दू ज्योतिषी था। ई० सं० ८०० में मुसलमानों ने हिन्दुओं के ज्योतिष शास्त्र, अंकगणित, बीजगणित ग्रन्थों का अरबी भाषा में भाषांतर किया। इसके पश्चात् ई० स० ८२७ में टालमी के आलमाजेस्ट ग्रंथ का अर्बी में भाषांतर किया। अन्त में मुसलमान लोग इस शास्त्र में इतने निपुण हुए कि उन्होंने वेध यन्त्र निर्माण कर सूक्ष्म गणित द्वारा इस शास्त्र का अधिक प्रचार किया। तैमुरलंग का नाती उलुगवेग (संस्कृति नाम मानाई) ने समरकन्द में एक उत्कृष्ट वेधशाला स्थापित की व टालमी के अपूर्ण नक्षत्र स्थिति पत्रक को इ० स० १४३७ में अपने गणित द्वारा पूर्ण स्वरूप दे एक नवीन तारा स्थिति पत्रक ग्रंथ निर्माण किया। ई० स० ९०० के लगभग फ्रांस वगैरह देश के लोगों ने स्पेन के मुसलमानों से ज्योतिष विद्या का अध्ययन किया और विदेशियों ने ई० स० १३०० में आलमाजेस्ट के अरबी भाषांतर ग्रंथ का अनुवाद लाटिन भाषा में किया। इस समय कास्टिल का राजा आलफांजो ने ज्योतिषशास्त्र पर एक नवीन ग्रंथ निर्माण किया।

विश्वरचना पद्धति का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिये पाश्चात्य ज्योतिषी पिथ्यागोरास, टालमी, व न्यूटन ने और इसदेश के प्रसिद्ध ज्योतिषी आर्यभट्ट ने अघोर प्रयत्न किये परंतु उन्हें पूर्ण यश न मिला।

अंत में प्रशिया के कोपर्निकस नामके ज्योतिर्षी को ई. स. १५०७ में विश्व रचना पद्धति के सच्चे स्वरूप की कल्पना हुई। दीर्घकाल के शोध, बेध व गणित से सत्यता का पूर्ण अनुभव मिलने पर उसने ई. स. १५४३ में एक ग्रंथ को प्रकाशित किया जिसकी छपी हुई एक प्रति अत्यंत कष्ट से उसे मरने के कुछ घंटे पूर्व देखने को मिली और उसका प्राणोत्क्रमण हुआ। परंतु मरते समय उसने विश्वरचना पद्धति का ज्ञान जगत को दिया इसका उसे कितना आनंद हुआ होगा इसकी कल्पना यथार्थ में वही कर सकता है। ई. स. १५७६ में डेन्मार्क के राजा ने टायकोब्राहे ज्योतिषी के इच्छानुसार वहां एक वेधशाला स्थापित की।

ई. स. १६०० में ग्रहों की गति व स्थिति जानने के लिये दूरबीन यंत्र का प्रथम उपयोग करने का बहुमान हालेंड देश के ज्योतिषी गलि-लियो को मिला। इस दूरबीन की सहायता से २½ लाख मील दूर की वस्तु ४० मील दूर अंतर पर दिखने लगी। ई. सं. १६१९ में क्लेपर ने प्रत्येक ग्रह, सूर्य की परिक्रमा किस मार्ग से, कितने गति व अंतर से करते हैं इस पर एक ग्रंथ निर्माण किया जिससे दूरबीन के द्वारा वेध की सूक्ष्म कम्पना लोगों को होने लगी। ई. सं. १६८७ में अलौकिक विद्वान जैसे न्यूटन ने प्रिंसिपिया नाम का ग्रन्थ प्रसिद्ध किया जिसमें जड़ और द्रव्य पदार्थ के प्रत्येक परमाणु में आकर्षण शक्ति है और वे परस्पर को आकर्षित करते हैं यह सिद्ध किया। इसी नियम से विश्व बद्ध है जिसके कारण प्रत्येक ग्रह सूर्य की सदैव परिक्रमा किया करते हैं। इसके पश्चात् ई. सं. १८३० में प्रकाश लेखन कला यंत्र अर्थात् सूर्य चंद्रादि का चित्र उतारने का दूरबीन निर्माण हुआ व ई. सं. १८६० में वर्ण लेखक दूरबीन यंत्र निर्मित हुआ जिससे ग्रहों के रूप, रंग आदि का चित्र लिया जाता है।

हर्शल-नेपच्यून-ग्रहों के शोध का इतिहास

इंग्लैंड का राजा तीसरे जार्ज के राज्य में विलियम हर्शल नाम का एक प्रख्यात ज्योतिषी, दूरबीन निर्माणकर्ता तथा संशोधक था और इसे राजासाहब का पूर्ण आश्रय था। अनेक वर्ष से आकाश के भिन्न २ भाग में कितने तारे हैं इसका शोध करते हुए हर्शल को ता. १३-३-१७८१ में मिथुन राशि में एक अत्यंत बड़ा तारा दिखाई पड़ा। परंतु वह स्थिर न होने के कारण उसने उसकी गति निकाल कर यह सिद्ध किया कि यह एक ग्रह है और इसीलिये इस ग्रह का नाम हर्शल रक्खा गया। अन्य ग्रहों के पाश्चात्य नाम ग्रीक व रोमन देवताओं के नाम से प्रसिद्ध है यह ग्रह (देवता) ज्यूपिटर व सेटर्न (गुरु व शनि) से भी अत्यंत दूर होने के कारण इसका दूसरा नाम यूरेनस रक्खा गया जो कि सब देवताओं में श्रेष्ठ देवता माना जाता है। ई. सं. १८२० में फ्रांस देश के प्रख्यात ज्योतिषी ने गुरु, शनि हर्शल इन तीन ग्रहों की गति व स्थिति जानने का एक कोष्टक तैयार करना प्रारंभ किया परतु यूरेनस की गति स्थिति का मेल वेध से न मिलने-अर्थात् १८३० में २० विकला का अंतर १८४० में ९० विकला का अंतर व १८४४ में २ कला का अंतर गणित में आने के कारण, उसे यह शंका हुई कि इस ग्रह पर अन्य किसी ग्रह के आकर्षण शक्ति का प्रभाव पड़ता है। अतएव ज्योतिषियों की जिज्ञासा बढ़ती गई। ई. स. १८४५ आक्टोबर में इंगलैंड के तरुण गणितज्ञ जान आडम ने ग्रिनिच के मुख्याधिकारी प्रोफेसर एरी को इत्तला की कि यूरेनस को उपाधि करने वाला एक ग्रह सूर्य के किसी विशेष अंतर पर है। इस पर से फ्रांस के ज्योतिषी लव्हलीयर ने भी जून १८४६ में इस ग्रह का ग्रह मान प्रसिद्ध किया और उसने बर्लिन वेधशाला के अधिकारी को इस ग्रह का वेध लेने के लिये लिखा।

अंत में बर्लिन के ज्योतिषी ने यह ग्रह ता. १३-९-१८४६ को देखा जिसका नाम नेपच्यून रक्खा गया। इस तरह इस ग्रह का शोध जान आडम ल्व्हलियर और बर्लिन वेध शाला के अधिकारी ने किया। अनेक वर्षों के अविश्राम परिश्रम से पाश्चात्य ज्योतिषियों ने इन दोनों ग्रहों का शोध किया व इन ग्रहों के गति व स्थिति का ज्ञान गणित द्वारा किस तरह प्राप्त हो सकता है और वर्तमान युग में गणित शास्त्र कितने पूर्णावस्था के शिखर पर पहुँचा है यह स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिखाया, ऐसा मानना होगा।

हजारों वर्ष से आज तक एशिया, यूरोप व अमेरिका खंड के लोगों नें इस क्रम से सूर्य, ग्रह व पृथ्वी की भ्रमण गति व मार्ग, आकार व क्षेत्रफल, रूप व रंग, परस्पर अंतर व आकर्षण शक्ति आदि का हजारों यंत्रों द्वारा अपूर्व व अचूक शोध किया और इन खंडों के अनेक तत्ववेत्ता, संशोधक व ज्योतिषज्ञ पिथ्यागोरास, हिपार्कस, टालमी (ग्रीक) कोपर्निकस (प्रशिया) टायकोब्राहे, क्रेपर (डेनमार्क) गैलीलियो (हालेंड) लार्डरास (आयर्लैंड) झोलनर न्यूकोव (अमेरिका) न्यूटन हर्शल, जानआडम. प्राक्टर, लाकलियर (इङ्गलैंड) बोवर्ड, लायलास, लालंडी, लव लियर (फ्रांस) झडकील, पीअर्स रफील कैरो, एलनलियो (यूरोप) आलफान्सो (कास्टिल) हेरहेस (जर्मनी) उलुगवेग (समरकंद) आदि धुरंधर विद्वानों ने इस विषय पर अपनी अपनी मातृ भाषाओं में अनेक ग्रंथ लिखकर अपने देश निवासियों को इस विद्या में इतना निपुण बनाया कि आज वे लोग इस शास्त्र का सच्चा रहस्य और मर्म जानने का दावा करने लगे। इन अलौकिक व धुरंधर विद्वानों ने अपना सारा आयुष्य, धन व बुद्धि खर्चकर जगत् को इस शास्त्र की सत्यता पुनः सिद्ध करने के लिये जो कष्ट उठाया वह अत्यंत स्तुत्य है

और ये विद्वत् रत्न, तत्वज्ञ, संशोधक और ज्योतिषज्ञ भी धन्यवाद के पात्र हैं।

पाश्चात्य लोगों ने इस त्रिकालदर्शी शास्त्र को इस तरह अपनाया और अनेक ज्योतिषज्ञों ने अपने भविष्य वाणी से यूरोप देश के महान श्रेष्ठ राजे व प्रेसिडेन्ट जैसे सप्तम एडवर्ड, .सर आस्टिन च्येंबरलेन, लार्ड किचनर, किंग हम्बर्ट इटली, अष्टम एडवर्ड, (आज ड्यूक आफ विंडसर) हिटलर, गोरिंग, रिबेनट्राप, मिकेडो आदि अनेकों को मुग्ध कर इस शास्त्र का पूर्ण परिचय दिया। यह होते हुए भी इस देश के अधिकांश सुशिक्षित सज्जन आज भी निद्रित अवस्था में दिखाई देते हैं यह अत्यंत खेद से कहना पड़ता है। तीन हजार वर्ष के पूर्व हिंदु लोग ज्योतिष शास्त्र में ही नहीं किंतु, वैद्यक शास्त्र, रसायन शास्त्र, व्याकरण शास्त्र, ध्वनि शास्त्र, विमान शास्त्र, धनुर्विद्या शास्त्र, गायन शास्त्र, नाट्यकला शास्त्र, तर्क शास्त्र, वेदांत शास्त्र, अग्नयस्त्र शास्त्र तथा गणित शास्त्र आदि में इतने निपुण थे कि उनके लिखे हुए प्राचीन ग्रंथ आज भी सर्वमान्य ग्रन्थ समझे जाते हैं और इसे प्राचीन यवन लोगों ने भी मान्य किया है। तात्पर्य हमारे पूर्वज प्रत्येक शास्त्रों में निपुण थे ऐसा हम अभिमान पूर्वक कह सकते हैं। परंतु काल की महिमा और लीला इतनी विचित्र है कि सैकड़ों नहीं हजारों वर्ष पूर्व जो जगह या स्थान निर्जन व स्मशानवत् दिखाई देते थे वहां आज बड़े बड़े भव्य व सुन्दर इमारतों का दृश्य दिखाई दे रहा है और जिस जगह या स्थान पर बड़े बड़े राजमहल थे वे गिरकर अथवा गिराकर उन स्थानों पर कालांतर से आज मैदान, रस्ते या निर्जन वन दिखाई दे रहे हैं यह उसी समय की विचित्र लीला है। अर्थात् जो हिंदु राष्ट्र हजारों वर्ष पूर्व जगत के ज्ञान, कला, सभ्यता का मूल स्थान था वही राष्ट्र आज काल के विचित्र फेरे में पड़कर

अज्ञानवश हो इस हीन स्थिति को प्राप्त हुआ वह भी उसी समय का महात्म्य है।

प्रति दिन का यह अनुभव है कि जो सूर्य नारायण भगवान जगत को प्रकाश दे अपने प्रखर किरणों से माध्यान्ह समय जगत को थक्क कर छोड़ता है वही सूर्य नारायण देवता समय के प्रभाव से सायंकाल समय जगत को अस्त हुआ दिखाई देता है। परन्तु क्या वह यथार्थ में अस्त होता है? अर्थात नहीं! उसी तरह वर्तमान समय काल के चक्र में पड़कर हिंदुस्थान राष्ट्र जगत के लोगों को अस्त हुआ दिखाई देता है। इस संबंध से महा-भारत में कहा है कि "क्षयान्ता निचयाः सर्वे पतनान्तः समुच्छ्रयाः" अर्थात संसार में जो वस्तु एक समय शिखर पर पहुँचती है उसका पतन होना यह तत्व अबाधित है परन्तु सृष्टि के नियमानुसार उसका पुनः उत्थान होना यह तत्व भी निश्चित है इसका विस्मरण हमारे देश बांधवों को न होगा ऐसा हमारा विश्वास है।

ज्योतिष शास्त्र के फलादेशानुसार जिस तरह सूर्य व चंद्र इन दो ग्रहों के होनेवाले शुभाशुभ परिणामों का प्रत्यक्ष अनुभव मनुष्य मात्र को अनादि काल से प्रत्येक क्षण मिल रहा है उसी तरह अन्य ग्रहों के शुभा-शुभ परिणामों का प्रभाव भी मनुष्य प्राणी पर पड़ता है इसमें सन्देह नहीं। किन्तु साधारण मनुष्य को विश्वरचना पद्धति के ज्ञान के सिवाय उनके परिणामों का ज्ञान होना तथा उनके शंका का समाधान होना अशक्य है इसलिये विश्वरचना पद्धति के संबंध से संक्षिप्त में यहाँ लिखना आवश्यक है।

विश्वरचना पद्धति

जगत के अनेक संशोधकों ने हजारों वर्ष के अविश्राम परिश्रम से यह सिद्ध कर दिखाया है कि सूर्य, ग्रह और पृथ्वी इनको विश्व में एक

कुटुम्ब माला है। इस कुटुम्ब का मुख्य कर्ता सूर्य है और चंद्र, मंगल बुध, गुरु, शुक्र, शनि, हर्शल, नेपच्यून व पृथ्वी ये नवग्रह इस कुटुंब के सदस्य हैं। सूर्य में उत्पादक, संरक्षक, नाशक तथा आकर्षण शक्ति विद्यमान है और उसमें प्रकाश, उष्णता, वर्षा व अनेक रंगादि शक्तियाँ भी केन्द्रित हैं। वह अपनी सारी शक्तियाँ अपने कुटंब के प्रत्येक सदस्यों को योग्य प्रमाण से नित्य प्रदान करता है। वैदिकधर्मी लोगों की दृष्टि से सूर्य ईश्वर की विभूति है क्योंकि जगत में सूर्य देवता की आराधना करने वाली अनेक राष्ट्रं आजतक हो गयीं और शास्त्रीय शोध जैसा बढ़ता जाता है वैसा इसका प्रभाव प्रतिदिन अधिक दिखता जाता है क्योंकि इसके जगह परमेश्वर के विभूतियत्व का प्रत्यय शोधकों को अधिक दिखने लगा है। सूर्य यह आकर्षण शक्ति का केन्द्र स्थान है और यही आकर्षण शक्ति ग्रह और पृथ्वी में होने के कारण वे परस्पर को आकर्षित कर पृथ्वी सह प्रत्येक ग्रह सूर्य की नित्य परिक्रमा किया करते हैं। उनके इस क्रिया व प्रतिक्रिया का प्रयोग सदैव चालू रहता है। जिसका ज्ञान साधारण मनुष्य को होना असभव है। परन्तु न्यूटन जैसे अलौकिक विद्वान संशोधक ने ई० स० १६२७ में यह सिद्ध कर दिखाया कि पृथ्वी के प्रत्येक परमाणुं में आकर्षण शक्ति है। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि पृथ्वी के समान सूर्य की नित्य परिक्रमा करने वाले अन्य ग्रहों में भी आकर्षण शक्ति विद्यमान है। पृथ्वी के क्षेत्रफल या आकार की अपेक्षा ग्रहों का क्षेत्रफल कई गुना अधिक है और इसलिये ग्रहों में पृथ्वी से अधिक आकर्षण शक्ति विद्यमान होना स्वाभाविक है। पृथ्वी व ग्रहों का परस्पर एक जातीयता तथा आकर्षण शक्ति का सम्बन्ध और इनके क्रिया व प्रतिक्रिया का परस्पर प्रभाव यदि मानवी प्राणी पर आजन्म पड़ता हो तो इस पर शका करना वृथा है। अर्थात् आकाशस्थ ग्रहों में पृथ्वी के चराचर वस्तु और

प्राणियों पर अपने शुभाशुभ शक्ति का प्रभाव दिखाने की क्षमता है और वे इस जगत में अपने शुभाशुभ स्थिति के अनुसार सुख दुःख की अनन्त लहरें नित्य निर्माण किया करते हैं जिसके कारण मनुष्य को सुख दुःख भोगने का अनेक प्रसंग आता है। सारांश, विद्वान संशोधकों के निर्मित किये हुए सिद्धान्तों पर किसी भी समंजस मनुष्य ने अविश्वास व्यक्त करना याने जगत को अपने अज्ञानता का परिचय देना है। अस्तु।

जगत के कई विद्वान संशोधकों ने हजारों यन्त्र द्वारा यह भी सिद्ध कर दिखाया है कि आकाशस्थ ग्रहों का रूप रंग, गुण, धर्म, स्वभाव, लक्षण व प्रभाव एक दूसरे से भिन्न है और प्रत्येक ग्रह अपने अपने गुण धर्म के अनुसार माता के गर्भ में शिशुपिंड पर अपना प्रभाव दिखाते हैं जैसे:—

प्रथम मास में	...	शुक्र	...	पंचम मास में	... चंद्र
द्वितीय मास में	...	मंगल	...	षष्ठम मास में	... शनि
तृतीय मास में	...	गुरु	...	सप्तम मास में	... बुध
चतुर्थ मास में	...	सूर्य	...	अष्टम मास में	... लग्नेश

और नवम मास में चंद्र का प्रभाव पड़ने के पश्चात् पृथ्वी पर बालक का जन्म होता है। जिसके कारण प्राणिमात्र में भिन्न भिन्न रूप, रङ्ग, गुण, धर्म, स्वभाव व लक्षण दिखाई देते हैं। सारांश जिन ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति का प्रभाव माता के गर्भ में शिशुपिंड पर पड़कर वह वृद्धिंगत हो बालक का जन्म होता है उन्हीं ग्रहों का परिणाम जन्म होने के पश्चात् बालक या मनुष्य पर नहीं पड़ता ऐसा कहने का साहस करना कितना सयुक्तिक है इसका विचार सूज्ञ पाठकगण स्वयं कर सकते हैं।

फलित शास्त्र की श्रेष्ठता

इस शास्त्र की श्रेष्ठता, उपयुक्तता तथा विशेषता के संबन्ध से कल्याण

वर्मा जैसे महान् विद्वान ज्योतिषज्ञ ने अपने सारावली ग्रन्थ में कहा है कि:—

अर्थार्जने सहायः पुरुषाणामापदर्णवे पोतः ।

यात्रा समये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः ॥

अर्थात्—मनुष्य को द्रव्य संपादन करने में सहायता, आपत्तिरूपी समुद्र पार करने की नौका और प्रवास (यात्रा) समय योग्य सलाह देने वाला मन्त्री जातक शास्त्र के सिवाय इस जगत में अन्य कोई शास्त्र नहीं है ।

फलित शास्त्र संकट काल का सच्चा मित्र और नेक सलाह देने वाला मन्त्री होने के कारण हमें यहाँ इसके संबंध से अधिक न लिखते इस शास्त्र पर कई आधुनिक पण्डितों का जो आक्षेप है उसका प्रथम विचार करना आवश्यक है । उनका मुख्य आक्षेप यह है कि यदि फलित शास्त्र सत्य मान लिया जाय तो उसका यह अर्थ होता है कि मनुष्य प्राणी का जन्म होने के पूर्व ही ईश्वर ने उसके आयुष्य का कार्य-क्रम निश्चित कर रक्खा है अर्थात् वह पूर्ण परतन्त्र प्राणी है और यदि मनुष्य परतन्त्र है तो उसे प्रयत्न करने से क्या लाभ होगा ? परन्तु व्यवहार में नित्य यह दिखता है कि मनुष्य अपने उद्योगबल से अपना सब कार्य साध्य कर लेता है । इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य स्वतन्त्र है और उसके पीछे ज्यौतिष शास्त्र का भूत यह मिथ्या है। क्षणभर के लिये यदि यह भी मान लिया जाय कि मनुष्य स्वतन्त्र है, तो क्या इसका यह अर्थ हो सकता है कि वह सर्वथैव स्वतन्त्र है ? हमारे मत से मनुष्य सर्वथैव स्वतन्त्र है ऐसा समझना या कहना केवल भ्रम में डूबकर ईश्वर के सामर्थ्य के प्रति अपनी अज्ञानता प्रगट करना है। क्योंकि मनुष्य यदि पूर्ण स्वतन्त्र होता तो अनेक विद्वान व वीरों को—

"हानि लाभ और जनम मरण ये सब विधि के हाथ"
"मनसा चिंतितं कार्यं दैवमन्यत्र चिंतयेत्"
"Man peropoes God disposes"
"Man is a slave of Circumestances"

आदि कहने का दुर्धर प्रसंग क्योंकर आता ? वास्तविक में मनुष्य यह कर्म और भोग योनि होने के कारण वह कर्म करने के लिये कुछ अंश से स्वतन्त्र है इसमें सन्देह नहीं। किन्तु भोग योनि होने के कारण वह कर्म का फल भोगने के लिये सर्वस्व परतन्त्र है यह भी निर्विवाद है। मनुष्य को शुभाशुभ कर्मों के फल का ज्ञान ईश्वर ने दिया है अतः वह श्रेष्ठ व स्वतंत्र कहलाता है और यही उसकी श्रेष्ठता व स्वतन्त्रता का मुख्य कारण है तथापि अनेक प्रसङ्गों का विचार करने से यह सिद्ध नहीं होता कि मनुष्य सर्वथैव स्वतन्त्र है जैसे:—

(१) किसी कुटुंब का कर्त्ता पुरुष अपनी सांसारिक जवाबदारियाँ पूर्ण करने के पूर्व ही अपने आश्रितों को शोक सागर में डालकर वह अपनी इहलोक की यात्रा समाप्त कर बैठता है। क्या यह उसके स्वतन्त्र होने का लक्षण है ?

(२) संतति, संपत्ति तथा शरीर सुख प्राप्त करने में मनुष्य का भरसक प्रयत्न निष्फल हो जब वह अत्यन्त कष्ट से अपना आयुष्य क्रमण करता है तो क्या यह उसके स्वतन्त्र होने का द्योतक है ?

(३) स्वतन्त्र और परतन्त्र दो भिन्न देश के दो व्यक्तियों की आकाशस्थ ग्रह स्थिति एक समान रहते हुए देश, काल व परिस्थिति के कारण उन्हें जब भिन्न भिन्न फल मिलता है तो क्या यह उसके स्वतन्त्र कहलाने का चिन्ह है ?

ऊपर लिखे हुए उदाहरणों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि प्रत्येक

मनुष्य इस जगत में आकाशस्थ ग्रह स्थिति और सांसारिक परिस्थिति से परतन्त्र है। और जब उसके परतन्त्रता का हाल इस जगत् में अन्य किसी मार्ग से उसे मालूम होना अशक्य हो जाता है तब वह केवल फलित शास्त्र के आधार पर अपने दुःख सुख, यश अपयश का हाल मालूम करता है। इससे क्या यह सिद्ध नहीं होता कि ज्योतिष शास्त्र इस जगत के शास्त्रों में श्रेष्ठ व सत्य है और मनुष्य सर्वथैव स्वतन्त्र नहीं है। संसार में नित्य यह दिखाई देता है कि प्रत्येक मनुष्य इस जगत में स्वास्थ्य, मन, जन, धन, स्त्री व परिस्थिति के बन्धनों से ग्रसित है। यह देखते हुए मनुष्य स्वतन्त्र है ऐसा कहना केवल मिथ्या प्रलाप करना है। परन्तु जो मनुष्य लोभ, मोह, मद, मत्सर के परे हो, पूर्व जन्म कर्म के फलों को सहर्ष भोगता हो, विषयादि इंद्रिय जिसके वश हों, जिसे जन्म मरण का रहस्य मालूम हो, जिसने सांसारिक परिस्थितियों पर विजय प्राप्त किया हो और जिसका ईश्वर पर पूर्ण भरोसा हो वही मनुष्य यथार्थ में स्वतन्त्र कहला सकता है अन्यथा बाकी के लोग केवल वाचा से स्वतन्त्र परन्तु कृति से परतन्त्र हैं ऐसा कहना पड़ेगा। इस जगत में मनुष्य जब अपने स्वतः का जन्म मरण, सुख दुःख यशापयश, हानिलाभ आदि जानने के लिये असमर्थ है तो उसे किस तरह स्वतन्त्र कह सकते हैं?

ईश्वरी योजना व मानवी जन्म से ज्योतिषशास्त्र का संबंध

मनुष्य को एक जन्म से दूसरा जन्म देते समय ईश्वर की एक अद्भुत योजना दिखाई देती है कि वह उसके पिछले जन्म का दरवाजा इतने शीघ्रगति से बंद करता है कि उसे उसके पिछले जन्म का कुछ भी स्मरण न रह सके। तथापि उसकी यह इच्छा दीखती है कि मनुष्य को उसके पिछले जन्म में किये हुए कर्मों के फल का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के आधार पर जन्म ग्रह स्थिति द्वारा हो सके। अर्थात्

पूर्वजन्म श्रेष्ठ कर्मों का फल वर्तमान उच्च ग्रह स्थिति द्वारा और अशुभ कर्मों का फल नीच ग्रह स्थिति द्वारा स्पष्ट व्यक्त होता है। अन्यथा एक व्यक्ति को अत्यंत सुख व दूसरे को दुःख यह दृष्य ही जगत में न दिखाई देता। इस जगत में ऐसे कई उदाहरण हैं कि संपन्न सांसारिक परिस्थिति में जन्म लेनेवाले मनुष्य विपन्न आकाशस्थ ग्रह स्थिति के कारण दुःख और विपन्न सांसारिक परिस्थिति में जन्म पानेवाले मनुष्य संपन्न आकाशस्थ ग्रहस्थिति के कारण सुख भोगते हुए दिखाई देते हैं। क्या इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि सांसारिक परिस्थिति के अपेक्षा आकाशस्थ ग्रहस्थिति अत्यंत शक्तिशाली है और यह ईश्वरी योजना अत्यंत विश्वसनीय व सत्य है? मनुष्य का जन्म राजकुल अथवा दरिद्र नारायण कुल में क्यों न हुआ हो किंतु आकाशस्थ जन्म ग्रहस्थिति के अनुसार उसे सुख या दुःख मिलना निर्विवाद है। इसके अतिरिक्त इन आकाशस्थ ग्रह स्थिति से प्रत्येक समंजस मनुष्य ने यह बोध लेना चाहिये कि:—
(१) यदि जन्म समय आकाशस्थ ग्रह स्थिति विपन्न हो और सांसारिक परिस्थिति संपन्न हो तो उसे यह समझना चाहिये कि उसका पूर्व शुभ कर्म फल समाप्त होने पर आया है इसलिये उसे वर्तमान जन्म में अधिक शुभ कर्म व पुण्य करना चाहिये ताकि उसे अगले जन्म में इससे भी उच्च ग्रह स्थिति प्राप्त हो और (२) यदि जन्म समय आकाशस्थ ग्रहस्थिति संपन्न हो और सांसारिक परिस्थिति विपन्न हो तो उसे ध्यान में रखना चाहिये कि पूर्व जन्म पाप कर्मों के कारण भोग भोगने के लिए यह सांसारिक विपन्न परिस्थिति उसे प्राप्त हुई और इस जन्म में पुण्य कर्म द्वारा पूर्व शुभ संचित की वृद्धि की जाय तो अगले जन्म में आकाशस्थ ग्रहस्थिति और सांसारिक परिस्थिति दोनों भी श्रेष्ठ व समान प्राप्त होगी इसमें संदेह नहीं।

अर्थात् पूर्व जन्म संचित कर्मानुसार मनुष्य को इस जन्म में योग्य फल मिलना इसे ही ईश्वरी संकेत या उस सृष्टि कर्ता की एक विचित्र लीला व योजना कहते हैं। इस ईश्वरी योजना का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र द्वारा प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य को चाहिये कि वह अपने सत्कर्मों से पूर्व संचित को नीचे से उँचा और उँचे को अधिक उँचाकर सुख प्राप्त करने का प्रयत्न करे। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि ज्योतिषशास्त्र का जन्म, मानवी प्राणी के उत्थान के लिये हुआ है परंतु इन विचारों को कार्य रूप में लाना अथवा न लाना यह प्रत्येक मनुष्य के स्वाधीन है क्योंकि वह कुछ अंश से स्वतंत्र प्राणी कहलाता है। इस शास्त्र के द्वारा यदि मनुष्य को अपने पूर्व जन्म तथा वर्तमान जन्म के शुभाशुभ कर्मों का ज्ञान हो जाय और अशुभ फलों की तीव्रता घटाने या हटाने के लिये वह अपने कार्य में संलग्न हो जाय तो उसे इस शास्त्र के ज्ञान से सच्चा लाभ हुआ और इस शास्त्र का कार्य भी पूरा हो गया ऐसा समझना चाहिये। सारांश मनुष्य को यह ध्यान में रखना चाहिये कि इस शास्त्र का उपयोग आकस्मिक धन लाभ मालूम करने के लिये नही किंतु प्रतिकूल समय दुःख का प्रतिकार करने के लिये है। संसार में सुख के अपेक्षा दुःख अधिक होने के कारण प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वह इस शास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर प्रथम दुःखों का प्रतिकार करने का प्रयत्न करे। सारांश--जातक (फलित) शास्त्र का मुख्य उद्देश मनुष्य को सुविचारी और उद्योगी बनाने का है न कि अविचारी और आलसी जैसा कि आधुनिक विद्वानों का आक्षेप और भ्रम है।

ज्योतिष शास्त्र से श्रेष्ठ लाभ

ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान से एक अत्यंत श्रेष्ठ लाभ यह है कि प्रत्येक मनुष्य को पूर्वजन्म शुभाशुभ कर्मों का ज्ञान, शुभ कर्म करने की आवश्य-

कला, कर्म और भोग की मर्यादा, प्रारब्ध और प्रयत्न का परस्पर संबंध, ईश्वरी व मानवी शक्ति में अंतर, मानवी जीवन का उद्देश, अनुकूल और प्रतिकूल समय का पूर्ण ज्ञान होता है। और यह प्राप्त होने पर ज्ञान से मनको संतोष, संतोष से चिंता का नाश, चिंतानाश से धैर्य, धैर्य से शक्ति, शक्ति से ईश्वर के प्रति विश्वास व ध्यान क्रमशः होते हुए वह सांसारिक आपत्तियों का सहर्ष प्रतिकार कर अपनी जीवन यात्रा रूपी नौका को आगे बढाते हुए इस भवसागरको सुख से पार कर सकता है। इस शास्त्र से यह अप्रतीम लाभ होते हुए कई लोगों का यह कहना है कि यदि ईश्वर निर्मित घटनाओं का होना निश्चित है तो उसे जानने से क्या लाभ ? परंतु यथार्थ में मनुष्य को यदि भविष्य में होनेवाले शुभाशुभ घटनाओं का ज्ञान पूर्व ही से हो जाय तो क्या उसे अपने आयुष्य का कार्यक्रम समयानुसार निश्चित करने में सहायता नहीं मिलती ? उसका प्रतिकार करने के लिये वह पहिले से सावधान नहीं रह सकता ? और इस बुद्धि से प्रयत्न करने पर यदि उसे अपयश भी मिला तो भी उसे निःसंशय संतोष होगा यह स्पष्ट है। परंतु खेद से कहना पडता है कि कई सुशिक्षित कहलाने वाले लोगों के मन में इस शास्त्र के प्रति एक निर्मूल भ्रम वास कर रहा है कि यह शास्त्र प्रारब्ध वादियों के लिये निर्माण हुआ है न कि प्रयत्नवादियों के लिये। और प्रारब्धवाद से लोग अकर्मण्य व आलसी बनते हैं अतः प्रयत्नाभिमानी लोगों को इस शास्त्र से कोई लाभ नहीं हो सकता। उनका यह आक्षेप कहांतक सत्य है इसका विचार करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि हम पहिले लिख चुके हैं। तथापि इस शास्त्र पर अविश्वास करने वाले नास्तिक मत के प्रयत्नवादी लोग भी अपयश व आपत्ती के फेरों में पडकर अपना भावी आयुष्यक्रम इसी शास्त्र पर विश्वास कर निश्चित किया करते हैं

कारण स्पष्ट ही है कि प्रयत्न में यश मिलने पर मनुष्य अपने को प्रयत्न-वादी और अपयश मिलने पर प्रारब्धवादी कहलाने की चेष्टा किया करता है। यथार्थ में वह न तो प्रयत्नवादी है न प्रारब्धवादी किंतु परिस्थिति का गुलाम और अंतः करण से ईश्वरवादी है यही ध्रुव सत्य है इसमें संदेह नहीं। इस शास्त्रके आधार पर मानवी आयुष्य में होनेवाली घटनाओं का निश्चित ज्ञान मनुष्य को हो सकता है इसमें संदेह नहीं। इतने पर भी यदि कोई मनुष्य इसके प्रति अपना अज्ञान तथा अविश्वास व्यक्त करता हो तो हमें दुःख से कहना होगा कि वह अपने आकुंचित बुद्धि की जगत को साक्ष दे रहा है ।

प्रारब्ध व प्रयत्न वाद

दैव–भाग्य–प्रारब्ध व प्रयत्न–नसीब व उद्योग–तकदीर व तदबीर, इस द्वंद्व विषय पर आजतक अनेक विद्वानों ने विचार विनिमय किया परंतु इन दोनों में कौन अधिक श्रेष्ठ व बलिष्ठ है इसका निर्णय अभीतक न हो सका। उनकी इस कठिनाई से यह सिद्ध होता है कि महान विद्वानों के लिये भी इस वाद का आदि और अंत जानना दुर्मिल है। परंतु विषय अत्यंत महत्वपूर्ण और मनोरंजक है अतः इसपर विचार करना हम आवश्यक समझते हैं ताकि पाठकों को विषय का पूर्ण ज्ञान हो उन्हें निर्णय करने में कोई कठिनाई न मालूम हो। प्रारब्ध और प्रयत्न की उत्पत्ति तथा उनका परस्पर संबंध जानने के लिये प्रथम जीवन–मरण और कर्म भोग का रहस्य जानना आवश्यक है इसलिये यदि यहां थोडा विषयांतर हो तो आशा है कि पाठक गण हमें क्षमा करेंगे, क्योंकि इसके सिवाय इस अखंड वाद का महत्व ध्यान में आना अशक्य है। प्रथम यह विचार करना चाहिये कि मानवी देह उत्पत्ति का मुख्य कारण क्या है और मनुष्य सुख दुःखादि के फेरों में सदैव क्यों ग्रसित रहता है ?

देह उत्पत्ति का कारण

हमारे मत से प्रत्येक हिन्दु धर्माभिमानी मनुष्य को जो पूर्व जन्म में विश्वास रखता हो यह मानना होगा कि हिंदु धर्म शास्त्रानुसार वर्तमान देह पूर्व जन्म कर्मानुरूप इस संसार में भोग भोगने व कर्म करने के लिये प्राप्त होता है अर्थात् देह उत्पत्ति का मुख्य उद्देश्य पूर्व जन्म में किये हुए शुभाशुभ कर्मों के फल भोगना और देहावसान होने तक कर्म करते रहना है। कर्म के कई भेद हैं परन्तु उनमें मुख्य तीन हैं जैसे—संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण इनकी परिभाषा नीचे लिखे अनुसार है जैसे:—

१—अनेक जन्म में किये हुए पाप पुण्यों के संचय को संचित कहते हैं।

२—संचित में से वर्तमान देह को भोगने के लिये जो अंश (हिस्सा) मिलता है उसे प्रारब्ध कहते हैं (इसका संबंध केवल इसी देह से है।)

३—वर्तमान जन्म में किये हुए कर्मों को क्रियमाण तथा आगामी कर्म कहते हैं परन्तु "मैं कर्ता हूँ" इस अहंभाव से किया हुआ कर्म इस देह के पश्चात् संचित में शामिल होता है और वह (प्रत्येक जन्म में भोग का अंत होने पर भी) संचित को घटाने के अपेक्षा अधिक बढ़ाता जाता है। जिसके कारण मनुष्य जन्म मरण के फेरों से कभी भी मुक्त नहीं हो सकता।

ऊपर लिखे हुए कर्मों के मुख्य तीन भेद हो मनुष्य देह उत्पत्ति और सुख दुःख के कारण हैं और इन तीनों का परस्पर संबंध इतना घनिष्ट है कि एक को दूसरे से विच्छेद करने के लिये ब्रह्मज्ञान की अत्यंत आवश्यकता है। जिन्हें यह ज्ञान साध्य व अवगत हो ऐसे पुण्य पुरुष

सचमुच में धन्य हैं क्योंकि वे देह भोग को ज्ञान से सहर्ष भोगते हुए अहंकार रहित कर्म कर प्रत्येक जन्म में संचित को घटाते जाते है। और अंत में वे भोग का नाश कर संचित को घटाते हुए उसे शून्य करने के पश्चात् जन्म मरण के व्याधि से मुक्त हो जाते हैं अथवा मोक्ष पद प्राप्त करते हैं। परन्तु यदि ऐसा न हो सके तो मनुष्य को स्वभावतः उपर लिखे हुए तीनों कर्मों के फेरों में पड़ना होगा और 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं' का चक्र उसके पीछे सदैव लगा रहेगा। श्री समर्थ रामदास स्वामी ने इस संबंध में कहा है कि "मनां त्वांचिरे पूर्व संचित केले। तया सारिखे भोगणे प्राप्त झाले" अर्थात् हे मन ! पूर्व जन्म में तूने जो संचित किया उसी के अनुसार यह भोग प्राप्त हुआ है। इसी तरह श्री संत ज्ञान देव महाराज ने कहा है कि "जैसा परी आहे तैसा परी राहे। कौतुक पाहे संचिता चे" अर्थात् तू जिस स्थिति में है उसी स्थिति में रह और संचित की लीला देखते जा। इससे यह सिद्ध होता है कि पूर्व जन्म के संचित कर्मों का छाप मनुष्य में प्रारब्ध रूप से अधिष्ठित होकर यह त्रिगुणात्मक देह पृथ्वी पर जन्म पाता है अर्थात् पूर्व जन्म कर्मानुसार प्रारब्ध, प्रारब्धानुसार-गुण, गुणानुरूप-प्रकृति, प्रकृतिनुरूप-प्रवृत्ति, प्रवृत्तिनुरूप-निश्चय और निश्चयानुसार-कर्म करने के लिये वह इस जन्म में बाध्य होता है। प्रारब्ध व प्रयत्न का इस तरह का रूपांतर और संबंध होते हुए इनमें से कौन श्रेष्ठ है, कौन स्वतंत्र है और कौन शक्तिमान है यह निश्चय करना अत्यंत कठिन है तथापि पूर्व जन्म कर्मानुसार, प्रारब्ध और प्रारब्धानुसार वर्तमान जन्म के कर्म से मनुष्य बाध्य है इसमें संदेह नहीं। सारांश वही अदृश्य शक्ति जिसे हम पूर्व जन्म कर्मों का परिपाक या प्रारब्ध कहते हैं पहिले परिस्थिति निर्माण कर व जीव को भोग भोगनें व कर्म करने के लिये बाध्य कर देह धारण करने लगाती है

और मनुष्य का जन्म ठीक उसी शुभाशुभ घटी पल नक्षत्र तिथि दिन राशि मास आदि पर होता है जिस पर उसका जन्म मरण, रूप रंग गुण स्वभाव सुख दुःख, हानि लाभ और यशापयश आदि निर्भर है और वह उसे अपने आयुष्य में भोगता है।

प्रारब्ध और प्रयत्न यह वाद यथार्थ में अत्यंत क्लिष्ट है और किसी भी विद्वान के लिये इस पर निर्णय देना कठिन है परन्तु यह वाद एक उत्कृष्ट मानसिक भोजन होने के कारण प्रथम यह विचार करना आवश्यक है कि जनता का मतभेद कहाँ व क्यों है। प्रयत्नवादी लोग प्रयत्न के सिवाय किसी भी अदृश्य शक्ति पर विश्वास नहीं करते परन्तु प्रारब्धवादी लोग प्रयत्न में विश्वास करते हुए यह जानते हैं कि प्रारब्ध के संयोग के बिना प्रयत्न में यश मिलना दुर्मिल है। प्रयत्नवादी लोग अपने प्रयत्न में किसी तरह का कसर न रखते हुए भरसक प्रयत्न करने पर जब वे असफल होते हैं तब यह कहने लगते हैं कि "प्रयत्न में कुछ कसर अवश्य रह गई" परतु यदि पूछा जाय कि—यह क्यों रही इस पर वे कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दे सकते। यथार्थ में जिस अदृष्य शक्ति ने इस जगत को व्याप कर रक्खा है और जो प्रत्येक क्षण सुख दुःख की अनंत लहरें उत्पन्न करती है वही शक्ति, दैव, भाग्य, प्रारब्ध या तकदीर उनकी बुद्धि और प्रयत्न में आड़ आकर उनके प्रयत्नों को निष्फल करती है और उन्हें उस अदृश्य शक्ति पर विश्वास कराने लगती है इस संबंध से कहा गया है कि:—

"कर्मणा बाध्यते बुद्धिर्नबुध्या कर्म बाध्यते।
सुबुद्धिरपि यद्रामो हेमं हरिणमन्वगात्॥

अर्थात्—कर्म के योग से बुद्धि बाधित होती है। बुद्धि से कर्म बाधित नहीं होता क्योंकि महान बुद्धिमान प्रभु रामचंद्रजी भी कर्म

के वश हो सोने का हरिण समझ करके उसके पीछे लगे। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि अदृश्य शक्ति या दैव का प्रभाव मनुष्य पर अवश्य पड़ता है। परंतु लोगों का कटाक्ष यदि दैव शब्द पर ही हो तो हमारा कुछ कहना नहीं। संसार के अनेक छोटे बड़े कार्यों में बुद्धि प्राधान्य है और यह सबको मान्य है परंतु मनुष्य में सुबुद्धि या दुर्बुद्धि होना यह उसके पूर्वजन्म पाप पुण्य कर्मों के आधीन है। हमारी समझ से "बुद्धिः कर्मानुसारिणी" यह शब्दशः सत्य है और इसीलिये दुर्बुद्धि या दुर्विचार का अंतःकरण में प्रवेश होते ही उससे झगड़ना और प्रयत्न बल उसपर विजय प्राप्त करना यही सच्चे पुरुष का अर्थ तथा पुरुषार्थ है। अर्थात् सत्कृत्याचरण व दैविक आराधना का सदा सर्वदा मनन और अनुकरण करना याने पूर्व जन्म प्रारब्ध योग से उत्पन्न हुए दुर्बुद्धि से झगड़ना और उसके अनिष्ट परिणामों को क्षय करना है। इतने पर भी जगत में सदाचरणी मनुष्य को आपत्ति और दुराचारिणी को संपत्ति मिलना यह उसके पूर्व पाप पुण्यात्मक सञ्चित का परिपाक है अतः पाप का क्षय और पुण्य की वृद्धि करने के लिये प्रत्येक मनुष्य ने इस जन्म में पुण्य कर्म करना यह उसका आद्य कर्त्तव्य है चाहे उसका फल उसे इस जन्म में मिले अथवा न मिले इससे कोई प्रयोजन नहीं।

प्रारब्ध और प्रयत्न का परस्पर संबंध

यथार्थ में प्रारब्ध और प्रयत्न का परस्पर संबंध इतना घनिष्ट है कि एक के सिवाय दूसरे का अस्तित्व इस जगत में होना केवल असंभव है और इसीलिये ये दोनों मानवी जीवन रथ के दो चक्र कहलाते हैं। इसमें से एक चक्र यदि बिगड़ जाय तो मनुष्य का जीवन रथ डगमगाने लगता है। संसार में जो लोग केवल प्रारब्ध या केवल प्रयत्न पर

सर्वस्व भरोसा करते हैं उन्हें आयुष्य में निराश हो अनेक संकट भोगने का प्रसंग आता है। परंतु जो लोग प्रतिकूल समय का सहर्ष प्रतिकार करते हैं और अनुकूल समय पाते ही अपना इष्ट कार्य साध्य कर लेते हैं वेही पुरुष यथार्थ में चतुर, बुद्धिमान और श्रेष्ठ कहलाते हैं। इस अनुकूल व प्रतिकूल समय का ज्ञान मनुष्य को इसी शास्त्र के आधार पर हो सकता है इसी कारण जगत में ज्योतिष शास्त्र का अत्यंत महत्व है और उसे श्रेष्ठ स्थान प्राप्त हुआ है।

सृष्टिक्रम, व्यवहार व परिस्थिति का चक्र मनुष्य के पीछे इतने शीघ्र गति से नित्य घूमता है कि वह उसे एक क्षण भी विश्राम करने नहीं देता और अनेक प्रसंग पर वह मनुष्य को ही अपने पीछे घूमाने लगाता है। प्रयत्न के बिना पराक्रम का आविर्भाव, प्रयत्न के बिना कार्य का साध्य होना, प्रयत्न के सिवाय विद्या व उद्योग में यश मिलना, प्रयत्न के सिवाय उदर निर्वाह की सामग्री जुटाना, इतना ही नहीं किंतु प्रयत्न के सिवाय मनुष्य को एक क्षण जीवित रहना भी असंभव है। परंतु प्रयत्न ! मानवी प्रयत्न ! यह संकुचित है।

मानवी प्रयत्न का फल उस अदृश्य शक्ति प्रारब्ध पर निर्भर है। मानवी प्रयत्न की दौड़ जोरदार होते हुए भी वह दैव शक्ति की बराबरी नहीं कर सकती। एकांगी प्रयत्न के चक्र को अपघात का डर है। प्रयत्न रूपी नौका प्रारब्ध रूपी नाविक के स्वाधीन होने के कारण मल्लाह उसे जिधर ले जाय जाना भाग है। एकांगी प्रयत्न को यश मिलाने की शक्ति नहीं यदि मानवी प्रयत्न में कार्य सिद्धि के मंदिर में अचूक ले जाने की शक्ति होती तो सारे जगत को हिलाने वाला नेपोलियन बोनापार्ट जैसे महान पराक्रमी योद्धा को वाटर्लू की लड़ाई में पराभूत होकर कारागृह वास भोगने का प्रसंग क्यों आता ? मानवी प्रयत्न में यदि शक्ति होती तो

औरंगजेब जैसे कट्टर धर्माभिमानी मोगल बादशाह को गौ ब्राह्मण प्रति-पालक श्री छत्रपती शिवाजी महाराज के जमाने में अपनी राजसत्ता व अधिकार महाराष्ट्र में स्थापित करने में घोर अपयश क्यों मिलता ? प्रयत्न में यदि पूर्ण शक्ति होती तो प्रत्येक मनुष्य को अपनी आकांक्षाएँ पूरी करने में कठिनाई क्यों आती ? मानवी प्रयत्न यदि यथार्थ में स्वतंत्र होता तो उसके पीछे अपयश की उपाधि क्यों कर लगी रहती ? प्रयत्न के बल जो चाहे सो कर सकते हैं यदि यह सच होता तो भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह उपदेश क्यों किया होता कि:—

यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे ।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यसि ॥
(गी. अ. १८ श्लो' ५९)

अर्थात—हे अर्जुन ! यदि अहंकार (प्रयत्न) का आश्रय लेकर तूने मन में यह निश्चय किया हो कि मैं युद्ध न करूँगा तो वह वृथा है कारण प्रकृति तुझे युद्ध करने के लिये बाध्य करेगी ।

प्रयत्न के बल मनुष्य यदि इच्छित वस्तु को प्राप्त कर सकता तो समुद्र मंथन करने पर श्री विष्णु भगवान को लक्ष्मी और श्री शंकर जी को विष क्यों मिलता ? सारांश इन उदाहरणों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि प्रयत्न में जितनी तीव्रता दिखती है यथार्थ में उतनी नहीं है । लेकिन दैव भाग्य, प्रारब्ध, नसीब व तकदीर की शक्ति व गति इसके विपरीत है । क्योंकि दैव को कोई विरोधी शक्ति नहीं । दैव को मर्यादा नहीं । दैव को समय व स्थान नहीं । दैव को सीमा व कारण नहीं व इसीलिये दैव स्वतंत्र कहलाता है । दैव में आकस्मिक घटना करा देने की अमोघ शक्ति है व इसी कारण "दैवाधीनं जगत् सर्वम्" ऐसा महान ऋषि और संतों ने कहा है । दैवी शक्ति के अनेक उदाहरण हैं परंतु उनमें

से दो चार उदाहरणों का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है जैसे:—

१—स्वर्गवासी श्रीमंत श्री सयाजीराव गायकवाड महाराज बड़ोदा संस्थान ने ऐसा कौन सा प्रयत्न किया था कि बड़ोदा संस्थान के राज्य लक्ष्मी ने उनके गले में माला डाली और उन्हें यह श्रेष्ठ राज्य पद प्राप्त हुआ।

२—ब्रिटिश साम्राज्य के अधिपति कै० पंचम जार्ज राजा साहेब ने ऐसा कौन सा परिश्रम किया था कि बड़े भाई के रहते हुए अशक्य जैसे राज्य पद का वैभव उन्हें प्राप्त हुआ ?

३—उत्तर हिन्दुस्थान के एक देशी संस्थान के राजा कुछ वर्ष पूर्व पंढरपुर-अनाथ बालकाश्रम से एक लड़का दत्तक लेने के हेतु ले गये। वह क्या उस बालक का प्रयत्न था अथवा प्रारब्ध ?

४—पाँच वर्ष पूर्व ब्रिटिश साम्राज्याधिपति राजे साहेब आठवें एडवर्ड ने प्रेम पत्नी से विवाह में बाधा आने के कारण राज्य पद का त्याग किया और उनके बंधु राजे साहेब छठवें जार्ज को यह अकल्पित राज्य पद प्राप्त हुआ। यह प्रारब्ध का साक्षात उदाहरण नहीं है ऐसा कौन कह सकता है ?

५—दैव के सिवाय जगत में ऐसी कौन सी शक्ति है कि आज कई "भिक्षां देही" कहने वाले प्राणी, दत्तक रूप से स्टेटों के वारस होकर लक्ष्मी का ऐश्वर्य, सुख व वैभव भोग रहे हैं !

प्रारब्ध और प्रयत्न में कौन श्रेष्ठ है इसका निर्णय केवल इन उदाहरणों से हो सकता है। और इस जगत में अशक्य, अकल्पित और आश्चर्यजनक ऐसी घटनाएँ केवल प्रारब्ध के बल ही हो सकती हैं। इसी लिये मानवी जीवन में दैव को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त हुआ है जिसका समर्थन नीचे लिखे हुए श्लोक से भी होता है जैसे:—

भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम् ।
समुद्रमथनाल्लेभे हरिर्लक्ष्मी हरो विषम् ॥

अर्थात्---दैव ही सदा फल देता है विद्या व पराक्रम कुछ नहीं दे सकते । क्योंकि प्रयत्न करने पर श्री शंकर को विष और श्री विष्णु को लक्ष्मी प्राप्त हुई यह सर्वश्रुत है ।

अघटित घटना, अतर्क्य परिस्थिति, आश्चर्य कारक बातें आदि दैव की विचित्र लीला है और इसीलिये प्रारब्ध के सामने किसी का कुछ नहीं चल सकता ऐसा अनादि काल से लोग मान रहे हैं । जिसे दैव अनुकूल है वही भाग्यवान कहलाता है परंतु दैवी पुरुष होने के लिये पूर्व जन्म पुण्याई की अधिक आवश्यकता है और यह पुण्याई बिना सत्कर्म और दैवी आराधना के प्राप्त होना असंभव है अर्थात् इस जन्म के सत्कर्म और पुण्य कर्म के सिवाय अगले जन्म में दैवी पुरुष बनना केवल असं-भव है । तात्पर्य प्रारब्ध में अद्वितीय व अमोघ शक्ति है । प्रारब्ध स्वतंत्र है और प्रयत्न की शक्ति मर्यादित होने के सबब वह परतंत्र है । प्रारब्ध के संबंध से अंग्रेजी में कहा है कि:—

"You may out turn all but fortune will out turn you"

अर्थात् तुम दुनियां को उलटा सकते हो परंतु दैव तुम्हें उलटा देगा । नेपोलियन जैसे महान पराक्रमी योद्धा व अप्रतीम विद्वान ज्योतिषज्ञ ने दुनियां के अनेक लडाईयों में विजय प्राप्त किया था किन्तु आखिरी लड़ाई में उसने यह भविष्य किया था कि यदि उसके सरदारों को पहुंचने में अधिक देर लगी तो उसे अपयश का भागीदार होना पडेगा और अंत में वैसा ही हुआ । इस उदाहरण से उपर लिखे हुए उक्ति का समर्थन होता है । तथापि प्रत्येक व्यक्ति का दैव कैसा है

इसका निर्णय उसके जन्म कुंडली से ही हो सकता है। इसलिये मानवी प्राणी को ज्ञान की अत्यंत आवश्यकता है यह स्पष्ट सिद्ध होता है।

प्रारब्ध व प्रयत्नवाद का निर्णय इस तरह होनेके कारण पाठकों के मन में यह प्रश्न उपस्थित होगा कि यदि प्रारब्ध स्वतंत्र है और प्रयत्न परतंत्र है तो प्रयत्न करने से क्या लाभ? मनुष्य को अजगर के समान पड़े रहना यही एक राजमार्ग दिखता है परंतु इसके साथही यह प्रश्न भी उपस्थित होता है कि क्या मनुष्य बिना प्रयत्न के एक क्षण भी रह सकता है? हमारे समझ से मानवी जीवन का मुख्य उद्देश यदि कर्म करना और भोग भोगना है तो पूर्व जन्म कर्मों के सूत्रों से बंधे हुए मनुष्य को देहावसान होते तक एक क्षण भी स्वस्थ रहना या अकर्मण्य होना असंभव है। इस संबंध से भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि:—

नहि कश्चित् क्षणमपि जातुतिष्ठत्य कर्मकृत्।
कार्यतेह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

(गी० अ० ३ श्लो ५)

अर्थात्—कोई मनुष्य एक क्षण भी बिना कार्य के नहीं रह सकता कारण प्रकृति के गुण उससे कार्य करा लेते हैं।

संसार में भूचर प्राणी का भूत्याग, जलचर प्राणी का जल त्याग अथवा पक्षी का गगन त्याग करना जिस तरह हास्यास्पद है उसी तरह मनुष्य को बिना क्रिया के एक क्षण रहना असंभव है। प्रारब्ध वाद पर श्रुति व स्मृति का विवेचन करने का मुख्य उद्देश यह है कि कर्म करते हुए मनुष्य को यदि अनिष्ट परिणाम भोगने का प्रसंग आ जावे तौभी उसे कर्तव्य कर्म से पराङ्मुख न होते हुए समाधान वृत्ति से अखंड प्रयत्न करते रहना और प्रारब्ध भोग का फल शांतिपूर्वक भोगना चाहिये।

यह शास्त्र दुर्दैव के वजन से दब जानेवाले मनुष्य की कर्तव्य बुद्धि

को जागृत कर यह बतलाता है कि प्रारब्ध और प्रयत्न का सुन्दर मिलाप होने का तथा कार्य में निश्चित रूप से यश मिलाने का समय कौनसा है अथवा परिश्रम व धन व्यय कर यश मिलाने का अनुकूल समय कब आने वाला है। यह मालूम होने पर समाधान वृत्ति से अहंभाव रहित प्रयत्न करते रहने की क्षमता इस शास्त्र से उत्पन्न होती है। क्षणभर यदि यह भी मान लिया जाय कि पौरुष से प्रारब्ध की मर्यादा उलंघन करना अनिवार्य है तथापि प्रयत्न के बिना मनुष्य को प्रारब्ध की मर्यादा तथा उसके संभव या असंभवत्व का ज्ञान होना भी दुष्प्राय है व इसलिये प्रयत्न करना अत्यन्त आवश्यक है। श्री वशिष्ठ मुनि ने श्रीप्रभु रामचन्द्रजी से कहा है कि प्रयत्न के बल कभी २ सोया हुआ प्रारब्ध भी अनुकूल समय पाकर जागृत होता है परंतु अशुभ प्रारब्ध की गति टालने के लिये या उसपर विजय प्राप्त करने के लिये प्रयत्न भी उसी प्रकार से जोरदार करना चाहिये तभी वह संभव होगा अन्यथा नहीं।

सारांश—प्रयत्न में यथा वांछित शक्ति नहीं, वह परतंत्र है या वह निष्फल होगा इसलिये प्रयत्न करना वृथा है ऐसा समझना सर्वथा मिथ्या है। प्रयत्न से लाभ हो अथवा न हो परंतु प्रयत्न के बिना प्रारब्ध की शक्ति मालूम होना असंभव है अतः प्रयत्न करते रहना यही मनुष्य के लिये राजमार्ग है और ज्योतिष शास्त्र का यही तत्व है। शास्त्रकारों ने इस विषय पर कहा है कि :—

यथा ह्येकेन चक्रेण रथस्य न गतिर्भवेत्।
तथा पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति॥ अर्थात—

जिस तरह दो चक्रों के सिवाय रथ नहीं चल सकता वैसे ही प्रयत्न के बिना दैव की सिद्धि नहीं हो सकती। इससे यह स्पष्ट होता है कि मानवी जीवन सुखमय बनाने के लिये नित्य प्रयत्न करते रहना अत्यंत

आवश्यक है क्योंकि प्रयत्न के बिना किसी भी कार्य का सिद्ध होना असंभव है।

उपर लिखे अनुसार ज्योतिष शास्त्र का यह उद्देश होते हुए इसके प्रति लोगों की निर्मूल धारणा हो चुकी है कि इस शास्त्र की नींव शुद्ध दैव पर अवलंबित है। उनके इस भ्रम का मुख्य कारण हमारी समझ से यह है कि वे सज्जन दैव शब्द से देव या देवता का बोध करते हैं। यथार्थ में दैव से देव या देवता का कोई संबंध नहीं और न तो देव से निर्मित किया हुआ दैव हो सकता है। दैव याने अनेक पूर्व जन्म संचय में से जो कर्म इस जन्म में भोगने के लिये फलोन्मुख होते हैं उसे ही दैव या प्रारब्ध कहते हैं अर्थात् दैव याने अनेक पूर्व जन्म में किये हुए अपने ही कर्मों का रूपांतर फल है व इसका संबंध केवल जीव से ही है न कि देव से या देवता से। इस जीव को देह द्वारा पूर्व जन्म कर्मानुसार प्रारब्ध रूप से सुख या दुःख का भोग तो लगा ही है किंतु बिना प्रयत्न के दुःख का निवारण होना असंभव है और इसलिये प्रयत्न करना आवश्यक है।

मनुष्य को चाहिये कि उसे प्रयत्न में अपयश मिलने पर भी वह बिना हताश हुए प्रयत्न करता रहे। इस संबंध से श्री कृष्ण भगवान ने अर्जुन से कहा है कि:—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूः मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥

(गी. अ. २ श्लो. ४७)

अर्थात्—हे अर्जुन! तुमको केवल कर्म करने का अधिकार है परन्तु उक्त कर्मों के फलों पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं। अतः कर्म के फल की इच्छा कदापि न करना और कर्म न करने का अट्टहास भी कभी न

करना। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि कर्म का फल मिलना मनुष्याधीन नहीं किंतु परमेश्वराधीन अथवा सृष्टि के कर्म विपाक पर नितान्त निर्भर है। मनुष्य के इच्छानुसार कर्म का फल मिलना अशक्य है परन्तु ऐसी इच्छा कर कर्म करने से तथा वांछित फल न मिलने से मनुष्य को अत्यन्त दुःख होता है अतएव उसे चाहिये कि यह फल की आशा का त्याग कर कर्तव्य कर्म के बुद्धि से कर्म करे। कारण यह है कि मनुष्य का मन यदि फल की आशा की ओर अधिक लिप्त हो जाय तो उसका कर्म मलीन होकर वह अशक्त हो जाता है और अपयश मिलने पर उसे खेद होता है परन्तु पूर्व ही से यदि वह फल की आशा का त्याग कर ले तो उसका कर्म शुद्ध व सशक्त होने के कारण इच्छित कार्य अधिकांश प्रमाण से साध्य होता है। भगवान श्री कृष्ण ने अपने उपदेश में यही विधान किया है।

वास्तविक में प्रारब्ध और प्रयत्न वाद का सच्चा रहस्य यह है कि मनुष्य का मन जिस विरोध भाव से—अर्थात मुझे प्रयत्न करने पर भी कुछ नहीं मिला और उसे बिना प्रयत्न किये मिला दूषित होता है उसे मन से निकाल कर यह समझना चाहिये कि इस संसार में प्रत्येक मनुष्य को सुख दुःख तथा यशापयशादि उसके पूर्व जन्म संचित स्वकर्मानुसार ही मिला करता है और वह स्वयं उसका कर्ता है। इस संबंध से शास्त्रकारों ने कहा है कि:—

सुखस्य दुःखस्य न कोपि दाता। परो ददाति कुबुद्धिरेषा ॥
अहं करोति वृथाभिमानः। स्वकर्म सूत्रे ग्रथितोहि लोकः ॥

अर्थात् सुख या दुःख का देनेवाला कोई भी नहीं। दूसरा देता है ऐसा समझना ही कुबुद्धि है। और मैं कर्ता हूँ यह अभिमान करना भी वृथा है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपने अपने कर्म रज्जू से बाध्य हैं।

शास्त्रकारों के इन बातों पर ध्यान देने से मन से विभ्रम भाव, चिंता तथा दुःख का नाश होता है और यश या अपयश की पर्वा न करते हुए मनुष्य अपने प्रयत्न में सदा निमग्न रह सकता है यह इन उपदेशों का मुख्य मर्म है। इस शास्त्र का रहस्य, तत्व, उद्देश व मर्म इतना श्रेष्ठ होते हुए यदि सामान्य लोगों की दिशाभूल बनी रहे कि यह शास्त्र प्रारब्धवादी लोगों के लिये निर्माण हुआ है न कि प्रयत्न वादियों के लिये तो हमें अत्यंत खेद से कहना होगा कि न समझने वाले का केवल दुर्दैव है। जिस शास्त्र के संबन्ध से पाश्चात्य धुरंधर विद्वान ज्योतिषज्ञ तथा संशोधक, तत्ववेत्ता आदि जैसे टालमी, क्लेपर, नेपोलियन शेक्सपियर, मिल्टन, कालरिज, लार्डबेकन आदि ग्रंथकारों ने अपने अपने ग्रंथों में अत्यन्त प्रशंसा की उसी शास्त्र के सम्बन्ध से इस देश के आंग्ल विद्या विभूषित पंडितों ने अपना अविश्वास व्यक्त करना याने जगत को अपने घोर अज्ञानता का परिचय देना है।

प्रारब्ध और प्रयत्न ये दोनों सहयोगी या प्रतिस्पर्धी परस्पर अनुकूल या प्रतिकूल समय के योग से इतने समान दिखाई देते हैं कि मनुष्य को इनके रूप का सच्चा ज्ञान होना अशक्य हो जाता है। इन दोनों की उत्पत्ति एक ही वृक्ष से हुई है। अतः दिखने में यद्यपि ये भिन्न दिखते हों तथापि यथार्थ में ये एकही हैं परन्तु इनके प्रति हमने अपने विचार स्वतंत्र रीति से पाठकों के समक्ष रखने का प्रयत्न किया है। आशा है कि सूज्ञ पाठक गण दोनों पक्षों का विचार कर स्वयं निर्णय कर लें। परंतु हमारा व्यक्तिगत मत यह है कि "बुद्धिः कर्मानुसारिणी" के अनुसार पूर्व शुभाशुभ कर्मों के क्रम यदि अधिक बलबान हों तो अदृश्य शक्ति प्रारब्ध या दैव के योग से मानवी अंतःकरण शुभाशुभ स्फूर्ति से प्रेरित होकर

मनुष्य का प्रयत्न सफल या निष्फल हो वह यश या अपयश का मालक बन बैठता है। प्रारब्ध का भोग भोगने के सिवाय मनुष्य को कोई उपाय नहीं व इसी लिये 'भवितव्यता बलीयसी'' ऐसा कहा है। मनुष्य श्रीमान हो अथवा दरिद्री परन्तु परिस्थिति के परिवर्तनानुसार उस पर सुख दुख का प्रभाव पड़ना निश्चित है। पूर्व जन्म शुभाशुभ कर्मों के फल यदि भोग के बिना मिटना अनिवार्य है तो मनुष्य को चाहिये कि जिस तरह वह वर्षा ऋतु आरम्भ होने के पूर्व ग्रीष्म ऋतु में खाद्य पदार्थों की सामग्री करता है अथवा सूर्यास्त होने के पूर्व रात्रि समय दीपक के प्रकाश में अपना कार्य करने का प्रबंध करता है उसी तरह वर्तमान सुख समाप्त होने के पूर्व ही भविष्य के दुःखों का प्रतिकार करने का प्रबंध उसे कर लेना चाहिये। क्योंकि विपरीत स्थिति प्राप्त होने पर उसे अनिष्ट फलों को भोगना और इसके साथ ही उनके निवारणार्थ अन्य उपायों की योजना करना इन दोनों कष्टों को एक ही साथ सामना करने का उस पर दुर्धर प्रसंग न आवे। अन्यथा सम्भव है कि इन दोनों के बोझ से उसकी शक्ति और बुद्धि नष्ट होकर अनेक संकटों के कारण उसे इस भवसागर को सुख से पार करना असंभव हो जायगा। किसी भी दृष्टि से विचार करने पर यह सिद्ध होता है कि ज्योतिष शास्त्र मनुष्य को आगामी आपत्ति आने के पूर्व ही जागृत करता है और उसे सशस्त्र कर सामर्थ्यवान बनाता है व इसीलिये हजारों वर्ष पूर्व से अज्ञ लोगों का विरोध होते हुए इस दुनिया के प्रत्येक देशों में इसने अपना श्रेष्ठत्व आज कायम रक्खा है। परन्तु इस अनमोल शास्त्र से लाभ उठाना अथवा न उठाना यह प्रत्येक मनुष्य के सुबुद्धि या दुर्बुद्धि पर अवलंबित है तथापि सूज्ञ पाठकों को इससे यथा लाभ हो यह हमारी हार्दिक इच्छा है।

शरीर व्याधि और कर्म व्याधि

यहांपर यह लिखना अनुचित न होगा कि शरीर व्याधि के चिकित्सा के लिये जिस तरह प्रवीण वैद्य की आवश्यकता है उसी तरह कर्म व्याधि की परिक्षा के लिये प्रवीण ज्योतिषी की आवश्यकता है। परंतु संसार में वैद्यक शास्त्र, प्रवीण वैद्य तथा ईश्वर निर्मित अनेक अचूक वनस्पतियों के रहते हुए कई लोग मृत्यु के मुख में प्रतिदिन गिर रहे हैं। इसपर से क्या यह कह सकते हैं कि शास्त्र, वैद्य तथा वनस्पति सच नहीं है? इसी तरह संसार के प्रत्येक देशों में ज्योतिषशास्त्र, ज्योतिषज्ञ तथा ईश्वर निर्मित रत्नादि अनेक साधन हैं और इनके रहते हुए कई लोग दुःख सागर में डूबकर अनेक प्रकार के दुःख भोग रहे हैं। क्या इससे यह कह सकते हैं कि ज्योतिषशास्त्र, ज्योतिषज्ञ तथा रत्नादि का प्रभाव सत्य नहीं है! अर्थात् सत्य है यह स्पष्ट है। परंतु मनुष्य की बुद्धि मर्यादित है और यदि वह सत्यशील न हुई तो संभव है कि उसका भविष्य-कथन गलत हो जाय तथापि इससे यह तात्पर्य नहीं निकलता कि जगत में धुरंधर विद्वान व सत्यशील ज्योतिषी नहीं हैं? परंतु समय पर उनका मिलना अथवा न मिलना और मिलने पर उनसे लाभ उठाने की बुद्धि होना अथवा न होना यह प्रत्येक मनुष्य के बुद्धि, सांसारिक परिस्थिति तथा आर्थिक सामर्थ्य पर निर्भर है। हमारी समझ से प्रवीण वैद्य भी बिना औषधि के तथा उक्त औषधिका विश्वासपूर्वक और विधिपूर्वक सेवन किये रोगी को निरोगी नहीं बना सकता उसी तरह प्रवींण ज्योतिषी भी बिना रत्नादि साधन के तथा उक्त साधनों का शास्त्रोक्त विधिपूर्वक पालन किये बिना किसी भी मनुष्य को संकट से मुक्त नहीं कर सकता चाहे इन शास्त्र निर्धारित उपायोंपर लोगों का विश्वास हो अथवा न हो इससे कोई प्रयोजन नहीं किंतु लाभ होना निश्चित है। और

स्वयं अनुभव के सिवाय अविश्वासियों को विश्वास होना भी कठिन है।

हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि प्रत्येक सुशिक्षित मनुष्य इस शास्त्र का सर्व साधारण ज्ञान प्राप्त कर अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फलों की तीव्रता नष्ट या कम करने के लिये यथा शक्ति प्रयत्न करे और उनकी इहलोक की ज़ीवन यात्रा सुखमय होकर उनका भविष्य अत्यंत उज्वलित हो।

काल (समय) की महिमा

इस ग्रंथ के प्रारंभ में हम कह चुके हैं कि काल (समय) ज्योतिष शास्त्र का एक मुख्य अंग है। पचांग में दिये हुए तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, राशि और ग्रहादि के परस्पर क्रिया व प्रतिक्रिया के समन्वय को काल कहते हैं। काल की सत्ता व लीला अगाध है क्योंकि अनेक प्रसंगो पर कई लोगों का सांसारिक जीवन सुखमय दिखते २ वह एक क्षण में उलट पलट हो इतना दुःखमय बन जाता है कि इस अकस्मात् परिवर्तन से मनुष्य विचार शून्य हो काल की प्रचंडता तथा पुरुषार्थ की दुर्बलता का उसे प्रत्यक्ष अनुभव मिलने लगता है। साथ ही उस काल को उत्पन्न करने वाले परमेश्वर के प्रति मनुष्य के मनमें उसे जानने के लिये एक प्रकार का कुतुहल उत्पन्न होता है। वास्तविक में काल मनुष्य के आधीन नही किंतु मनुष्य कालाधीन है और इसी लिये "कालाय तस्मै नमः" ऐसा कहते हुए जगत के सर्व लोग उसे नित्य प्रणाम किया करते हैं। प्रायः यह सभी का अनुभव है कि कोई भी मनुष्य, कुटुंब, समाज तथा राष्ट्र कितना भी प्रचंड शक्तिशाली, पराक्रमी, धनवान, गुणवान व धैर्यवान क्यों न हो किंतु अनुकूल समय के अभाव से तथा प्रतिकूल समय के प्रभाव से उसकी सारी शक्ति निष्फल होकर वह तृणवत् समान दिखने लगता है। इससे यह स्पष्ट रीति से सिद्ध होता है कि अनुकूल समय पर राई सा प्रयत्न पर्वत समान फल देता है और प्रतिकूल समय

पर पर्वत समान उंचा प्रयत्न भी राई समान फल देता है। इसी कारण नेपोलियन् जैसे महान् शक्तिमान्, विद्वान्, पराक्रमी योद्धा ने कहा कि "ability is of little account without oppostunity" अर्थात्—अवकाश के सिवाय बुद्धि का विकास होना असंभव है।

सारांश—जगत में अनुकूल व प्रतिकूल समय जानने का एकमात्र साधन ज्योतिषशास्त्र है। अतः प्रत्येक सांसारिक मनुष्य को इस शास्त्र का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। परंतु बिना ज्ञान व अनुभव के किसी भी समंजस मनुष्य को इस त्रिकालदर्शी विद्या के प्रति अपना विश्वास तथा अंध विश्वास व्यक्त करना सुसंगत नहीं दिखता। हमें पूर्ण आशा है कि सूज्ञ पाठकगण इस नित्योपयोगी त्रिकालदर्शी विद्या से अधिक से अधिक लाभ उठाकर अपना जीवन सुखमय बनाने का प्रयत्न करेंगे। ईश्वर उनके इन प्रयत्नों को यश दे यह प्रार्थनाकर इस प्रस्तावना को हम समाप्त करते हैं।

* इति *

विषय सूची

	पृष्ठ
शब्दों का अर्थ	१–४
लेखक के दो शब्द	१–१२
प्रस्तावना	१३–४८
सुमलज्योतिषज्ञान	**पृष्ठ**
१ भविष्य-कथन	१–३
२ पंचांग	४–५
३ वर्ष	६–७
४ सौर और चांद्रवर्ष	८
५ अयन	८
६ संक्रांति	८
७ ऋतु	९
८ हिन्दुमास	९–१०
९ अधिकमास	१०–११
१० पक्ष	११
११ वार	१२–१३
१२ तिथि	१३
१३ नक्षत्र	१४
१४ मूलनक्षत्रफल	१५–१६
१५ नक्षत्र चरण और राशि	१६–१८
१६ नक्षत्र और पृथ्वी का परस्पर संबंध	१८–१९
१७ जन्म-नक्षत्र और ग्रहदशा वर्षकाल	१९–२०

विषय	पृष्ठ
१८ योग	२०–२१
१९ करण	२१
२० राशि विचार	२१
२१ राशि चक्र	२१–२३
२२ द्वादश राशि के गुणधर्म स्वभाव	२३–२४
२३ तारक मारक राशि	२५
२४ राशि घातक चक्र	२५
२५ ग्रह विचार	२६
२६ ग्रह और राशि का स्वामीत्व संबंध	२७–२८
२७ ग्रहों का भ्रमण गतिकाल	२८–२९
२८ ग्रहों का चक्र	२९–३०
२९ ग्रहों का स्थूल फल विचार	३०–३१
३० ग्रहों की दृष्टि	३१
३१ ग्रहों के नैसर्गिक शत्रुमित्र ग्रह	३१–३२
३२ तारक मारक ग्रह	३२
३३ उदित ग्रह	३२
३४ अस्तंगत ग्रह	३२
३५ वक्रीग्रह	३२–३२
३६ मार्गी ग्रह	३३
३७ स्तंभी ग्रह	३३
३८ ग्रह कर्तरी	३३
३९ ग्रहों का भाग्योदय काल	३३
४० ग्रहों का शरीर अंग से संबंध	३३–३४
४१ ग्रहों का बलाबल समय	३४
४२ चंद्र का शुभाशुभ फल समय	३४–३५

विषय	पृष्ठ
४३ ग्रहों के बल	३५–३६
४४ ग्रहों की अवस्था	३६
४५ ग्रहावस्था फल	३६–३७
४६ ग्रहों की परस्पर शक्ति	३७
४७ ग्रहों के मारक ग्रह	३७–३८
४८ दोष शामक ग्रह	३८
४९ ग्रहों का फलकाल	३८
५० ग्रहों की भ्रमण पद्धति	३८–३९
५१ सुख दुःख का कारक ग्रह	३९–४०
५२ कारक ग्रह	४०–४३
५३ ग्रहों के अनुभव सिद्ध गुण धर्म स्वभाव	४३–४६
५४ ग्रहों से रोग निदान-ज्ञान	४६–५१
५५ स्पष्ट ग्रह अथवा ग्रहांश	५१–५९
५६ चंद्र स्पष्ट करने की रीति	५९–६१
५७ बुध ग्रह स्पष्ट रीति	६१
५८ गुरु ग्रह स्पष्ट रीति	६१
५९ शुक्र ग्रह स्पष्ट रीति	६२–६३
६० स्पष्ट राहु	६३
६१ स्पष्ट केतु	६३–६४
६२ ग्रहांश से सूक्ष्म फलित ज्ञान	६४–६६
६३ ग्रहांश से ग्रहों के अवस्था का ज्ञान	६७
६४ कालका सूक्ष्म विभाग	६८–६९
६५ जन्म कुण्डली	७०–७३
६६ लग्न	७३
६७ भुक्त फल	७३

विषय	पृष्ठ
६८ लंकोदय (लंका में राशि के पलात्मक उदय)	७३–७५
६९ लग्न साधन स्थूल रीति	७५–७७
७० जन्म लग्न कुंडली	७७
७१ सूक्ष्म लग्न साधन रीति	७८
७२ लंकोदय (लंका में राशि के पलात्मक उदय)	७८–८०
७३ पलभा जानने की रीति	८०
७४ मेषादिद्वादश लग्न फल या लग्न लक्षण	८१–८५
७५ जन्म ग्रह और गोचर ग्रह	८५–८६
७६ गोचर ग्रहों के फल समय	८७
७७ ग्रह योग	८७–९०
७८ धन लाभ व द्रव्य संचय योग	९०–९२
७९ सट्टाशर्यंत लाटरी से धन लाभ	९२
८० दारिद्र योग	,,
८१ वैराग्य योग	९३
८२ वेदांत योग	९३
८३ ब्रह्म ज्ञान योग	९३
८४ चोर योग	९४
८५ बंधन योग	९४
८६ व्यभिचार योग	९४–९५
८७ हर्शल व नेपच्यून	९५–९६
८८ हर्शल (यूरेनस) प्रजापति	९६–९७
८९ नेपच्यून (वरुण)	१००
९० द्वादश भाव फल	१०१–१०२
९१ ,, भाव विचार	१०३–११४
९२ ,, भाव से अनेक बातों का बोध	११४–११८

विषय	पृष्ठ
९३ द्वादश भाव शुभाशुभ ग्रह के सामन्य फल	११८–१२३
९४ ,, भाव विचार के सामान्य नियम	१२३–१२५
९५ ,, भाव फल	१२५–१४१
९६ स्थान परत्व ग्रहों का विफलत्व	१४१
९७ शनि की साढ़ेसाती	१४२–१४८
९८ शनि की शुभाशुभ राशि व स्थान	१४८
९९ साढ़ेसाती का शुभाशुभ फल	१४८–१५०
१०० चंद्रांश कोष्टक	१५२
१०१ लग्न व रवि की साढ़ेसाती	१५३
१०२ अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फल नष्ट करने के शास्त्रोक्त उपाय	१५३–१५९
१०३ नवग्रहों का जपदान वगैरह	१६०–१६१
१०४ द्वादश लग्न कोष्टक द्वादश लग्न कोष्टक का स्पष्टीकरण	१६१–१६२
१०५ महादशा विचार	१६२–१६३
१०६ जन्म महादशा (ग्रहदशा) जानने की रीति	१६३–१६६
१०७ ग्रहदशा फल	१६६–१६८
१०८ रवि महादशा भावफल	१६८–१६९
१०९ रवि महादशा राशिफल	१६९–१७०
११० चंद्र महादशा भावफल	१७०–१७१
१११ चन्द्र महादशा राशिफल	१७१–१७२
११२ मंगल महादशा भावफल	१७२–१७३
११३ मंगल महादशा राशिफल	१७३–१७४
११४ राहु महादशा भाव व राशिफल	१७३–१७५
११५ गुरु महादशा भावफल	१७५–१७६
११६ गुरु महादशा राशिफल	१७६–१७७
११७ शनि महादशा भावफल	१७७–१७९

विषय	पृष्ठ
११८ शनि महादशा राशिफल	१७९–१८०
११९ बुध महादशा भावफल	१८०–१८१
१२० बुध महादशा राशिफल	१८१–१८२
१२१ केतु महादशा भाव व राशिफल	१८२–१८३
१२२ शुक्र महादशा भावफल	१८३–१८४
१२३ शुक्र महादशा राशिफल	१८४–१८६
१२४ रवि महादशा की अन्तर्दशा	१८६
१२५ चंद्र महादशा की ,,	१८७
१२६ मंगल महादशा की ,,	१८७–१८८
१२७ राहु महदशा की ,,	१८८
१२८ गुरु ,, की ,,	१८८–१८९
१२९ शनि ,, की ,,	१८९
१३० बुध ,, की ,,	१८९–१९०
१३१ केतु ,, की ,,	१९०
१३२ शुक्र ,, की ,,	१९०–१९२
१३३ अन्तर्दशा का काल जानने की रीति	१९२
१३४ कुंडली निर्णय विचार	१९३–१९५
१३५ जन्म कुंडली	१९६
१३६ प्रश्न व उत्तर	१९६–२०१
१३७ कुण्डली के द्वादश भाव का फल	२०१–२०४
१३८ मेरी कुण्डली कैसी है	२०४–२०६
१३९ तुम किस दिन पैदा हुए हो	२०६–२०७
१४० चंद्र चक्र	२०७–२०८
१४१ भविष्य कथन	२०८–२१०
१४२ ज्योतिष चमत्मार	२११–२१४

विषय	पृष्ठ
१४३ विवाह पद्धति विचार	२१५–२२३
१४४ वर की कुंडली में मंगल का फल	२२४
१४५ वधू के ,, ,, ,,	२२५–२७
१४६ स्त्री जातक	
१४७ द्वादश लग्न का फल विचार	२२८–२९
द्वादश राशि फल	२३०
,, भाव ग्रह फल	२३१–३७
१४८ लग्न भाव फल	२३८
सप्तम ,, ,,	२३९
अष्टम ,, ,,	,,
नवम ,, ,,	२४०
शुभ योग	,,
राज योग	,,
अशुभ योग	२४१
बंध्या योग	,,
सुवासिनी मरण योग	,,
संतति योग	,,
वैधव्य योग	२४२
विषकन्या योग	२४३
१४८ कुंडलियाँ	२४४–४७
१४९ विद्वज्जनों का अभिप्राय	२४८–५७
१५० शुद्धाशुद्धि पत्र	२५८

सुलभ-ज्योतिष ज्ञान

अर्थात्

फलित ज्योतिष शास्त्र तथा भविष्य कथन

ज्योतिष शास्त्र का मुख्य विभाग, जातक शास्त्र (फलित शास्त्र) तथा भविष्य कथन इतना आश्चर्यजनक, चमत्कार पूर्ण और चित्ताकर्षक है कि राजा से लेकर रंक तक प्रत्येक मनुष्य को भविष्य में होनेवाली, सुख दुःखादि घटनाओं का हाल जानने की हार्दिक इच्छा और अभिलाषा होना अत्यंत स्वाभाविक है। इस त्रिकालदर्शी विद्या के सहारे असंख्य लोगों ने पूर्व में लाभ उठाया है, वर्तमान समय अनुभव पा रहे हैं और भविष्य में इसी तरह लाभ उठावेंगे इसमें तिलमात्र संदेह नहीं। भविष्य शब्द में ही इतना अद्भुत जादू तथा अमोघ शक्ति विद्यमान है कि उसके उज्ज्वल प्रकाश से मृतवत् मनुष्य भी जीवित रहने की इच्छा करने लगता है और उसके घोर अंधकार से ऐश्वर्य के शिखर पर रहनेवाले सुखी मनुष्य को भी प्राण जाने का भय होता है। यथार्थ में इस शब्द की महिमा अवर्णनीय है किंतु इस शास्त्र के द्वारा प्रत्येक मनुष्य को इसके सच्चे स्वरूप और महत्व का ज्ञान होना संभव है अतः इससे परिचित होना आवश्यक ही नहीं वरन् अनिवार्य है। इस जगत् में प्रत्येक शास्त्र का जन्म मनुष्य के ऐहिक सुख तथा

पारमार्थिक कल्याण के लिये ही हुआ है किंतु अनाधिकारी सज्जन यदि शास्त्र शब्द को ह्रस्व करदें तो स्वभावतः यह शब्द शस्त्र होकर जनता को सुख की अपेक्षा अधिक दुःख और हानि पहुँचायेगा इसमें संदेह नहीं। वास्तव में फलित शास्त्र या भविष्य कथन इतना कठिन विषय है कि गुरु-कृपा तथा पूर्ण ज्ञान के बिना फलित बर्तना प्रायः अशक्य है किंतु प्रयत्न से अनेक कार्य सिद्ध हो सकते हैं अतः प्रयत्न करना आवश्यक है। भविष्य कथन पंच महाभूतों की शुभाशुभ स्थिति तथा काल (समय) पर अवलंबित है। जगत् के समस्त चराचर, वस्तु और प्राणी, पर अपना वर्चस्व दिखाने वाला तथा अधिकार रखने वाला और आकाशस्थ ग्रहों की सहायता से उन पर अपना शुभाशुभ फल दिखानेवाला यह काल (समय), जो परमेश्वर का दूत माना जाता है, अनुकूल है अथवा प्रतिकूल यह जानने का एकमेव साधन अर्थात ज्योतिष शास्त्र के आधार पर बने हुए सिद्धांतों और उन सिद्धातों पर से आकाशस्थ ग्रहों की गति व शुभाशुभ स्थिति के फल का ज्ञान है। परमेश्वर के उस कालरूपी दूत का अद्भुत नाटक ज्योतिष शास्त्र के सिवाय अन्य किसी भी शास्त्र से मालूम होना अशक्य है। इसी कारण दुनियां के सब शास्त्रों से यह शास्त्र श्रेष्ठ माना गया है और इस शास्त्र का ज्ञाता यदि आज भी सर्वमान्य हो तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। ज्योतिष शास्त्र के सिद्धांत, संहिता और जातक तीन विभाग हैं और उनकी परिभाषा नीचे लिखे अनुसार है।

१. सिद्धांत विभाग के द्वारा आकाशस्थ ग्रहों की गति और भ्रमण मार्ग का ज्ञान होता है।

२. संहिता विभाग के द्वारा ग्रहों का उदय, अस्त, वक्री, मार्गी, शुभाशुभ स्थिति, ग्रहण, उल्कापात, धूमकेतु आदि का फल ज्ञान होता है।

३. जातक-फलित विभाग के द्वारा पृथ्वी के चराचर, जड़ और चेतन पर आकाशस्थ ग्रहों के होनेवाले शुभाशुभ परिणाम तथा सुख दुःखादि का पूर्ण ज्ञान होता है।

ज्योतिष शास्त्र के प्रथम भाग अर्थात् गणित शास्त्र में सिद्धान्त और संहिता इन दो विभागों का वर्णन है और दूसरे भाग अर्थात फलित शास्त्र में जातक विभाग का वर्णन किया गया है। गणित शास्त्र के आधार पर जगत के अनेक संशोधक तथा तत्ववेत्ताओं ने अनेक बातों का शोध और निर्णय किया है जो सर्वसाधारण को मान्य हो चुका है परंतु इतना होते हुए भी इन दोनों विभागों के प्रति लोगों का मन जितना उदासीन दीखता है उससे अधिक जातक विभाग के प्रति उत्सुक दीखता है क्योंकि उनके भविष्य के सुख दुःख का ज्ञान इसी विभाग से हो सकता है। यथार्थ में जातक विभाग का फलित, सिद्धांत और संहिता विभाग के गणित पर ही सर्वस्व अवलंबित है क्योंकि गणित शास्त्र ही फलित शास्त्र का मुख्य आधारस्तंभ है। सर्वसाधारण के लाभार्थ विद्वान् गणितज्ञ सिद्धांत और संहिता विभाग का वर्णन वार्षिक पंचांगों में किया करते हैं किंतु लोगों को इस अल्प किंतु अमूल्य ग्रंथ में दिये हुए गणित का ज्ञान न होने के कारण यदि अपना आयुष्य मार्ग अंधकार में क्रमण करना पड़ता हो तो इसका पूरा दोष उन्हीं लोगों पर है। हमारी समझ से इस अल्प ग्रंथ का ज्ञान--धर्म, जिज्ञासा, व्यवहार या अन्य किसी भी दृष्टि से क्यों न हो—प्रत्येक सांसारिक

मनुष्य को होना अत्यंत आवश्यक है और यह अल्प ग्रंथ फलित शास्त्र का मुख्य अंग होने के कारण प्रथम इसका वर्णन यहां करना हम आवश्यक समझते हैं।

पंचांग

प्रथम यह विचार करें कि पंचांग शब्द का अर्थ क्या है। काल के पांच अंग हैं अर्थात् तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण। इन पांच अंगों का वर्णन या निर्देश जिस ग्रंथ में किया जाता है उसे पंचांग कहते हैं। पंचांग और उसमें दी हुई पूर्णिमा और अमावस्या की कुंडलियाँ आकाश के ग्रह स्थिति का प्रत्यक्ष नकशा है। प्रत्येक वैदिक-धर्माभिमानी कुटुंब में पंचांग की आवश्यकता सदैव रहती है क्योंकि उनके प्रतिदिन के व्रत, उपवास, धर्मकृत्य, उत्सव, मंगलकार्य, शुभाशुभ, मुहूर्त आदि इस अल्प किंतु नित्योपयोगी ग्रंथ पर निर्भर रहते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मनुष्य के जीवन की शुभाशुभ घटनाओं का भी दिव्यज्ञान पंचांग में दिये हुए जन्म कालीन ग्रह स्थिति तथा जन्म कुंडली से होता है। अतः प्रत्येक वैदिक-धर्माभिमानी हिंदुओं को इस वार्षिक ग्रंथ की आवश्यकता वेदकाल से आज तक प्रतीत होना स्वाभाविक है। इस अल्प ग्रंथ के विषय में किसी ज्योतिषाचार्य ने कहा है किः—

चतुरंगबलो राजा जगतीं वशमानयेत्।
अहं पंचांग बलवान् आकाशं वशमानये ॥

अर्थात्—हाथी, घोड़े, सैन्य आदि के बल राजा केवल पृथ्वी को अपने वश कर सकता है किंतु मैं पंचांग के बल आकाश को वश कर सकता हूँ। अर्थात् चतुरंग युक्त राजा केवल पृथ्वी को

जीतकर उसे अपने वश कर सकता है किंतु पंचांग-बल विद्वान— राजा, पृथ्वी और आकाश इन तीनों को जीतकर अपने वश कर सकता है। इसी कारण से प्राचीन समय में पंचांग के ज्ञाता ज्योतिषज्ञ इस देश के राजाओं के आदर के पात्र हो सम्मान पाते थे और राजा लोग स्वतः या राष्ट्र पर दुर्धर प्रसंग या संकट काल आने पर इन त्रिकालज्ञ ज्योतिषियों के ज्ञान का, संकट निवारणार्थ, लाभ उठाया करते थे। जिसका अनुकरण पाश्चात्य देश के राजा तथा राष्ट्र के कर्णधार आज भी कर रहे हैं यह सर्वश्रुत है। किंतु खेद के साथ कहना पड़ता है कि इस देश के कई सुशिक्षित सज्जन आंग्लविद्या के प्रभाव से अथवा संस्कृत भाषा के अभाव से अपनी प्राचीन और श्रेष्ठ संस्कृति को भूल कर इस अवनति दशा को पहुँच रहे हैं क्योंकि उनमें न तो भूत समय का अभिमान बाकी रहा और न उन्हें भविष्य समय के ज्ञान की ही अभिलाषा है। गणित की दशमान पद्धति, शून्य लब्धी, पूर्णांक और सूक्ष्मांक आदि गणितांक के लिये दुनियां आज जो ऋणी है उसके जन्मदाता हिंदू लोग ही थे क्योंकि ईस्वी सन् के तीन हजार वर्ष पूर्व हिंदु ज्योतिषियों ने किया हुआ वेध तथा काल गणना आज अवशेष है और कोलब्रुक, क्यासिनी, बेली, प्लेफेअर जैसे पाश्चात्य विद्वान ज्योतिषज्ञोंने यह मान्य किया है कि पंचांग के काल गणना की व्यवस्था प्राचीन हिंदुओं ने ही की है। अस्तु, ज्योतिष शास्त्र का साधारण ज्ञान प्राप्त करने के लिये इस सर्वांग सुंदर तथा उपयुक्त वार्षिक ग्रंथ-पंचांग में दिये हुए पांच अंगों के अतिरिक्त अन्य कई विषयों का जैसे—संवत् और शकेवर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, वार, तिथि, ग्रह, नक्षत्र, राशि, घटी, पल, दिनमान, रविउदय,

रविअस्त, कुंडलियां, स्पष्ट ग्रहांश आदि का जो उल्लेख किया गया है उसका ज्ञान होना आवश्यक है । अतः उसका वर्णन संक्षिप्त में यहां करना उचित होगा ।

वर्ष

वर्ष के कई नाम हैं। जैसेः—संवत्सर वर्ष, शके वर्ष, ईस्वी सन् और हिजरी सन् आदि; परंतु चालू हिंदु वर्ष के मुख्य दो नाम हैं (१) विक्रम संवत् (२) शालिवाहन शके ।

१. विक्रम नृप संवत्—आज से १९९९ वर्ष पूर्व श्री विक्रम राजा के नाम से जो वर्ष आरंभ किया गया उसे विक्रम संवत्सर कहते हैं। यह वर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से शुरू होता है। नर्मदा नदी के उत्तर भाग में रहनेवाले हिंदुओंमें यह वर्ष अधिक प्रचलित है। इस देश के व्यापारीवर्ग इसे व्यापारी वर्ष भी मानते हैं जिसका आरंभ कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से होता है। संवत्सर वर्ष या गौरव वर्ष के ६० नाम हैं और ६० वर्ष का यह चक्र पूर्ण होने पर दूसरे चक्र का आरंभ इन्हीं नामों से होता है। संवत्सर अनादि काल से है। जैसेः—

१ प्रभव	८ भाष	१५ वृष	२२ सर्वधारी
२ विभव	९ युवा	१६ चित्रभानु	२३ विरोधी
३ शुक्ल	१० धाता	१७ सुभानु	२४ विकृति
४ प्रमोद	११ ईश्वर	१८ तारण	२५ स्वरनाम
५ प्रजापति	१२ बहुधान्य	१९ पार्थिव	२६ नंदन
६ अंगिरा	१३ प्रभावी	२० व्यय	२७ विजय
७ श्रीमुख	१४ विक्रम	२१ सर्वजित	२८ जय

२९ मन्मथ	३७ शोभन	४५ विरोधकृत	५३ सिद्धार्थ
३० दुर्मुख	३८ क्रोधी	४६ परिधावी	५४ रोद्र
३१ हेमलंब	३९ विश्वावसु	४७ प्रमादी	५५ दुर्गति
३२ विलंब	४० पराभव	४८ आनंद	५६ दुंदुभि
३३ विकारी	४१ प्लवंग	४९ राक्षस	५७ रुधिरोद्गारी
३४ शार्वरी	४२ कलिक	५० नल	५८ रक्ताक्ष
३५ प्रव	४३ सौम्य	५१ पिंगल	५९ क्रोधन
३६ शुभकृत	४४ साधारण	५२ कालयुक्त	६० क्षय

२. श्री विक्रम संवत् के १३५ वर्ष पश्चात् शालिवाहन राजा के नाम से जो वर्ष आरंभ हुआ उसे शके वर्ष कहते हैं। यह वर्ष मेष संक्राति से आरंभ होता है। नर्मदा नदी के दक्षिण भाग में रहने वाले लोगों में अधिकतर यही प्रचलित है। इन वर्षों का कोई नाम नहीं रक्खा गया किन्तु पंचागों में शके वर्ष का नाम संवत्सर वर्ष के नाम से ही निचे लिखे हुए क्रम से लिखा जाता है जैसेः—आज शके वर्ष १८६४ है इसमें १२ जोड़कर ६० से भाग दो। शेष जो अंक हो उस अंक के सामने संवत् वर्ष चक्र में जो नाम हो वही शके वर्ष का नाम जानना अर्थात् शके १८६४ चित्रभानु संवस्सरे नाम हुआ।

३. संवत् वर्ष के ५७ वर्ष पश्चात् और शके वर्ष के ७८ वर्ष पूर्व क्राइस्ट के नाम से जो वर्ष शुरू हुआ उसे ईस्वी सन् कहते हैं जैसे,संवत् १९९९–५७ = १९४२ ई० सम् और १८६४ + ७८ = १९४२ सन् का अंक आया।

४. आज से १३६२ वर्ष पूर्व मुसलमानों का वर्ष आरंभ हुआ जिसे हिजरी सन् कहते हैं। यह वर्ष मोहर्रम से शुरू होता है।

सौर और चांद्रवर्ष

पृथ्वी को सूर्य की एक परिक्रमा करने के लिये ३६५ दिन १५ घन्टे २८ पल का जो समय लगता है उसे एक सौर वर्षीय सावन दिन कहते हैं। चन्द्र को पृथ्वी की बारा परिक्रमा करने के लिये ३५४ दिन का जो समय लगता है उसे चान्द्र वर्ष कहते हैं। इन दोनों वर्षों में जो अंतर आता है उसे मेलन करने के हेतु गणितज्ञों ने प्रत्येक ३२ माह १६ दिन के बाद अधिक मास (मलमास) के नाम से एक मास माना है और इस मास के जन्म का यही मुख्य कारण है।

अयन

हिन्दू वर्ष में उत्तरायन और दक्षिणायन ये दो अयन होते हैं। सूर्य को मकर राशि से मिथुन राशि तक भ्रमण करने के लिये छः महिने का जो समय लगता है उसे उत्तरायन कहते हैं। यह समय बहुधा प्रति वर्ष १३ जनवरी से प्रारंभ होकर १५ जुलाई तक समाप्त होता है। और सूर्य को कर्क राशि से धन राशि तक मार्ग क्रमण करने के लिये छः मास का जो समय लगता है उसे दक्षिणायन कहते हैं। यह समय बहुधा १६ जुलाई से प्रारंभ होकर १२ जनवरी तक समाप्त होता है। इस तरह बारह संक्रांतियों में, मकरादि छः और कर्कादि छः, राशियों के क्रमण-काल को क्रमशः उत्तरायन और दक्षिणायन कहते हैं।

संक्रांति

प्रत्येक राशि में सूर्य एक मास स्थित रहने के पश्चात् जब दूसरी राशि में प्रवेश करता है उसी समय को संक्रांति कहते हैं। जिस

राशि में सूर्य स्थित हो उसी राशि को उस नाम का सौर मास कहते हैं। जैसे मकर, कर्क आदि। सूर्य का बोध अर्क नाम से होता है अतः पंचांग के कोष्टक में मेषेऽर्कः वृषमेऽर्कः मिथुनेऽर्कः आदि जिस दिन के समक्ष लिखा हो उसी दिन संक्रांति होती है।

ऋतु

हिन्दू वर्ष में छः ऋतु होती हैं जैसे वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमंत और शिशिर ! ऋतु से अंग्रेजी मास और संक्रान्ति आदि का ज्ञान नीचे कोष्टक से हो सकता है।

ऋतु	हिन्दी मास	संक्रान्ति	अंग्रेजी मास	अं० ऋतु
१ वसंत	चैत्र-वैशाख	मीन-मेष	फरवरी-मार्च	ग्रीष्म
२ ग्रीष्म	ज्येष्ठ-आषाढ	वृषभ-मिथुन	अप्रेल-मई	ग्रीष्म
३ वर्षा	श्रावण भाद्रपद	कर्क-सिंह	जून-जुलाई	वर्षा
४ शरद्	आश्विन-कार्तिक	कन्या-तुला	अगस्त-सितम्बर	
५ हेमंत	मार्गशीर्ष-पौष	वृश्चिक-धन	अक्टूबर-नवम्बर	शीत
६ शिशिर	माघ-फाल्गुन	मकर-कुम्भ	दिसम्बर-जनवरी	

हिन्दू मास

पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करते समय जिस मार्ग से घूमती है तथा आकाश में सूर्य जिस मार्ग से पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए मालूम पड़ता है उस मार्ग को क्रान्तिवृत्त कहते हैं। इस मार्ग पर के बारह तारक पुंज अर्थात् बड़े स्टेशनों को राशि कहते हैं। और सत्ताईस तारक पुंज अर्थात् छोटे स्टेशनों को नक्षत्र कहते हैं। सूर्य को बारह राशि क्रमण करने के लिये जो समय लगता है उसे सौर मास कहते हैं और चंद्र को अमावस्या से अमावस्या तक भ्रमण

करने में जो समय लगता है उसे चान्द्र मास कहते हैं। किन्तु उत्तर देश में कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा तक के काल को चान्द्र मास कहते हैं। इसके अनुसार जिस मास में जो पूर्णिमा होती है वह उसी मास के नाम से कहलाती है जैसे चैत्र की पूर्णिमा को चैत्री पूर्णिमा, कार्तिक मास की पूर्णिमा को कार्तिकपूर्णिमा आदि। हिंदी मासों का नाम बारह नक्षत्रों के नाम पर से पड़ा है जैसेः—

नक्षत्र	हिन्दू मास	अंग्रेजी मास	मुसलमानी मास
चित्रा	चैत्र	अप्रेल	रबिलाखर
विशाखा	वैशाख	मई	जमादिलावल
ज्येष्ठा	ज्येष्ठ	जून	जमादिलाखर
पूर्वाषाढा	आषाढ़	जुलाई	रज्जब
श्रवण	श्रावण	अगस्त	सावान
पूर्वाभाद्रपदा	भाद्रपद	सितम्बर	रमजान
अश्विनी	आश्विन	अक्टूबर	सब्वाल
कृत्तिका	कार्तिक	नवम्बर	जिल्काद
मृगशिरा	मार्गशीर्ष	दिसम्बर	जिल्हेज
पुष्य	पौष	जनवरी	मोहर्रम
मघा	माघ	फरवरी	सफर
पूर्वाफाल्गुनी	फाल्गुन	मार्च	रबिलावल

अधिक मास

इस मास की उत्पत्ति के विषय में हम पहले कह चुके हैं जिसका अनुकरण प्राचीन समय ग्रीक, रोमन और ज्यू लोग अपने

अपने पंचांगों में किया करते थे परन्तु आजकल यूरोप में पंचांगों में ३६५ दिन का एक वर्ष और प्रति चौथे वर्ष ३६६ दिन का एक वर्ष मानने की जो प्रथा चली है उसका उत्पादक रोमन का वीर योद्धा ज्यूलिअस सीझर था। ज्यूलिअस सीझर की गणना केवल इंग्लैंड पर स्वारी करने वाले वीर पुरुषों में ही नहीं की जाती किन्तु वह महान् विद्वान् गणितज्ञ, लेखक और कायदों का निर्माता भी था। उसके किये हुए अंग्रेजी मासों के नामाकरण के अन्तर्गत रोमन देवताओं के नामों का घनिष्ट सम्बन्ध है जिसका वर्णन करना यहाँ अनावश्यक प्रतीत होता है।

पक्ष

प्रत्येक हिन्दू मास में दो पक्ष होते हैं शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष। प्रतिपदा से पूर्णिमा तक के १५ दिन को शुक्ल पक्ष कहते हैं और प्रतिपदा से अमावस्या तक के १५ दिन को कृष्ण पक्ष कहते हैं।

हिन्दू धर्मपद्धति के अनुसार वार का आरंभ सूर्योदय से माना जाता है किन्तु मुसलमान धर्मपद्धति के अनुसार इसका आरंभ सूर्यास्त से माना जाता है और अंग्रेजीपद्धति के अनुसार दिनका आरंभ मध्य रात्रि १२ बजे के बाद से होता है। सूर्य सब ग्रहों में सर्वशक्तिमान ग्रह माना गया है और इसके, ग्रहमाला का मुख्य कर्ता होने के कारण हिन्दू लोगों का वर्ष, मास, दिन आदि सूर्य से गिना जाता है। अतः हिन्दू धर्मावलम्बी सौर वर्ष, सौर मास और सौर दिन का आरंभ सूर्योदय से ही शास्त्र शुद्ध समझते हैं। किन्तु अन्य धर्मावलम्बी लोग सूर्यास्त तथा मध्यान्ह रात्रि से

दिन का आरंभ जो मानते हैं वह कहाँ तक शास्त्र सिद्ध है इसका विचार पाठकगण स्वयं कर सकते हैं। हिन्दू वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, वार, तिथी, नक्षत्र, आदि का सम्बन्ध आकाश के अंगों से तथा सूर्य की गति के अनुसार गणित द्वारा निश्चित किया जाता है अतः सूर्योदय से दूसरे दिन सूर्योदय तक के समय को वार (दिन) कहते हैं और यह शास्त्र सिद्ध है इसमें संदेह नहीं। मकरसंक्रांति का आरंभ प्रति वर्ष १२ से १४ जनवरी तक होना और वर्षारम्भ मृग नक्षत्र में सूर्य के प्रवेश होते ही याने ६–७ जून को होना यह सिद्ध करता है कि हिन्दू गणितशास्त्र अचूक तथा श्रेष्ठ है और हिन्दुओं का पंचांग शास्त्र संगत, आधारयुक्त तथा नैसर्गिक है।

सूर्योदय से सूर्यास्त तक को दिन मान और सूर्यास्त से सूर्योदय काल को रात्रिमान कहते हैं।

वार (दिन)

वार के नाम की उत्पत्ति आकाशस्थ ग्रहों के नाम पर से हुई है यह सर्वश्रुत है। और आकाशस्थ ग्रहों का ज्ञान दुनियां के प्राचीन राष्ट्रों में से प्रथम भारतीय आर्यों को ही था यह भी इतिहास से सिद्ध हो चुका है। संसार के सभी राष्ट्रों में वार के नाम एक समान हैं इससे यह सिद्ध होता है कि वार के नाम निश्चित करते समय सारे संसार में प्राचीन समय हिन्दू धर्म का प्राबल्य था। ईस्वी सन् २५०० वर्ष के पूर्व हिन्दुओं के निर्मित किये हुए ये नाम सारे संसार मे प्रचारित थे, यह मोसोपोटेपियाँ के सार्व-जनिक पुस्तकालय की उन पुरानी पुस्तकों से सिद्ध हो चुका है

जो 'निनेह्व' की खोदाई में मिली हैं। हजारों वर्ष पूर्व मेसोपोटेमियां के प्राचीन शहर अर्थात् "बेबीलोनियां* निनेह्व और असूर" पृथ्वी के गर्भ में विलीन हो गये किन्तु आज इनका केवल नाम मात्र ही शेष रह गया है।

वार के क्रम के संबंध में सूर्य सिद्धांत में लिखा है कि "मन्दाधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः" सब से उच्चस्थ शनि से चौथी कक्षा सूर्य की है इसलिये सर्वप्रथम दिन का नाम रविवार पड़ा। फिर रवि से नीचे चौथी कक्षा चंद्र की है अतः दूसरा नाम चंद्रवार पड़ा। इसके बाद चंद्रमा से ऊपर की चौथी कक्षा मंगल की है इसलिये तृतीयवार का नाम मंगलवार पड़ा। और इसी तरह अन्यवारों का नाम पड़ा है।

तिथि

चंन्द्र को रवि से बारह अंश दूर प्रवास करने के लिये जो समय लगता है उसे तिथि कहते हैं। प्रत्येक महिने के शुक्ल पक्ष में १५ और कृष्ण पक्ष में १५ ऐसी ३० तिथियाँ होती हैं और उनके नाम का क्रम निचे लिखे अनुसार है :—(१) प्रतिपदा (२) द्वितीया (३) तृतीया (४) चतुर्थी (५) पंचमी (६) षष्ठी (७) सप्तमी (८) अष्टमी (९) नवमी (१०) दशमी (११) एकादशी (१२) द्वादशी (१३) त्रयोदशी (१४) चतुर्दशी। दोनों पक्ष

* नोट—तेग्रिस और युफ्राटीस इन नदियों के उगम स्थान के नजदीक के प्रांत का बाबिलोनियां यह नाम था। बाबीलोन यह युफ्राटीस नदी के किनारे बसा था और वहां एक देवल का मनोरा १८०० फुट ऊँचा था जिसमें एक वेधशाला थी। यहां के राजों के धर्मगुरु खाल्डियन लोग थे।

की तिथियों के नाम एक समान हैं किंतु शुक्ल पक्ष की १५ वीं तिथी को पूर्णिमा और कृष्ण पक्ष की १५ वीं तिथी को अमावस्या* कहते हैं। इनका बोध क्रमशः १५ और ३० इन अंकों से होता है। मास के आखरी दिन का बोध यदि ३० के अंक से होता हो तो यह यथार्थ है।

नक्षत्र

आकाश के बारह भागों को राशि और सत्ताइस विभागों को नक्षत्र कहते हैं। चन्द्रमा को १३ अंश २० कला का मार्ग क्रमण करने के लिये जो समय लगता है उसे नक्षत्र कहते हैं। इस गति से चन्द्रमा ३६० अंश में २७ नक्षत्रों का भ्रमण पूरा करता है। जिस तरह मनुष्य ने इस पृथ्वी पर पूर्व (कलकत्ता) से पश्चिम (बम्बई) तक अनेक छोटे-बड़े स्टेशन, निश्चित अंतर पर निर्माण कर इन दोनों दिशा के प्रमुख शहरों का अंतर मालूम किया है। उसी तरह सृष्टिकर्ता ने आकाश में राशि और नक्षत्र रूपी छोटे-बड़े स्टेशन निश्चित अंतर पर तारों के रूप में निर्माण किये हैं और ये सृष्टि के आरंभ से आज तक उसी स्थान में स्थित हैं अतः इन्हें स्थिर, निश्चल नक्षत्र अर्थात् "न क्षरति तत नक्षत्रं" ऐसा शास्त्रकारों ने कहा है। नक्षत्रों के नाम तथा उनका क्रम नीचे लिखे अनुसार है। (१) अश्विनी (२) भरणी (३) कृत्तिका (४)

---

* अमा—अर्थात् एक स्थान और वस—अर्थात रहना है इस तिथी में चंद्र और सूर्य प्रत्येक मास में एक ही राशि में रहते हैं इसी लिये इस तिथी का नाम अमावस या अमावस्या पड़ा। और चंद्र व सूर्य जिस तिथी में परस्पर आमने-सामने रहते हैं उसे पूर्णिमा कहते हैं।

रोहिणी (५) मृगशिरा (६) आर्द्रा (७) पुनर्वसु (८) पुष्य (९) आश्लेषा (१०) मघा (११) पूर्वा फा० (१२) उत्तरा फा० (१३) हस्त (१४) चित्रा (१५) स्वाती (१६) विशाखा (१७) अनुराधा (१८) ज्येष्ठा (१९) मूल (२०) पूर्वाषाढा (२१) उत्तरा षाढा (२२) श्रवण (२३) धनिष्ठा (२४) शततारका (२५) पूर्वा भाद्रपदा (२६) उत्तरा भाद्रपदा (२७) रेवती। इन सत्ताईस नक्षत्रों के स्वामी २७ देवता और द्वादश राशियों के स्वामी ७ ग्रह हैं। जब सूर्य रोहिणी से स्वाती नक्षत्रों में प्रवेश करता है तब वर्षा आरंभ होती है जो प्रायः ७ जून से शुरू होकर नवम्बर में समाप्त होती है। सूर्य एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र में प्रवेश करते समय पंचांग के कोष्टक में रोहण्यार्कः मृगेर्कः इत्यादि लिखा जाता है। काल का सूक्ष्म अंग होने के कारण नक्षत्र भविष्यफल निर्णय का एक मुख्य अंग माना जाता है। अतः इस अंगके शुभाशुभ आदि का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को होना आवश्यक है। इन नक्षत्रों में से ज्येष्ठा आर्द्रा, शततारका, भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा, धनिष्ठा, मघा और मूल ये ९ नक्षत्र अशुभ हैं और बाकी के १८ नक्षत्र शुभ हैं। ऊपर दिये ९ नक्षत्रों में से मूल नक्षत्र अत्यंत अशुभ है—

मूल नक्षत्र फल

बालक का जन्म इस नक्षत्र के प्रथम चरण में हुआ हो तो वह पिता, द्वितीय चरण में—माता, और तृतीय में—धन को घातक होता है परंतु यदि चतुर्थ चरण में हो तो शुभ फलदायी समझा जाता है। बालक के जन्म समय यदि मूल नक्षत्र कृष्ण पक्ष तृतीया—मंगलवार, कृष्णपक्ष दशमी—शनिवार और शुक्लपक्ष तृतीया—शुक्रवार हो तो ऐसा बालक कुल का नाश करता है।

मूल नक्षत्र में यदि किसी बालक का जन्म दिन में हुआ हो तो–पिता को, सांयकाल को हो तो–मामा को, रात्रि में–पशुओं को और प्रातःकाल–मित्रों के लिए अनिष्टकारक समझना चाहिये।

ज्येष्ठा नक्षत्र की अंत की एक घड़ी और मूल नक्षत्र की दो घड़ी को गंडांत कहते हैं। ऐसे समय में यदि बालक का जन्म हुआ हो तो पिता को चाहिये कि उसका मुँह न देखे यदि धोखे से उसकी दृष्टि पड़ गई हो तो उसे चाहिये कि वह दान, धर्म, जप, तप के द्वारा इस कुपरिणाम से बचने का प्रयत्न करे अन्यथा मृत्यु का होना संभव है। किंतु इस नक्षत्र में जन्म लिया हुआ बालक प्रायः दीर्घायू, पराक्रमी, बलवान्, शत्रु का नाश करनेवाला तथा विद्या, धन व ऐश्वर्य से संपन्न रहता है। जन्म नक्षत्र का प्रभाव मनुष्य के स्वभावादि पर इतने जोरों से पड़ता है कि बहुधा लोग "इस मनुष्य का जन्म किस नक्षत्र पर हुआ" "यह इसके जन्म नक्षत्र का दोष है" आदि कुछ प्रसंगों पर कहा करते हैं इसका मुख्य कारण यही है।

नक्षत्र, चरण और राशि

प्रत्येक नक्षत्र के चार विभाग या चरण होते हैं अर्थात् २७ नक्षत्रों के १०८ चरण और ९ चरणों की १ राशि। इस तरह द्वादश राशि २७ नक्षत्र तथा १०८ चरण के स्वामी कहलाते हैं। हिंदुओं के नामों का आद्याक्षर निचे दिये हुए प्रथम शब्दों से ही आरंभ होता है। जैसे—

(१) चू चे चो ला	अश्विनी	मेष
(२) ली लू ले लो	भरणी	
(३) आ ई उ ए	कृत्तिका	

(४) ओ वा वी बू — रोहिणी
(५) वे वो का की — मृग — वृषभ
(६) कू घ ङ छ — आर्द्रा
(७) के को हा ही — पुनर्वसु — मिथुन
(८) हू हे हो डा — पुष्य
(९) डी डू डे डो — आश्लेषा — कर्क
(१०) मा मी मू में — मघा
(११) मो टा टी टू — पूर्वा — सिंह
(१२) टे टा पा पी — उत्तरा
(१३) पू षा णा ढा — हस्त — कन्या
(१४) पे पो रा री — चित्रा
(१५) रू रे रो ता — स्वाती — तुला
(१६) ती तू ते तो — विशाखा
(१७) ना नी नू ने — अनुराधा — वृश्चिक
(१८) नो या यी यू — ज्येष्ठा
(१९) ये यो भा भी — मूल — धन
(२०) भू घा फा डा — पूर्वाषाढा
(२१) भे जो जा जी — उत्तराषाढा — मकर
(२२) खा खु खे खो — श्रवण
(२३) गा गी गू गे — धनिष्ठा
(२४) गो सा सी सू — शततारका — कुंभ
(२५) से सो दा दो — पूर्वा भाद्रपदा
(२६) दू य झ ञ — उत्तरा — मीन
(२७) दे दो चा ची — रेवती

इस मृत्यलोक में मनुष्य का आगमन जिस चरण नक्षत्र, राशि और दिन में होता है उसी चरण के आद्यअक्षर के अनुसार इस देश में बालक का जन्म तथा नाम रखने की प्रथा वैदिक काल से चली आ रही है। इस पद्धति का अनुकरण करने से हमारे पूर्वजों का उद्देश यह है कि मनुष्य के जन्म या व्यावहारिक नाम पद से बालक के जन्म समय के नक्षत्र, चरण, राशि, ग्रहदशा आदि का ज्ञान सहज हो तथा भूत वर्तमान और भविष्य में होने वाली अनेक शुभाशुभ घटनाओं का हाल, इस शास्त्र के ज्ञाता को, बिना कुंडली देखे हो सके। नक्षत्र, चक्र या अवकहडा चक्र वार्षिक पंचांगों में लिखा रहता है और यह ५००० वर्ष पूर्व से इस देश में प्रचार में है।

नक्षत्र और पृथ्वी का परस्पर संबंध

हम पहले कह चुके हैं कि नक्षत्र तारे हैं और तारों का स्वामी चंद्र है अतः चंद्र को नक्षत्र राज, तारानाथ इत्यादि कहते हैं। नक्षत्र और चंद्र इन दोनों का वसतिस्थान एक ही है और पृथ्वी के समीप होने के कारण इनका प्रभाव पृथ्वी पर की समस्त वस्तुओं और प्राणियों पर पड़ना स्वाभाविक है। जैसे स्वाती नक्षत्र में सूर्य के रहते यदि वर्षा हुई, और उसकी एक बूंद भी सींप के अंदर प्रविष्ट हुई तो मोती का रूप धारण करती है। चित्रा या हस्त नक्षत्र के सूर्य की किरणों में मूल्यवान ऊनी वस्त्रों के क्रुमि किटाणुओं को नाश करने की शक्ति है। जब नक्षत्रों की उत्पादक, संरक्षक और नाशक शक्तियों का परिचय मनुष्य को प्रत्यक्ष रूप से मिल सकता है तो उनका प्रभुत्व पृथ्वी पर नहीं

पड़ता ऐसा कहना कहां तक उचित है यह विज्ञ पाठकगण स्वयं समझ सकते हैं। इन महत्वद्योतक नक्षत्रों के स्वरांतर्गत अक्षरात्मक चरणों के अनुसार बालक का जन्म होते ही नाम रखने की जो प्रथा हमारे महर्षियों ने निर्माण की है वह कितनी उपयोगी, महत्व पूर्ण और भविष्य ज्ञान द्योतक है यह लिखने की आवश्यकता नहीं। किंतु आज कल इस देश के लोगों पर पाश्चात्य सभ्यता का अधिक प्रभाव पड़ने के कारण स्वेच्छाचारी युवक इस सर्वोपयोगी प्रथा का अनुकरण करना अघोर पाप समझने लगे हैं। हमारी समझ में उनके ऐसा करने का यही उद्देश हो सकता है कि बालक बालिकाओं का विवाह निश्चित करते समय उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न उठाना पड़े। परंतु प्राचीन शास्त्रोक्त पद्धति के आधार पर विवाह निश्चित करने के क्षणिक कष्टों को टालने के हेतु उनका ऐसा करना भावी पिढ़ी का आयुष्य आजीवन दुःखमय बनाना तथा इस शास्त्रोक्त प्रथा को तृणवत् समझना अर्थात् देश के नवयुकों को आर्य-धर्म-संस्कृति से विमुख कर धर्म का नाश करना है। इसके साथ ही ज्योतिष शास्त्र जैसी त्रिकालदर्शी विद्या के प्रति राष्ट्र के भावी रक्षकों को मूर्ख बनाने की चेष्टा करना है।

जन्म-नक्षत्र और ग्रहदशा-वर्षकाल

जन्म समय के नक्षत्र पर से ग्रहदशा का ज्ञान नीचे दिये हुए कोष्टक से हो सकता है जैसेः—

नक्षत्र			ग्रहदशा	वर्षकाल
१ कृत्तिका,	उत्तरा,	उत्तराषाढ़ा	सूर्य	६ वर्ष
२ रोहिणी,	हस्त,	श्रवण	चंद्र	१० ,,
३ मृग,	चित्रा,	धनिष्टा	मंगल	७ ,,

४ आर्द्रा,	स्वाती,	शततारका	राहू	१८ ,,
५ पुनर्वसु,	विशाखा,	पूर्वा भा०	गुरु	१६ ,,
६ पुष्य,	अनुराधा,	उत्तरा भा०	शनि	१९ ,,
७ आश्लेषा,	ज्येष्ठा,	रेवती	बुध	१७ ,,
८ मघा	मूल	अश्विनी	केतु	७ ,,
९ पूर्वा	पूर्वाषाढ़ा	भरणी	शुक्र	२० ,,

जन्म ग्रहदशा के काल से आज दिन किसी ग्रह की दशा है और जन्मकुंडली में ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति के अनुसार उस ग्रह के शुभाशुभ फल का ज्ञान मनुष्य को सहज हो सकता है। यदि जन्म या व्यावहारिक नाम शास्त्रोक्त रीति से रक्खा गया हो तो दशा का सूक्ष्म ज्ञान नक्षत्र के चरणों पर से होना कठिन नहीं किंतु बिना गणित किये निश्चित समय का ज्ञान होना कठिन है जिसका संपूर्ण वर्णन हमने महादशा भाग में किया है।

योग

योग काल का मुख्य अंश है। ये २७ हैं जैसेः—

१ विष्कंभ	१० गंड	१९ परिघ
२ प्रीति	११ वृद्धि	२० शिव
३ आयुष्यमान	१२ ध्रुव	२१ सिद्धि
४ सौभाग्य	१३ व्याघात	२२ साध्य
५ शोभन	१४ हर्षण	२३ शुभ
६ अतिगंड	१५ वज्र	२४ शुक्ल
७ सुकर्मा	१६ सिद्धि	२५ ब्रह्मा
८ धृति	१७ व्यतिपात	२६ ऐंद्रा
९ शूल	१८ वरीयान्	२७ वैधृति

इन योगों में से व्यतिपात तथा वैधृति योग अशुभ और सर्वस्य त्याज्य हैं। शेष २५ योग आरंभ की कुछ घटी को छोड़कर दोष से मुक्त हैं। इन ग्रहों का फल इनके नाम से स्पष्ट मालूम हो सकता है और इनका प्रभाव कार्य आरंभ करते समय तथा जन्म समय के अनुसार मनुष्य पर अवश्य पड़ता है।

करण

तिथि के अर्ध भाग को करण कहते हैं। करण ११ हैं। (१) बव (२) बालव (३) कौलव (४) तैतिल (५) गरज (६) वणिज (७) पिष्टी (८) शकुनी (९) चतुष्पाद (१०) नाग (११) किंग्स्तुघ्न। इनमें से पिष्टी अशुभ है बाकी के १० शुभ हैं।

राशिविचार

भूमंडल के ३६० अंश हैं। उसके बारह भाग करने से ३० अंश के प्रत्येक समूह को द्वादश राशि कहते हैं। चंद्र को २। नक्षत्र भ्रमण करने के लिये जो समय लगता है उसे भी राशि कहते हैं। इसका संपूर्ण वर्णन राशि चक्र में किया है। परंतु कुंडलियों में राशि का बोध केवल अंकों से हुआ करता है। १ मेष, २ वृषभ, ३ मिथुन आदि। जन्म के समय चंद्र जिस राशि में स्थित हो वही उस मनुष्य की जन्म-राशि कहलाती है। चंद्र प्रत्येक राशि में कितने दिन घटी और पल रहता है यह वार्षिक पंचांग के आखरी कोष्टक में प्रत्येक तिथि के सामने लिखा रहता है।

राशिचक्र

द्वादश राशि के गुण, धर्म, स्वभाव, रूप, रंगादि परसे उनके शुभाशुभ फल का संपूर्ण ज्ञान पाठकों को सहज में हो सके इस

हेतु राशि चक्र में उनका पूर्ण विवेचन किया है परंतु इस चक्र से फलित बर्तते समय राशि का विचार किस तरह करना चाहिये यह उदाहरणार्थ निचे लिखा है। मानलो किसी मनुष्य की मेषराशि है और यह राशि लग्नसे सप्तम स्थान में है तो फलित बर्तते समय किन किन बातों पर विचार करना चाहिये :—

जन्म कुंडली
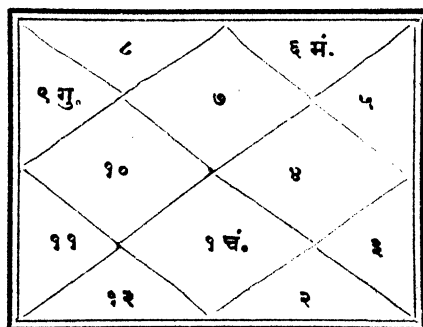
जन्म-कुंडली में चंद्र मेष राशि में स्थित है अतः मनुष्य की मेष राशि हुई। राशि के शरीर भाग के अनुसार मेष शरीर का मस्तक भाग है। इस राशि का स्वामी मंगल है और यह द्वादश स्थान में स्थित होने के कारण इसकी अष्टम दृष्टि अपनी राशि पर पूर्ण पड़ती है। मंगल ग्रह अशुभ तथा क्रूर स्वभाव का है अतः मनुष्य का स्वभाव क्रोधी होना निश्चित है। किंतु गुरू की पंचम दृष्टि पूर्ण रीति से मेष राशिपर पड़ती है और गुरू ब्राह्मण जाति का सौम्य ग्रह है इसलिये इस मनुष्य का क्रोध शीघ्र ही शांत होना चाहिये यह भी स्पष्ट है। (२) मेष राशि का स्थान मंगल और इसका वर्ण लाल है अतः रक्त दोष से फोड़े-फुंसी चीर-

फाड़ आदि का दाग मस्तक पर अवश्य होना चाहिये। यह राशि भार्याभाव में हैं और इसपर गुरू और मंगल दोनों की पंचम तथा अष्टम दृष्टि है। अतः इसकी स्त्री का स्वभाव भी इसी के स्वभावानुसार होना निश्चित है। यह भाव (स्थान) भार्या का है और चंद्र स्थित है इसलिये स्त्री का रंग गौर वर्ण का होना चाहिये। चंद्र यह सुस्वरूप गौर वर्ण का ग्रह है और इसकी सप्तम दृष्टि लग्न पर है अतः स्त्री पुरुष दोनों का सुन्दर होना निश्चित है। इसी तरह राशि और ग्रह दोनों के गुण धर्म स्वभावादिका विचार कर फलित बर्तने से भविष्य के फलादि का ज्ञान किया जाता है। राशि से मनुष्य की इच्छा, प्रकृति और स्वभावादि का तथा उसके स्वामी से गुण धर्मादि का विचार किया जाता है। यही फल युति तथा दृष्टि का भी मिलता है। राशि के तत्व दिशा और स्थान पर से चोरी गई हुई वस्तु का विचार किया जाता है परंतु फलित बर्तते समय प्रत्येक (१) भाव, (२) राशि (३) स्वामी (४) स्थित ग्रह (५) शुभाशुभ दृष्टि (६) उच्च नीच राशि (७) अन्य ग्रहों की युति आदि का विचार कर लेना आवश्यक है।

द्वादश राशि के गुणधर्म स्वभाव

जन्म समय यदि चंद्र पूर्ण बलवान हो तो प्रत्येक राशि के मनुष्य को निचे लिखे अनुसार फल मिलना चाहिये जैसे :—

मेष—समाज में स्थान, मजबूत शरीर, अस्थिर निद्रा, धन मित्र तथा जीवन साधन, असमाधानकारक, प्रवासी।

वृषभ—दयालु, क्षमाशील, स्थिरनिवास, मित्र व संपत्ति सुख, अशक्त शरीर।

मिथुन—उदार, कृतज्ञ, उत्साही, वैराग्य वृत्ति, रक्तदोष पीड़ा परंतु निरोगी ।

कर्क—निरोगी, नाजुकशरीर, मंदाग्नि, मित्र और धन साधारण, मतलबी, मधुरभाषी, लोगों के सिरपर से हाथ फेरनेवाला ।

सिंह—सशक्त, दयावान, स्पष्ट तथा जोरदार बात करनेवाला, प्रभावशाली भाषण, स्थिर धन, मित्र सुख किंतु रक्त दोष ।

कन्या—उदार, दानी, निरोगी, आंवदोष, आंतड़ियों की बिमारी ।

तुला—समाज में स्थान, वाणिज वृत्ति, नेत्र दोष, पीठ और कमर में दर्द किंतु निरोगी ।

वृश्चिक—दृढ़ शरीर, दयालु, स्थिर धन, गुप्तरोग, स्वतंत्र धंदा।

धन—उत्साही, निरोगी, उदार और धार्मिक बुद्धि, रक्त और त्वचा दोष, फेफड़े की बिमारी ।

मकर—रोगी, चंचल मन, असमाधानकारक जीवन साधन, अपचन, त्वचा दोष, वातरोग ।

कुंभ—उत्तम स्वास्थ्य, अस्थिरनिवास, नेत्र दोष, रक्त की कमी, रोग दूर करने का सामर्थ्य चक्कर ।

मीन—संसर्ग जन्म रोग की संभावना, उदारवृत्ति, उत्साही, पैर की बिमारी ।

उपर दिये हुए फल का संपूर्ण रीति से मिलना अथवा न मिलना यह ग्रहों की युति, दृष्टि और योग पर भी निर्भर है । शुभाशुभ ग्रहों की युति और दृष्टि के अनुसार लिखे हुए फलों में कमी बेशी होना संभव है ।

तारक मारक-राशि

मेष, सिंह, धन—ये परस्पर सहायक राशि हैं। इन राशियों में यदि ग्रह बलवान हों तो मनुष्य सत्ताधिकारी होता है। ये राशि उत्कर्षदायक, महत्व दर्शक, उच्च नीच स्थिति निर्माण करने वाली हैं।

वृषभ, कन्या, मकर—ये सामान्य राशि हैं। इस राशि के मनुष्य स्वार्थी वृत्ति के होते हैं। इस राशि के मनुष्य से उँचे दर्जे के सार्वजनिक कार्य होना बहुधा असंभव है।

मिथुन, तुला, कुंभ—ये राशि प्रगति के दृष्टि से सामान्यतः स्थिर परंतु चिकित्सक वाद-विवाद करने के दृष्टि से उत्तम और बौद्धिक राशि हैं।

कर्क, वृश्चिक, मीन—इस राशि के लोग सार्वजनिक आंदोलन में भाग लेनेवाले, समाज पर छाप रखने वाले नेता, मुत्सद्दी, मार्ग दर्शक, सल्लागार, चतुर लोगों की अनुकूलता प्राप्त करनेवाले स्वतंत्र वृत्तिवाले और मार्मिक ग्रंथकर्ता होते हैं।

उपर लिखे हुए फल यदि राशि में केवल चंद्र स्थित हों और अन्य ग्रहों की युति व दृष्टि न हो तभी मिलना संभव है अन्यथा कुछ अंतर पड़ता है।

राशि घातक चक्र

द्वादश राशि के प्रत्येक मनुष्य को घातक चक्र में दिये अनुसार प्रत्येक तिथि, वार, नक्षत्र, प्रहर, चंद्र, मास घातक है। अतः मनुष्य को चाहिये कि वे अपना कोई भी इष्ट और शुभ कार्य घातक समय या मुहुर्त पर आरंभ न करें अन्यथा उन्हें पश्चात्ताप करने का प्रसंग अवश्य आवेगा। जैसेः—

ग्रह विचार

आकाश में स्थिर तेजोगोल को तारे कहते हैं और अस्थिर अर्थात् सूर्य की परिक्रमा करने वाले तेजोगोल को ग्रह कहते है। इस नियम के अनुसार आठ ग्रह और दो पान (उप) ग्रह है जैसे–सूर्य, चंद्र, बुध, पृथ्वी, शुक्र, मंगल, गुरू, शनि, राहु, केतु। इन ग्रहों के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों के संशोधकों ने ई.स. १७८१ और १८४६ में क्रम से हर्शल और नेपच्यून इन दो ग्रहों का शोध किया है। परंतु हिंदी पंचांगों में इनका कोई उल्लेख न होने के कारण यह सिद्ध होता है कि इस देश के ज्योतिषी इन दो ग्रहों से आजतक पूर्णतया परिचित न हुए। अतः इन दो नये ग्रहों के संबंध में यहां अधिक लिखना अनावश्यक है।

प्रत्येक मनुष्य फलित निश्चित करते समय प्रथम आकाशस्थ ग्रहों का अधिक विचार करता है और इसके पश्चात पृथ्वी की परिस्थिति का और इसी कारण मुख्यतः सात ग्रह और दो उपग्रह ऐसे नवग्रह का विचार अधिक किया जाता है। पृथ्वी की परिक्रमा करते समय चंद्र अपना मार्ग सूर्य और पृथ्वी इन दोनों के मध्य रेखा पर से क्रमण करता है। उस रेखा के दोनों बाजू के दो बिंदुओं को राहु और केतु कहते हैं। और इसी कारण ये दोनों उपग्रह कुंडली में परस्पर सप्तम स्थान में रहते हैं। राहू चंद्र को और केतु सूर्य को ग्रासता है इसलिये ये रवि और चंद्र के शत्रु कहलाते हैं। ग्रहों का राश्यांतर पंचांग के कोष्टक में लिखा जाता है जैसे धनेगुरुः, सिंहेराहुः, मेषेशनिः, धनुष्यर्कः (अर्क-रवि). कर्केज्ञः (ज्ञ–बुध) आदि।

ग्रह और राशि का स्वामीत्व संबंध

सप्त ग्रहों को द्वादश राशि के स्वामीत्व का अधिकार प्राप्त होने का कारण जानने के पूर्व उनके आकाशस्थ स्थिति और गति का ज्ञान होना आवश्यक है जो मार्जिन में दिया है।

प्रत्येक ग्रह नीचे लिखे क्रमसे एक दूसरे से दूर हैं उदाहरणार्थ सूर्य से बुध, बुध से शुक्र, शुक्र से मंगल, मंगल से गुरु, गुरु से शनि, शनि से हर्शल और हर्शल से नेपच्यून।
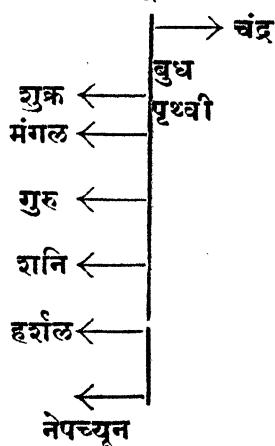
परंतु इन ग्रहों की गणना मंगल से प्रारंभ की गई। इस क्रम की गिनती में मंगल को यह बहुमान क्यों दिया गया यह लिखना कठिन है तथापि हमारा यह व्यक्तिगत मत है कि अन्य ग्रहों से मंगल पृथ्वी के समीप होने के कारण और ग्रहों का परिणाम पृथ्वीपर जिस क्रम से पड़ता हो उस क्रम का मनुष्य को पूर्ण ज्ञान रहे इसी हेतु से विद्वानों ने यह क्रम निश्चित किया हो यह संभव है। और इसी क्रमसे अंक गिनने से सप्तग्रहों को द्वादश राशियों का स्वामित्व किस तरह प्राप्त हुआ यह प्रत्येक मनुष्य के ध्यान में सहज आ सकता है।

ग्रह	मंगल	शुक्र	बुध	चंद्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल	गुरु	शनि	शनि	गुरु
राशि	१,	२	३,	४,	५,	६,	७,	८,	९,	१०,	११,	१२,

सूर्य से बुध, चंद्र, मंगल और शुक्र अत्यंत समीप होने के कारण उसकी उष्णता के प्रभाव से ये ४ ग्रह प्रचुर गति से अपना मार्ग क्रमण करते हैं अंतः ये शीघ्र गति ग्रह कहलाते हैं। परंतु गुरु और शनि ये दोनों ग्रह सूर्य से अत्यंत दूर होने के कारण अपना मार्ग मंद गति से क्रमण करते हैं अतः ये मंद गति ग्रह कहलाते हैं। इसी कारण से भ्रमण करने वाले ग्रहों की गति में कम या अधिक समय का शास्त्र में लिखा जाना उचित ही है। आकाश के बारह भाग अर्थात् राशि का भ्रमण करने के लिये जो समय ग्रहों को लगता है वह उनके शीघ्र या मंद गति पर अवलंबित है।

ग्रहों का भ्रमण गति काल

प्रत्येक ग्रह को एक राशि क्रमण कर दूसरी राशि में प्रवेश करने के लिये निचे लिखे अनुसार समय लगता है:—

सूर्य	—	१ महीना
चन्द्र	—	२। दिन
मंगल	—	१॥ महीना
बुध	—	१ महीना
गुरु	—	१३ महीना
शुक्र	—	१ महीना
शनि	—	३० महीना
राहु	—	१८ महीना
केतु	—	१८ महीना
हर्शल	—	७॥ वर्ष
नेपच्यून	—	१३॥। वर्ष

साधारण नियमों के विरुद्ध कभी कभी ग्रह किसी राशि में नियोजित समय से कम या अधिक समय तक रहते हैं इसलिये पंचांगों में स्तम्भी, वक्री और मार्गी आदि लिखा रहता है।

ग्रहों का चक्र

सूर्य और चन्द्र को छोड़कर बाकी के पांच प्रत्येक ग्रह दो राशि के स्वामी हैं। अर्थात् सूर्य[५] चंद्र[४] मंगल[१,८] बुध[३,६] गुरु[९,१२] शुक्र[२,७] शनि[१०,११]। ग्रहों के गुण धर्म स्वभावादि का वर्णन कोष्टक में किया है किन्तु उनके अनेक अवस्थाओं का संक्षिप्त में यहां वर्णन कर देना आवश्यक है।

स्वगृह—कोई भी ग्रह यदि अपनी राशि में स्थित हो तो उसे स्वराशी या स्वगृह ग्रह कहते हैं।

मूल त्रिकोण—पंचग्रहों में से प्रत्येक ग्रह को दो राशि में से जो राशि उसे अधिक प्रिय हो उसे मूल त्रिकोण राशि कहते हैं और दूसरे राशि को स्वराशि या स्वगृह कहते हैं।

उच्च राशि—स्वगृह और मूलत्रिकोण ग्रह के अपेक्षा उच्च राशि के ग्रह अधिक बलवान होते हैं। और वे अधिक ऊँचा फल देने के लिये समर्थ रहते हैं।

नीच राशि—उच्च राशि से ग्रह जब सातवीं राशि में हो तो उसे नीच राशि का ग्रह कहते हैं।

उच्चांश—जन्म समय यदि ग्रह ३० अंश में से उच्चांश में हो तो उसे उच्चांश ग्रह कहते हैं।

नीचांश— ... ... नीचांश ग्रह कहते हैं।

ग्रहों की स्थिति के अनुसार वे स्वगृह, मूलत्रिकोण, उच्च या

नीच राशि, उच्च या नीच अंश इस क्रम से शुभाशुभ फल देने के लिये समर्थ होते हैं। ऐसे जन्म ग्रहों से गोचर के ग्रह जब उसी स्थान में युक्त हो उतने ही अंश पर आने के पश्चात् वे अपना शुभाशुभ फल देते हैं यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

ग्रहों का स्थूल फल विचार

ग्रहों का फलित वर्तते समय पहले उनके भाव, राशि, अंश, युति और दृष्टि आदि का फल ध्यान में लाना चाहिये। मान लो कि किसी मनुष्य की कुंडली में चंद्र वृश्चिक राशि में अष्टम स्थान पर है अर्थात् वह वृश्चिक राशिवाला मनुष्य है तो उसका फल किस तरह कथन करना चाहिये।

कोष्टक में दिये अनुसार चंद्र यह मन का द्योतक है। वृषभ राशि का चंद्र उच्च राशि का और वृश्चिक राशि का नीच का कहलाता है। वृषभ राशि से वृश्चिक सातवी राशि होने के कारण वह नीच राशि हुई। इस राशि का स्वामी मंगल यह अशुभ ग्रह है। इसीलिये इस मनुष्य की मानसिक स्थिति सदैव पीड़ित रहेगी अर्थात् उसका मन सदा सर्वदा चिंतित, असंतुष्ट और अस्थिर रहेगा। यदि इस पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथवा अशुभ ग्रह की दृष्टि है तो उसी प्रमाण से उसका फल और यशापयश का निर्णय निर्भर है। इसे भी देख लेना चाहिए। इसी तरह ग्रहों के विचार से मनुष्य का मन, उसकी प्रकृति, दिन या रात्रि में कार्य करने की प्रवृत्ति, बलाबल, किस दिशा से हानि या लाभ होगा आदि बातों का पता प्रश्नानुसार विचार पूर्वक फलित वर्तने से मनुष्य को फल मिलेगा इसमें संदेह नहीं। जन्म कुंडली में जो ग्रह उँचा या

नीचा हो और जिस २ स्थान पर उसकी शुभ या अशुभ दृष्टि हो उसी के अनुसार उसे आजन्म शुभाशुभ फल मिलना निश्चित है।

ग्रहों की दृष्टि

प्रत्येक ग्रह जिस स्थान में स्थित हों उस स्थान से वे ७ वें स्थान को...पूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

५ और ९ वें स्थान को $\frac{3}{4}$ दृष्टि से देखते हैं।

४ ,, ८ वें ,, $\frac{1}{2}$,,

३ ,, १० वें ,, $\frac{1}{4}$,,

परंतु नीचे लिखे ग्रहों की संपूर्ण दृष्टि सप्तम स्थान के सिवाय अन्य स्थानों पर भी पड़ती है जैसेः—

मंगल की ४ और ८ वें स्थान में दृष्टि

गुरु ,, ५ ,, ९ ,, ,,

शनि ,, ३ ,, १० ,, ,,

दृष्टि का फल ग्रहों के गुण, धर्म, स्वभावानुसार बहुधा मिला करता है। किंतु शनि जिस स्थान में स्थित हो उस स्थान का रक्षण करता है और गुरु जिस स्थान में स्थित होगा उस स्थान का अशुभ फल देगा। अतः गुरु की दृष्टि अत्यंत शुभ किंतु स्थान महात्म्य अशुभ और शनि की दृष्टि अत्यंत अशुभ किंतु स्थान महात्म्य सुरक्षित समझना चाहिए।

ग्रहों के नैसर्गिक शत्रु मित्र ग्रह

कोई भी ग्रह किसी दूसरे ग्रह मे २-३-४ और १२-११-१० भाव में स्थित हो तो वह उसका तात्कालिक मित्र और ५, ६, ७, ८, ९ भाव में हों तो तात्कालिक शत्रु होता है। इस प्रकार

यदि कुंडली में नैसर्गिक और तात्कालिक रीति से ग्रह परस्पर मित्र हों तो वे आदिमित्र कहलाते हैं जिसका फल श्रेष्ठ होता है और यदि वे शत्रु हों तो आदिशत्रु कहलाते हैं जिसका फल अशुभ होता है। ग्रहों के नैसर्गिक शत्रुमित्रत्वका संबंध ग्रह चक्र में दिया है।

तारक मारक ग्रह

रवि	का	मारक	ग्रह—	श. रा. है बाकी के	तारक हैं।
चंद्र	,,	,,	,,	बु. श. रा. के.	,,
मंगल	,,	,,	,,	शु. श. रा. के.	,,
बुध	,,	,,	,,	चं. मं. गु.	,,
गुरु	,,	,,	,,	शु. रा. बु.	,,
शुक्र	,,	,,	,,	र. मं. गु. रा.	,,
शनि	,,	,,	,,	र. चं. मं.	,,

उदित ग्रह

कोई भी ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हुए उसके पीछे जाने के पश्चात् जब मार्ग क्रमण कर पृथ्वी के लोगों को दिखाई देता है तो उसे उदित ग्रह कहते हैं।

अस्तंगत ग्रह

कोई भी ग्रह परिक्रमा करते हुए सूर्य के पीछे जाने के कारण जब वह पृथ्वी पर नहीं दिखाई देता तब उसे अस्तंगत ग्रह कहते हैं।

वक्री ग्रह

कोई भी ग्रह एक राशि से दूसरी राशि में जाने के पश्चात्

जब फिर से अपनी पूर्व राशि में वापस आता है तब उसे वक्री-ग्रह कहते हैं।

मार्गी ग्रह

वक्री होने के पश्चात् जब ग्रह पुनः अपने आगे की राशि में जाता है तब उसे मार्गी ग्रह कहते हैं।

स्तंभी ग्रह

कोई ग्रह किसी भी राशि में नियोजित समय से अधिक समय तक यदि स्थित रहता है तो उसे स्तंभी ग्रह कहते हैं।

ग्रह कर्तरी

शुभ ग्रह के द्वितीय और द्वादश भाव में जब अशुभ ग्रह स्थित हो तो उसे अशुभ कर्तरी योग ग्रह कहते हैं जिसका फल अनिष्ट माना गया है।

ग्रहों का भाग्योदय काल

ग्रह जन्म कुंडली में यदि उच्चफलदायी हों तो वे अपने महादशा काल में उच्च फल देते हैं, इसमें संदेह नहीं। किंतु भाग्य का उदय करने का उनका समय भी नियोजित है और वह ग्रह चक्र में दिया है।

ग्रहों का शरीर अंग से सम्बन्ध

शास्त्रकारों ने अनुभव के पश्चात् मानव शरीर के सात भाग किये हैं और इन सात भागों पर सात ग्रहों का स्वामित्व नीचे लिखे अनुसार है। जैसे:—

१ सिर से मुख भाग तक का स्वामी—			सूर्य है
२ गले ,, हृदय	,, ,, ,,	,,	चंद्र ,,
३ पेट ,, पीठ		,,	मंगल ,,
४ हाथ और पांव		,,	बुध ,,
५ कमर से जंघा		,,	गुरु ,,
६ शिश्न ,, वृषण		,,	शुक्र ,,
७ घुटने ,, पेंडुली		,,	शनि ,,

इन ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति के अनुसार प्रत्येक मनुष्य के नियोजित अंग पर उनका परिणाम होना निश्चित है किंतु इसका पूर्ण अनुभव मिलना अथवा न मिलना यह अन्य शुभाशुभ ग्रहों के युति, दृष्टि, उच्च या नीच राशि और अंश के फल पर भी निर्भर है ।

ग्रहों का बलाबल समय

प्रत्येक ग्रहों का फल देने का पक्ष निश्चित है और वह निचे लिखे अनुसार है जैसे:—

शुभ ग्रह—शुक्ल पक्ष में बलवान हो अपना फल देते हैं और
पाप ग्रह—कृष्ण ,, ,, ,, ,, ,,

चन्द्र का शुभाशुभ फल समय

जन्म चंद्र अथवा राशि से अन्य गोचर ग्रहों का शुभाशुभ फल विचार करने के पूर्व यह ध्यान में लाना चाहिये कि जन्म समय चंद्रमा अथवा राशि की क्या स्थिति है । लग्न से यदि चंद्र बली हो तो जन्म राशि के अनुसार अन्य ग्रहों का फल मिलेगा अन्यथा लग्न से । किंतु लग्न और राशि में जो बली हों उसके

अनुसार ही अन्य शुभाशुभ ग्रहों का फल मिलना निश्चित है। इसलिए चंद्र का प्रथम विचार करना आवश्यक है जैसे:—

(१) शुक्ल पक्ष प्रतिपदा से दशमी तक चंद्र मध्यम बली समझा जाता है।

(२) शुक्ल पक्ष एकादशी से कृष्ण पक्ष पंचमी तक चंद्र पूर्ण बली समझा जाता है।

(३) कृष्ण पक्ष षष्ठी से अमावस्या तक चंद्र निर्बल समझा जाता है।

मध्य बली चंद्र का फल—सर्व साधारण माना गया है
पूर्ण बली ,, ,, ,, ,, श्रेष्ठ ,, ,,
निर्बली ,, ,, ,, ,, अनिष्ट ,, ,,

चंद्र शुभ ग्रह होते हुए यदि वह निर्बल हो तो उसे अशुभ फलदायी समझना चाहिये।

मनुष्य का जन्म यदि उत्तरायण में हुआ हो तो रवि और चंद्र इस अयन में अधिक बली रहते हैं और वे श्रेष्ट फल देने को समर्थ होते हैं। यदि जन्म दक्षिणायन में हुआ हो तो वे निर्बल होने के कारण अनिष्ट फल देते हैं।

ग्रहों के बल

जन्म कुंडली में कोई भी ग्रह केंद्र व त्रिकोण भावों में अपने उच्चांश, उच्चराशि, मूल त्रिकोण, स्वगृह, मित्र राशि, शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो वह इस क्रमसे बली कहलाता है अन्यथा उसे अनिष्ट फलदाई समझना चाहिये। बुध, शुक्र और गुरु यदि ये ग्रह कुंडली के केन्द्र भाव में हों तो वे सौ, हजार, व लाख इस क्रम से अनेक दोषों का क्षालन करते हैं। गुरु यदि केन्द्र

भाव में हो तो शास्त्रकारों ने कहा है कि "किं कुर्वंति ग्रहाः सर्वे यस्य केंद्री बृहस्पतिः । मत्त मातंग यूथानां भिनत्त्येकोऽपि केसरी" अर्थात्–जिसके कुंडली के केंद्र में यदि गुरु हो तो अन्य ग्रह क्या कर सकते हैं जैसे कि एक ही सिंह मस्त हाथियों के समूह को छिन्न भिन्न कर सकता है । भाव यह है कि जिस प्रकार कुंटुंब के मुखिया पर अन्य सदस्यों का सुख दुःख निर्भर है उसी तरह कुंडली के मुख्य ग्रह पर अन्य ग्रहों का शुभाशुभ फल देना निर्भर है ।

ग्रहों की अवस्था

ग्रहों के शुभाशुभ फल जानने के हेतु शास्त्रकारों ने इनकी अवस्था या परिस्थिति का ज्ञान भी प्राप्त कर रक्खा है और वह निचे लिखे अनुसार है :—

उच्च राशि	का ग्रह	दीप्त	अवस्था	का ग्रह	कहलाता है
स्व राशि	,,	स्वस्थ	,,	,,	,,
मित्र राशि	,,	हर्षित	,,	,,	,,
शुभ राशि	,,	शांत	,,	,,	,,
नीच राशि	,,	दीन	,,	,,	,,
शत्रु या पाप	,,	पीडित	,,	,,	,,
उदय राशि	,,	शक्त	,,	,,	,,
अस्तंगत ग्रह	,,	लुप्त	,,	,,	,,

ग्रहावस्था फल

(१) दीप्त अवस्था–सुस्वरूप, कांतिमान, बुद्धिमान, तीर्थों में जाने वाला और शत्रु का नाश करने वाला होता है ।

(२) स्वस्थ अवस्था-विजयी, राज पूजित, कीर्तिमान, सदा प्रसन्न, मिलकियत कमाने वाला और ज्योतिष जानने वाला होता है।

(३) हर्षित अवस्था-धर्मात्मा, सदाचारी।

(४) शांत अवस्था-तेजस्वी, शांत व धनयुक्त।

(५) दीन अवस्था-बुद्धिहीन परस्त्री आसक्त।

(६) पीड़ित अवस्था-चिंतायुक्त, मानसिक दुःख, रोगी।

(७) शक्त अवस्था-निरोगी, सुंदर, मधुर भाषी, प्रशंसनीय।

(८) लुप्त अवस्था-अधर्मी, रोगी, शत्रु पीड़ित।

जन्म समय के ग्रहों की अवस्था के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को आजन्म सुख या दुःख मिलता है यह अनुभव सिद्ध बात है और इसपर अविश्वास करना वृथा है।

ग्रहों की परस्पर शक्ति

प्रत्येक ग्रह एक दूसरे से नीचे लिखे क्रम से बलवान होते हैं जैसे:—

(१) शनि से मंगल (२) मंगल से बुध (३) बुध से गुरु (४) गुरु से शुक्र (५) शुक्र से चंद्र (६) और चंद्र से सूर्य। अर्थात शनि सब ग्रहों से निर्बल और सूर्य बली है। जन्म समय या गोचर समय जब दो या अधिक ग्रह एक ही स्थान में स्थित हों तो उनमें से कौन अधिक बली है और उनमें से उनकी राशि, अंश, दृष्टि के अनुसार किस ग्रह का अधिक फल मिलेगा यह जानने के लिये इस क्रम को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

ग्रहों के मारक ग्रह

सूर्य से शनि, शनि से मंगल, मंगल से गुरु, गुरु से चंद्र,

चंद्र से शुक्र, शुक्र से बुध, बुध से चन्द्र इस तरह सर्व ग्रह एक दूसरे के फल को नष्ट करते हैं फलित निर्णय करते समय यदि शनि अशुभ फल दायी हो और सूर्य शुभ फल दायी हो तो शनि का दोष मिट सकता है। इसी लिये मारक ग्रह का विचार कर फलित निर्णय करने से ठीक फल मिलेगा।

दोष शामकग्रह

राहु का दोष बुध, राहु बुध का शनि, राहु बुध शनि का मंगल रा० बु० श० मं० का शुक्र, रा० बु० श० मं० शु० का गुरु, रा बु० श० मं० शु० गु० का चंद्र और इन सातों ग्रह के दोष को विशेष कर उत्तरायण का रवि नाश करता है।

ग्रहों का फल-काल

प्रत्येक ग्रह जिस राशि में स्थित हो उसका फल आयुष्य में कितने समय तक मिलेगा यह नीचे लिखा है और इसका उपयोग भविष्य कथन करते समय अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

उच्च राशि का ग्रह—आजन्म उत्तम फल

स्वराशि का ग्रह—कुछ कम प्रमाण से आजन्म उत्तम फल

मित्र राशि का ग्रह—इससे किंचित् कम प्रमाण से

सम राशि का ग्रह—इससे भी कम प्रमाण से

शत्रु राशि का ग्रह—आजन्म निष्फल

नीच राशि का ग्रह— ,, अशुभफल

ग्रहों की भ्रमण पद्धति

प्रत्येक ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते समय मेषराशि से वृषभ, वृषभ से मिथुन, कुंभ से मीन इस क्रम से अपना मार्ग क्रमण करते

हैं किन्तु राहु और केतु ये दोनों उपग्रह उलटे मार्ग से भ्रमण करते हैं जैसे:—मीन से कुम्भ, कुम्भ से मकर, वृषभ से मेष। हम पहिले लिख चुके हैं कि सूर्य से बुध का स्थान आकाशस्थ ग्रहो में पहिला और शुक्र का दूसरा है अतः ये दोनों ग्रह कुंडली में सूर्य से एक या दो भाव आगे अथवा पीछे स्थित रहते हैं। जन्म कुण्डली में बुध या शुक्र सूर्य से एक या दूसरे भाव से अधिक अन्तर पर हों तो कुण्डली गलत है यह समझना चाहिये।

सुख दुःख का कारक ग्रह

मानव जीवन प्रायः दुखमय होने के कारण प्रत्येक मनुष्य के मन में सुख की अभिलाषा होना अत्यंत स्वाभाविक है, जगत् में प्रत्येक मनुष्य की सुख की परिभाषा भिन्न भिन्न है अतः किस ग्रह से किस प्रकार के सुख का विचार करना चाहिये यह लिखना आवश्यक है जैसे—

गु० शु०से—सांपत्तिक स्थिति व द्रव्य लाभ का विचार
शुक्र से—स्त्री व प्रापंचिक सुख ”
र० चं० से—शारीरिक व मानसिक सुख ”
गुरु० से—बुद्धि, विद्या व संतति ”
र०गु०श० से—नौकरी, अधिकार राजसन्मान
बुध-शुक्र से—व्यापार व देन लेन के धन्धे का
मंगल से—साहस, पराक्रम व यश का ”

ऊपर लिखे किसी भी प्रकार के सुख का विचार करने के पहले कुंडली देखते ही इन ग्रहों की शुभाशुभ स्थिति का विचार करना चाहिये और इनके शुभाशुभ स्थिति के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को हानि या लाभ होना निश्चित है। इन ग्रहों के

फल का प्रमाण जन्म कुंडली में उनके उच्च या नीच राशि और अंश, युति और दृष्टि आदि पर निर्भर है। यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये अन्यथा मनुष्य को निराश होना पड़ेगा।

कारक ग्रह

प्राणी मात्र का सुख दुःख जिन ग्रहों के प्रभाव पर निर्भर है उस कार्य के कर्ता ग्रहों को कारक ग्रह कहते हैं। प्रत्येक ग्रह का कार्य भिन्न भिन्न है और वे प्रत्येक घटनाओं पर अपना अधिकार रखते हैं अतः वे किस कार्य के अधिकारी या कारक ग्रह हैं इसका प्रथम विचार करना चाहिये जैसेः—

रवि—पिता का सुख, शरीर सुख, पूर्व पुन्याई, मनकी रुचि, राज कार्य, बड़े भाई का सुख, वैद्यक शास्त्र विद्या, नजदीक का प्रवास, श्रीमान् और अधिकारी लोगों की मित्रता, राजविद्या, राजा से मानसन्मान, श्रेष्ठ अधिकार, नौकरी, (राजमंडल, सत्ताधारी लोग राज्याधिकारी वर्ग, लोकमान्यता, प्रसिद्ध नेता, राष्ट्र के कर्णधार, बड़ी संस्थाओं के कर्णधार, अत्यन्त श्रीमान, जागीरदार, दीवान) आदि का कारक ग्रह है।

चंद्र—मातृ सुख, सौन्दर्य सुख, यश प्राप्ति, ज्योतिष विद्या की रुचि, दूर का प्रवास, जलप्रवास, मन, बुद्धि, स्वास्थ्य, राजैश्वर्य संपति, सुंगंधी वस्तुओं का शोक, वाहन सुख, द्रव्य संचय. धन्दे में उन्नति (प्रजापक्ष, जनता, सामान्य लोग, जनता की वृत्ति, प्रजा पक्षीय नेताओं के मनः स्थिति तथा स्त्री) आदि का कारक ग्रह है।

मंगल—साहस, लघु भ्राता सुख, पराक्रम, धैर्य, साहस, शौर्य, अभिमान, शत्रु, कीर्ति, बुद्धि के अचाटकार्य, युद्धनेतृत्व,

धनुर्विद्या, रोग, औदार्य, धातु विद्या, रक्तविकार, आपरेशन, शस्त्रक्रिया, (सेनापति, स्वाभिमानी, कर्तबगार, युद्ध, लड़ाई, अग्निप्रलय, शारीरिक सामर्थ्य का घमंड, दावेदार) आदि का कारक ग्रह है ।

बुध—बंधु सौख्य, बुद्धि, विद्या, वक्तृत्वशक्ति प्रवीणता, मित्र सुख, मनःशांति, संपत्ति, स्वतंत्रधंदा, वाणी, लेखनकला, वेदांत-विषय की रुचि, कला कौशल्य, ज्योतिषविद्या की रुचि तथा ज्ञान, गणितशास्त्र, लोकानुकूलता, (विद्वत्ता, लेखक, ग्रंथकार, वक्ता, संपादक, मुद्रक और प्रकाशक, परराष्ट्रीय मंत्री, कारभारी, व्यापारी, सराफी का धंदा, ज्योतिषी, वकीली) आदि का कारक ग्रह है ।

गुरु—संतति, संपत्ति, ज्ञान, अधिकार, ऐश्वर्य, राजसन्मान, लोकसंग्रह, वेदांतज्ञान, धंदा, उपजीविका, मंत्रविद्या, तीव्र बुद्धि, ग्रहणशक्ति, धर्माभिमानी, ग्रंथकर्ता, स्थिरवृत्ति, राजकारण, परो-पकारी, धार्मिककृत्य, वाहनादि सुख, धर्मगुरु, संस्कृतविद्या, व्याकरण, शास्त्रज्ञ, अधिकारी, (न्यायाधीश, वकील, श्रीमान व्यापारी, बड़ी पेढ़ी का मालक, जागीरदार, दीवान, संस्थापिक, सराफ, सोने का व्यापारी, लेन देन का धंदा, व्यवस्थाप्रिय, शांति-प्रिय) आदि का कारक ग्रह है ।

शुक्र—स्त्री व प्रापंचिक सुख, कवित्व, गायनवादनकला में निपुण, प्राचीन संस्कृति का अभिमानी, सौन्दर्य के प्रति प्रीति, विषय सुख लुप्त, सुगंधी पदार्थ का शौकीन, संपत्ति का मानव रक्षण, कला कौशल्य प्रिय, द्रव्यलाभ, स्वतंत्रधंदा, राजाश्रय, राज्यकारभार का ज्ञान, अलंकार, यांत्रिक विद्या, अष्टसिद्धि, साहित्यशास्त्र, व्यापार, वाहनादि सुख, (हीरे, मोती, शेअर,

कपास देनलेन का व्यापारी ऐश आरामी, सट्टा शर्यत करनेवाला, देश की संपत्ति) आदि का कारक ग्रह है ।

शनि—आयुष्य, दुष्ट बुद्धि, लोभ, मोह, घातकर्म, रोगी, सरकारी आरोप, राजदंड, कैद, उद्योग, हानि, दास्यत्व, कायदाप्रिय व प्रवीण, नीच विद्या, लोगों के उत्कर्ष से अस्वस्थ (मजदूरवर्ग, खेती, खनिज, पदार्थ, कष्ट, गुप्त बातें, नौकरवर्ग, पराधीनता, कारस्थानी, विश्वासघात कामगार, छापखाने का मालिक, अशिक्षित) आदि का कारक ग्रह है ।

राहु—आजा का सुख, गारूड़ी विद्या, आकस्मिक घटनाएँ, भूतबाधा, अरुचि, राजछत्र, सन्मान आदि का कारक ग्रह है ।

केतु—तंत्र मंत्र, गुप्त विद्या, आजी का सुख, एकतंत्री विचार सरणी, मंत्र सिद्धि के प्रयत्न आदि का कारक ग्रह है ।

ऊपर लिखे फलादेश के अनुसार यदि अधिकार के संबंध से विचार करना हो तो जन्म कुंडली में रवि की स्थिति का विचार प्रथम करना आवश्यक होगा। क्योंकि इसकी शुभाशुभ स्थिति पर दशमेश और लग्नेश का फल निर्भर है । स्त्री और प्रापंचिक सुख का निर्णय करते समय केवल सप्तम स्थान के ग्रह तथा सप्तमेश के स्थिति से ही नहीं किंतु शुक्र जो इस सुख का दाता है उसका प्रथम विचार करना चाहिये। विद्या, संतत्ति, संपति का निर्णय करते समय केवल लग्नेश, धनेश, पंचमेश, नवमेश और लाभेश की ही स्थिति नहीं किंतु प्रथम गुरु के शुभाशुभ स्थिति और इन स्थानों पर उसकी दृष्टि का विचार करने से योग्य फल मिलेगा। आर्थिक सुख का विचार करते समय धनेश और लाभेश के साथ शु०चं० का विचार करना अत्यावश्यक है। दुःख, संकट,

रोग आयुष्यादि का ग्रह शनि है किंतु इन विषयों का विचार करते समय शनि के उच्च नीच राशि और अंश, शुभग्रहों की दृष्टि और युति योग का भी विचार करना आवश्यक है अन्यथा इच्छित फल का मिलना असंभव होगा। तात्पर्य यह कि किसी भी प्रश्न का विचार करते समय केवल उस भाव के ग्रह तथा स्वामी का विचार करने से ही नहीं किंतु उस विषय के कारक ग्रह, शुभाशुभ ग्रहों की युति तथा दृष्टि और स्थिति आदि के विचार पर इच्छित फल निर्भर है। अतः बिना कारक ग्रह के ज्ञान के सिवाय किसी बात का फलित निश्चित करना याने एक पैर पर मार्ग क्रमण करना है।

ग्रहों के अनुभवसिद्ध गुणधर्म स्वभाव

प्रत्येक ग्रह के गुणधर्म स्वभाव भिन्न २ हैं इसलिये फलित निर्णय तथा भविष्य कथन करते समय उनके गुण धर्मादि पर विचार कर लेना आवश्यक है।

रवि—स्पष्टवक्ता, धीरोदात्त, गहरेदिल का, वैद्यक विद्या की रुचि, गंभीर चेहरा, लोगों पर छाप रखनेवाला, यशस्वी, समाज अनुकूल, स्वार्थ के अपेक्षा परोपकार बुद्धि का प्राबल्य, शत्रु और विरोधी को अपने बुद्धि सामर्थ्य से पराभूत करनेवाला, द्रव्यतृष्णा कम, उदात्त विचार, दातृत्व शक्ति विशेष, कठोर वचन परंतु परिणामी हितकर, स्वार्थ त्यागी, ऐहिक सुख में उदासीन, मर्मज्ञ, स्थिर स्वभाव काल्पनिक, दूरदर्शी, साफ व्यवहार, कठोर किंतु सत्यभाषी, वर्तन शुद्ध अनुकरणीय, सुधारणाः प्रिय।

चंद्र—चैनी, चंचल, उतावला, ऐषआरामी, संसार में निमग्न, द्रव्याभिलाषी, शेखीखोर, स्त्रीलोलुप, कर्त्तव्यहीन, धंदा के विषय में

बेफिकिर, फालतू आत्मविश्वास, स्वार्थी, अस्थिरमन, व्यवहार में गोलमाल, मृदुभाषी, सौम्यवर्तन, उच्छृंखल, दिलदार, परंतु अविश्वासी अनियमित ।

मंगल—क्रूर और तेज स्वभाव, हट्टी, सनकी, हिंमतवान, मौके पर हार न माननेवाला, दीर्घोद्योगी, युक्ति से दूसरों को लड़ा कर अपना कार्य साध्य करनेवाला, उडाऊ, दिल्दार, बेफिकिर, खुला और सच्चा व्यवहार, धर्म पर कम श्रद्धा, सत्यभाषण प्रिय भविष्य की अपेक्षा वर्तमान काल को अधिक महत्व देनेवाला, अनियमित किंतु कार्य कुशल, कभी २ उद्योग में रत रहनेवाला, निष्कपटी, मित्रता योग्य, सुधार मतवादी परंतु आचार भ्रष्ट ।

बुध—सुस्वरूप, सुहास्यवदन, विनोदी, प्रफुल्लित, वाक्पटु, स्पष्ट व्यवहार, उत्साही, सदा आनंदी, धूर्त, वाहन का शौकीन, नौकर चाकर सुख, घोकेबाज, अविश्वासी, समय पर दगा देनेवाला चैनी, सौम्य स्वभाव, शांत परंतु अहंभावयुक्त, दूसरे पर विश्वास न रखनेवाला, पैसे संबंध से विचित्र व्यवहार, कुटुंब के विषय में बेफिकिर, धंदे में नवीन कल्पना, प्रयत्न में मन चिंतित और आतुर होते हुए चेहरे पर परिणाम न दिखा बेफिकर दिखनेवाला, उद्योग में निमग्न, प्रत्येक धंदे का ज्ञान, परंतु किसी धंदे में प्रवीण न होना, कारभारी, आध्यात्म विषय प्रेमी, शास्त्रीय गहन विषयों में निमग्न परंतु अपना हृदय छुपाकर रखनेवाला, कष्टसाध्य और धोके का कार्य करनेवाला ।

गुरु—वेदांतशास्त्र निपुण, शांत स्वभाव, गुण संपन्न, विद्वान, सत्कर्माचरणी, समाजकार्य में प्रवीण, परोपकार प्रिय, सत्याभिमानी, बुद्धिमान, संकट ग्रस्त, दूसरों की आपत्ति को अपने पर

ले मदत करनेवाला, राजदरबार में मान प्रतिष्ठा मिलानेवाला, कोमल दिल, गुणी, मृदुभाषी, सबको प्रिय, सत्य के लिये कष्ट सहन कर विजय प्राप्त करनेवाला, द्रव्य संबंध से उदार बुद्धि, प्रापंचिक सुख, ईश्वर भक्ति में निमग्न, धर्मशील, गरीबों का सहायक, नेक सलाह देनेवाला, धर्ममणि, अनीति के मार्ग से दूर रहनेवाला।

शुक्र—संगीत, काव्य, गायनवादन, कला कौशल्य प्रिय, चीनी के पदार्थों का संग्रह करने वाला, ऐंटबाज पोशाख स्वच्छता प्रिय, अस्थिर और आकुंचित मन, स्वार्थ बुद्धि, स्त्री विषय आशक्त, गुप्त कर्म, प्रापंचिक बातों में दिलचस्पी, धर्म पर श्रद्धा, व्यसनी लोगों की मित्रता, पर स्त्री रत, स्त्रियों को प्रिय, पाप बुद्धि, बेफिकर, अविचार, फजूल खर्ची, स्वतंत्र, व्यापार, धंदे में यश, ईश्वर पर श्रद्धा।

शनि—धूर्त, दुष्ट बुद्धि, आलसी, अव्यवस्थित, दुर्बल मन, मनमाना कारभार, मंदबुद्धि, आत्म-प्रशंसा और प्रतिष्ठा प्रिय, उद्योग रहित, नीच काम, विश्वासघात में आनंद मानने वाला, कलह प्रिय, बंधु विरोधी, विरोधात्मक आंदोलन का पुरस्कर्ता, मर्मभेदी बात करने वाला, असंतुष्ट, उद्योग शत्रु, उद्योग में अपयश, व्यसनी, स्त्री लोलुप, पाप पुण्य के विषय में निडर, दुराचरणी; समाज के हितावह कार्य में बाधा लानेवाला, स्वार्थ-प्रिय, परदोष देखने में निपुण, अविचारी, परद्रव्य हरण में प्रवीण, द्रव्य तृष्णा अधिक।

रा. के.—होशियार, कार्य साधक, अल्पभाषी, प्रचंड कल्पना शक्ति, उच्च महत्वाकांक्षा, राजकार्य और व्यवसाय में निमग्न, उद्योगरत, एक मार्गी, साधक बाधक उपायों का सोचने वाला,

क्लिष्ट और गूढ़ विद्या प्राप्त करने की रुचि, शांत और स्थिर स्वभाव, सयुक्तिक भाषण, स्पष्टवक्ता, निर्भीक, स्वार्थी, पराये दुःख में उदासीन, परोपकार की इच्छा, प्राचीन धर्माभिमानी, वादविवाद में कुशल, मित्रता के योग्य, उत्साही, समाज कार्यरत ।

उपर लिखे ग्रहों के गुण धर्म स्वभाव में "स्वार्थी—परोपकार की इच्छा" इस तरह के विरोधी भावयुक्त गुणों का वर्णन है इससे पाठकों का मन चकित होना स्वाभाविक है परंतु यह विरोध भाव फल किसी भी ग्रह के उच्च नीच या शुभाशुभ स्थिति पर अवलंबित है यह ध्यान में रखना चाहिये । शुभ ग्रहों के नीच स्थिति का अशुभ फल मिलना जिस तरह संभव है उसी तरह अशुभ ग्रहों के उच्च स्थिति का शुभ और नीच स्थिति का अशुभ फल मिलना भी निर्विवाद है अतः कुछ ग्रहों के गुण धर्म में परस्पर विरोधी फल का वर्णन शास्त्रकारों ने किया है ।

ग्रहों से रोग निदान-ज्ञान

सृष्टि कर्ता परमेश्वर ने प्रथम ग्रहों को निर्माण किया और इसके पश्चात् इस सृष्टि की उत्पत्ति की । ग्रहों का परिणाम इस पृथ्वी पर पड़ता है यह सिद्ध हो चुका है और किन ग्रहों से कौन से रोग उत्पन्न होते हैं इसका वर्णन भी इस शास्त्र के ज्ञाताओं ने किया है। अतः उसका संक्षिप्त में यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है । शारीरिक रोगों की उत्पत्ति का मुख्य कारण वैद्यक शास्त्र में कफ, वात, पित्त इन तीन विकारों के कम या अधिक प्रमाण पर होना लिखा है और प्रवीण वैद्य नाड़ी परीक्षा कर इनके आधार पर निदान निश्चित करते हैं । उसी तरह ज्योतिष शास्त्र में इन

त्रिविकारों की उत्पत्ति का मूल कारण ग्रह है यह मालूम हो सकता है और इन्हीं ग्रहों के आधार पर प्रवीण ज्योतिषी इन त्रिविकारों का निर्णय कर बिना नाड़ी परीक्षा के निदान निश्चित कर सकते हैं। वैद्यक शास्त्र के अनुसार प्रवीण वैद्य रोगों का निदान जिस तरह रोगी के जिह्वा, नेत्र, त्वचा, मल, मूत्र और नाड़ी आदि अष्ट विधि के आधार पर करते हैं उसी तरह ज्योतिष शास्त्र के अनुसार प्रवीण ज्योतिषी किसी भी रोग की परीक्षा और वर्णन जन्म कुंडली के भाव, राशि, ग्रह, योग, राशि और ग्रहों के शारीरिक भाव शुभाशुभ दृष्टि तथा युति आदि अष्ट विधि के बल कर सकते हैं। जैसेः—

कफ—गु. चं. वात कफात्मक शु. चं.

वात—श. रा. के. ने. त्रिदोषात्मक बु. ह.

पित्त—सू. मं. द्वन्द्वजदोष ग्रहानुरूप.

कुंडली के द्वादश भाव से शरीर के किस भाग में पीड़ा या रोग होना निश्चित है यह नीचे लिखा है जैसेः—

प्रथम भाव से—मुख, दांत, दाढा, गळा, जीभ, मस्तक में

द्वितीय ,, —दाहिने नेत्र में

तृतीय ,, — ,, कान, गर्दन, हाथ में

चतुर्थ ,, —पेट, खांदा

पंचम ,, —कमर के ऊपर का भाग, जाँघ

षष्ट ,, —गुह्यस्थान दाहिना पाँव

सप्तम ,, —पेट का मध्य भाग, नाभी

अष्टम ,, —गुह्यस्थान, पाँव (बांया)

नवम ,, —कमर के ऊपर का भाग ,,

दशम ,, —पेट खांदा ,,

एकादश,, —बायाँ हाँथ कान गर्दन

द्वादश ,, —बाँई आँख, पैर का तलवा

ऊपर लिखे द्वादश भावों में यदि पाप ग्रह स्थित हों या ग्रहों की युति, प्रतियुति, योग और दृष्टि हो तो शरीर के उन्हीं भागों में पीडा या रोग का होना निश्चित है। इसी तरह कुंडली के प्रथम भाव से वैद्य, चतुर्थ भाव से औषधि, षष्ट भाव से रोग और दशम भाव से रोग का साध्यासाध्य ज्ञान भी हो सकता है। जन्म कुंडली में चंद्र यदि ४-७-१२ या ४-८-१२ स्थान में हो तो यह योग रोगी और वैद्य दोनों के लिये यशप्रद नहीं ऐसा कहा गया है। लग्नाधिपति शुभ ग्रह हो तो वैद्य के लिये यशप्रद समझा जाता है परन्तु उसकी औषधि से लाभ होने के लिये रोगी का चतुर्थ स्थान का स्वामी शुभग्रह या शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट होना आवश्यक है। गोचर पाप ग्रह यदि २-६-८-१२ स्थानों पर से भ्रमण करते हों अथवा इन ग्रहों की इन स्थानों पर युति, प्रतियुति तथा दृष्टि योग होता हो या इन्हीं ग्रहों की महादशा और अन्तर्दशा हो तो अशुभ फल मिलना निश्चित समझना चाहिये। सारांश-प्रवीण वैद्य भी विना नाडी परीक्षा किये रोग का कारण नहीं बता सकता परन्तु प्रवीण ज्योतिषी बिना नाडी परीक्षा के शारीरिक रोगो का हाल और स्थान बता सकता है यह स्पष्ट सिद्ध होता है।

प्राचीन समय में प्रत्येक आयुर्वेदाचार्य को ज्योतिष शास्त्र का साधारण ज्ञान रहता था। जिसके आधार पर वे अपनी औषधि योग्य समय व रीति से रोगी को देकर वे कार्य में यश के भागी होते थे किन्तु वर्तमान समय में वैद्यक शास्त्र के ज्ञाताओं को इस

शास्त्र का कुछ भी ज्ञान न होने के कारण, वे अपने कार्य में पूर्णतया यश प्राप्त नहीं कर सकते। और उन्हें आङ्गलविद्या विभूषित वैद्यों पर मान्यता तथा विजय मिलाना कठिन हो रहा है अन्यथा आयुर्वेद के श्रेष्ठता का परिचय जनता को सदैव मिलता रहता इसमें सन्देह नहीं। मनुष्य के जीवन मरण जैसे विकट प्रसंगों पर इस शास्त्र का सच्चा उपयोग करने का अधिकार केवल आयुर्वेद के ज्ञानों को ही है किन्तु खेद से कहना पड़ता है कि पाश्चात्य देशों में मेडिकल एस्ट्रालाजीकल कालेजों द्वारा विद्यार्थियों को वैद्यक विद्या सिखलाने के वर्ग होते हुए इस देश के आयुर्वेदाचार्यों का तथा विद्या खाता के श्रेष्ठ अधिकारियों का ध्यान इस ओर आकर्षित नहीं होता। ज्योतिषशास्त्र और वैद्यकशास्त्र इन दोनों का सम्बन्ध कितना निकट है और आयुर्वेदाचार्यों को इस शास्त्र के ज्ञान से कितना लाभ मिलना सम्भव है यह पाश्चात्य लोगों ने ऊपर लिखे हुए संस्था द्वारा सिद्ध कर दिखाया है अतः अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

जन्म कुंडली में जो ग्रह अनिष्ट फलदायी हो और वह जितने अंश का हो उतने अंश में गोचर के पापग्रह या अशुभग्रह उसी ग्रह से जब युक्त तथा दृष्ट हो ऐसे समय पर अशुभ फल का मिलना तथा रोग का होना संभव है किन्तु किस ग्रह से कौन से रोग उत्पन्न होकर उसका शरीर पर क्या परिणाम होगा यह प्रथम जानना आवश्यक है। जैसे :—

रवि—शरीर के हृदय का भाग, मस्तक या मुख के पास दुःख, खून का बहाव, नेत्र दुःख, दृष्टि दोष, जीवन शक्ति की स्थिति, हृदयरोग, उष्णबात, बुखार, पित्त, मूर्छा, चक्कर, पीठ या पैरों में दर्द व व्यंग।

चंद्र—पेट के विकार, छाती का विकार, जलोदर, सर्दी का बुखार, स्त्रियों के रोग, प्रदर की बीमारी, आर्तव दोष, अपस्मार, मिर्गी, सहनशक्ति।

मंगल—रक्तनाश, माता की बिमारी, खरुज, सूजन, प्लेग, बुखार, नाक का रोग, मधुरा, गुह्य रोग, आपरेशन—चीरफाड, धाव इत्यादि।

बुध—मेंदू संबन्धी विकार, गर्दन या गला का रोग, गंड-माला मज्जा तंतु की दुर्व्यवस्था, वाणीमें दोष, सिर का घूमना, मानसिक व्यथा आदि।

गुरू—लीव्हर की बीमारी, शरीर में रक्त संचय, दन्त रोग, प्रतिबन्धक रोग, फोडे आदि।

शुक्र—गुह्यभाग की बीमारी, गर्मी, बाघी, वीर्य दोष, मूत्राशय रोग, मधुमेह आदि।

शनि—अर्धांगवायु, खाँसी, सन्धिवात, क्षयरोग, शीत, पीड़ा, बद्धकोष्ट, दमा, दाढ का दर्द, अपचन, बात विकार, दीर्घकाल के रोग आदि।

लग्न का स्वामी यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट होकर पीडित हो तो गुह्यविकार रोग का होना सम्भव है। जन्म राशि में श० मं० रा० के० स्थित हो तो शरीर में पीड़ा, हृदय रोग, स्त्री को कष्ट, बंधुसुख में विघ्न अवश्य होगा। सारांश, किसी भी प्रश्न का विचार करते समय भाव, राशि, अंश, ग्रह, दृष्टि व युति के शुभा-शुभ स्थिति का विचार करने के पश्चात् ग्रहों के फल का विचार करने से यथार्थ फल का अनुभव मिलना संभव है। जैसे तृतीय भाव से गला, कान आदि का बोध होता है। इस भाव से यदि

नीच का गुरू भ्रमण करता हो तो कफ व कर्ण शूल की व्यथा होगी और यदि नीच का शनि भ्रमण करता हो तो दाहिने तरफ छाती, गला, कान में वातपीड़ा से दुःख मिलना निश्चित है। परन्तु दुःख का प्रमाण कम या अधिक होना अथवा न होना यह जन्मस्थ ग्रह, राशि गोचर ग्रह व उनके शुभाशुभ युति वह दृष्टि पर अवलम्बित है यह भी अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

स्पष्ट ग्रह अथवा ग्रहांश

फलित शास्त्र या भविष्य कथन का मुख्य उद्देश्य यदि मनुष्य को आगामी संकटों का प्रतिकार करने के लिये सावधान तथा जागृत करना है तो प्रत्येक मनुष्य को पापग्रहों के अनिष्ट परिणामों का तथा निश्चित्त समय का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। और यह ज्ञान जन्म ग्रहों को स्पष्ट किये बिना अर्थात् उनके शुभाशुभ शक्ति का ज्ञान हुए बिना ध्यान में आना असंभव है। प्रत्येक ग्रह प्रत्येक राशि में ३० अंश रहता है व इसके पश्चात् दूसरे राशि में जाता है। परन्तु जन्म समय जिस राशि में वे भ्रमण करते हों उस राशि के ३० अंश में से वे कितने अंश भ्रमण कर चुके और कितने अंश भ्रमण करना बाकी है यह जानना याने ग्रहों की स्थिति व गति का ज्ञान प्राप्त करना तथा ग्रहों को स्पष्ट करना है। और इसे ही स्पष्ट ग्रह साधन कहते हैं। दूसरा अर्थ ग्रहों को स्पष्ट करना अर्थात् उनका प्रभाव या वजन जानना है। जैसे मान लो कि किसी मनुष्य को सोने के खदान में एक सोने का टुकड़ा मिला। किन्तु उसका ठीक वजन मालूम करने के लिये जिस तरह उसे पानी और अग्नि से शुद्ध करना

आवश्यक होगा उसी तरह आकाशस्थ ग्रहों के प्रभाव या वजन जानने के लिये उन्हें गणित द्वारा शुद्ध कर उनका भुक्तांश व भोग्यांश जानना आवश्यक है और इसे ही ग्रह स्पष्ट करना तथा ग्रहों का अंश जानना कहते हैं। उच्च या नीच राशि के ग्रह जिस तरह शुभाशुभ फल देते हैं उसी तरह वे उच्च या नीचांश में होने पर शुभाशुभ फल देने के लिये समर्थ होते हैं। ग्रह स्पष्ट करने की रीति सूर्य सिद्धांत, ब्रह्म सिद्धांत, ग्रहलाघवादि ग्रन्थों में उपलब्ध है किंतु इन ग्रन्थों का अध्ययन बिना दीर्घ प्रयत्न तथा समय व गुरू कृपा के होना असम्भव है। अतः इन ग्रन्थों द्वारा सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त करने में पाठकों को विशेष कष्ट उठाने का प्रसंग न आवे, स्थूल रीति का यहाँ वर्णन कर देना हम आवश्यक समझते हैं। जैसे मान लो कि किसी बालक का जन्म विक्रम संवत् १९८९ शके १८५५ ज्येष्ठ, शुक्लपक्ष चतुर्थी, रविवार, पुनर्वसू नक्षत्र घ० ४७ प० १३ इष्ट घटी ३४–५० पल (७ बजकर २० मिनट पर) दिनमान ३२ घ० ४४ पल रात्रिमान २७ घ० १६ पल सूर्यास्त के पश्चात् हुआ तो उस दिन के ग्रह किस तरह स्पष्ट करना चाहिये।

जन्म, अमावस्या के बाद शुक्लपक्ष चतुर्थी का है इसलिये अमावस्या से जन्म समय तक का अन्तर प्रथम ध्यान में लाना चाहिये। अमावस्या से चतुर्थी तक का अन्तर ४ दिन और जन्म समय ३४ घड़ी ५० पल है अतः ४ दि० ३४ घ० ५० पल का अन्तर आया। इस अन्तर को अमावस्या के सूर्य की गति ५७ कला ३० विकला से गुणा करो और ६० से भाग देने पर जो अंश कला विकला आवे उसे अमावस्या के स्पष्ट रवि के रा०

अं० क० वि० में जोड़ने से चतुर्थी के दिन जन्म समय तक का रवि स्पष्ट होगा। जैसेः—

दिन	घटी	पल
४	३४	५०
		× ५७
२२८	१९३८	६०)२८५०(४७
३३	४७	२४०
६०)२६१(४ अं	६०)१९८५(३३ क	४५०
२४०	१८०	४२०
२१ क	१८५	३०
	१८०	
	५ वि	

दि	घ	प
४	३४	५०
	×	३०
१२०	१०२०	६०)१५००(२५
१७	२५	१२०
६०)१३७(२ कला	६०)१०४५(१७	३००
१२०	६०	३००
१७ विकला	४४५	×
	४२०	
	२५	

अंश	कला	विकला
४	२१	५
+०	२	१७
४	२३	२२

इसे अमावस्या के स्पष्ट रवि में जोडने से चतुर्थी के जन्म दिन समय तक का रवि स्पष्ट हुआ।

	रा	अंश	कला	विकला
स्पष्ट रवि अमावस्या	१	९	२९	२०
,, ,, जन्म दिन तक	+०	४	२३	२२
उत्तर स्पष्ट रवि	१	१३	५२	४२

उत्तर स्पष्ट रवि १–१३ – ५२ – ४२

दूसरी रीति

अमावस्या से इष्ट दिन जन्म समय तक के घटी पल के पल बनाकर सूर्य के गति से गुणा करो और गुणाकार को ६० से भाग देने पर जो अंश कला विकला आवे उसे अमावस्या के राशि अंश कला विकला में जोड़ दो। उत्तर स्पष्ट रवि होगा। जैसेः—

दिन	घटी	पल	सूर्य की गति कला विकला
४	३४	५०	५७—३०

```
 ४                      ५७—३०
 ६०                     ६०
 ───                    ────
 २४०                    ३४२०
  ३४                      ३०
 ───                    ────
 २७४ × ६०               ३४५० पल
 ────────
 १६४४०
    ५०
 ────────
 १६४९० पल
```

३६०० पल ÷ १६४९० पल × ३४५० पल

३६००)५६८९०५००(१५८०२
३६००
———
२०८९०
१८०००
———
× २८९०५
२८८००
———
× १०५००
७२००
———
३३००

६०)१५८०२(२६३
१२०
———
३८०
३६०
———
२०२
१८०
———
२२ वि

६०)२६३(४ अं
२४०
———
२३ क

	रा	अं	क	वि
अमावस्यास्पष्टरवि	१	९	२९	२०
जन्म समय तक का रवि +	०	४	२३	२२
उत्तर स्पष्ट रवि =	१	१३	५२	४२

ग्रह स्पष्ट करते समय यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये कि जन्म दिन से पौर्णिमा और अमावस्या कितने दिन के अंतर पर है अर्थात् शुक्लपक्ष के पंचमी षष्ठी तक जन्म हो तो अमावस्या के स्पष्ट ग्रह में जन्म दिन तक के स्पष्ट ग्रह को जोडना और इसके पश्चात् का जन्म हो तो पौर्णिमा के स्पष्ट ग्रह में जन्म दिन तक के स्पष्ट ग्रह को घटाने से अधिक गणित करने का प्रसंग कम हो सकता है। जिस दिन जिस समय का ग्रह स्पष्ट करना हो उस काल (समय) को उसी ग्रह के गति से गुणा कर ६० से

भाग देने के पश्चात् जो अंशादि उत्तर आवे उसे पौर्णिमा या अमावस्या के स्पष्ट ग्रहांश में जोडने या घटाने से जन्म दिन और समय तक का ग्रह स्पष्ट आ सकता है। इसी रीति से अन्य ग्रह भी स्पष्ट हो सकते हैं किंतु चंद्र, राहु, केतु व वक्रीग्रह स्पष्ट करने की रीति भिन्न है अतः उसका उल्लेख स्वतंत्र रीति से आगे किया है। यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि रवि और चंद्र के सिवाय बाकी के ग्रह वक्री हुआ करते हैं।

उपर लिखे हुए रीति से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी रीति का उपयोग करने से उत्तर एक ही आयगा परन्तु दोनों रीति का उपयोग करने से नजर चूक से गलती भी हुई हो तो गलती ध्यान में आ सकती है अतः इनका उपयोग करना आवश्यक है।

मंगल ग्रह (१ ली रीति)

जन्म	दिन व	समय
४	३४	५०
मंगल गति		× १९ फ०
७६	६४६	६०)९५०(१५
११	१५	६०
८७(१ अं	६०)६६१(११ फ०	३५०
६०	६०	३००
२७ क	६१	५०
	६०	
	१ वि	

४ ३४ ५०
× २६ विकला

१०४ ८८४ १३००

१५ २१ ६०) १२० (२१

६०) ११९ (१क. ६०) ९०५ (१५ १००

६० ६० ६०

५९ वि. ३०५ ४०

३००

५

अं		क		वि
१	–	२७	–	१
+०	–	१	–	५९
१		२९		०

अमावस्याका स्पष्ट मंगल

	रा०	अं०	क०	विकला
जन्म सयय तक का स्पष्ट मंगल	४	१४	३५	३२
	+०	१	२९	०
उत्तर स्पष्ट मंगल	४	१६	४	३२

दूसरी रीति

जन्म समय तक के पल

४ ३४ ५०

६०

२४०

३४

२७४ × ६०

१६४४०

५०

१६४९० पल

मंगल की गति का पल

१९ कला २६ विकला

६०

११४०

२६

११६६ पल

३६०० पल ÷ १६४९० × ११६६ पल

९८९४०

९८९४०

१६४९०

१६४९०

३६००)१९२२७३४०(५३४०   ६०)८९(१ अंश

१८०००   ६०

× १२२७३   २९ कला

१०८००   ६०)५३४०(८९

× १४७३४   ४८०

१४४००   ५४०

३३४०   ५४०

×

४	१४	३५	३२	अमावस्या का स्पष्ट मंगल
+ ०	१	२९	०	जन्म समय तक का ,,
४	१६	४	३२	उत्तर स्पष्ट मंगल

इसी रीति से अन्य ग्रहों को भी स्पष्ट करना सहज है। किंतु चंद्र स्पष्ट करने की रीति भिन्न है। जैसेः—

चंद्र स्पष्ट करने की रीति

जन्म दिन चंद्र कर्क राशि में ३० घटी ५७ पल के उपरांत प्रवेश करता है यह पंचाग के आखरी कोष्टक देखने से ज्ञात होगा। चंद्र कर्क राशि में प्रवेश करने के समय से जन्म समय तक उस राशि में कितने घटी पल था इसका प्रथम विचार करना चाहिये व पश्चात कर्क राशि में कुल कितने घटी पल था यह ध्यान में लाना चाहिये। चंद्र कर्क राशि में ३० घटी ५७ पल पर प्रवेश करता है और जन्म ३४ घटी ५० पल पर होता है अतः जन्म समय तक चन्द्र कर्क राशि में केवल ३ घटी ५३ पल भुक्त हुआ था।

जन्म दिन रविवार को इस राशि में चन्द्र कुल २९ घटी ३ पल था।

दूसरे दिन सोमवार को कुल ६० घटी था।

तीसरे दिन मंगलवार को कुल ५४ घटी २९ पल था = १४३-३२।

इसके पश्चात वह सिंह राशि में प्रवेश करता है। कर्कराशि में चन्द्र १४३ घटी ३२ पल था और जन्म समय तक वह केवल ३ घटी ५३ पल भुक्त हुआ था।

इसके पल बनाओ और जन्म समय तक के चन्द्र के घटी पल को पल बनाकर ३० से गुणा करो और कर्क राशि के कुल घटी पल को पल बनाकर भाग दो उत्तर जन्म सयय का स्पष्ट चन्द्र समझना । जैसेः—

कुल घ. पल
१४३ ३२
× ६०
८५८०
३२
८६१२ पल

जन्म घ. पल
३ ५३
× ६०
१८०
५३
२२३ पल

८६१२ पल में चंद्र ३० अंश भ्रमण करता है तो २२३ पल में कितने अंश भ्रमण करेगा ।

८६१२ ÷ $\frac{२२३ \times ३०}{} = \frac{६६९०}{८६१२}$

८६१२)६६९०(० अंश
६० कला
८६१२)४०१४००(४६ कला
३४४४८
× ५६९२०
५१६७२
× ५२४८
× ६० विकला
८६१२)३१४८८०(३६ विकला
२५८३६
× ५६५२०
५१६७२
४८४८

	अं.	क.	वि.
उत्तर	०	४६	३६

अर्थात् चन्द्र कर्क राशि में होने के कारण इस राशि की पूर्व राशि मिथुन का अङ्क ३ यह लिखने की प्रथा है और इसी तरह अन्य ग्रहों के पिछले राशि का अंक भी पंचांग के स्पष्ट ग्रह कोष्टक में लिखा रहता है। कारण यह है कि ३ राशि ० अंश ४६ कला ३६ विकला समाप्त होने पर जन्म हुआ या जन्म समय का स्पष्ट चन्द्र ३ राशि ० अंश ४६ कला ३६ विकला था यह सिद्ध हुआ।

बुध ग्रह स्पष्ट रीति

बुध गति　　　　　　　　अमावस्या का स्पष्ट बुध

क० वि०

११३—८　　　　　　　　रा. अं. क. वि.

× ४ दिन　　　　　　　　१ – ७ – १५ – १८

४५२ ३२　　　　　　　+ ० – ७ – ३२ – ३२

६०)४२०(७　　　　　उत्तर १ – १४ – ४७ – ५० स्पष्ट बुध

३२ =७ ३२ ३२ वि.

गुरु ग्रह स्पष्ट रीति

गुरू ग्रह गति　　　　　　　　अमावस्या स्पष्टगुरु

क० वि०

२ —३६　　　　　　　　रा. अ. क. वि.

× ४ दिन　　　　　　　　४ – २३ – ४२ – ३२

८–१४४　　　　　　　+ ० – ० – १० – २४

६०)१२०(२　　　उत्तर = ४ २३ ५२ ५६ स्पष्टगुरु

+ २–२४

१० – २४ वि०

शुक्रग्रह स्पष्ट रीति

शुक्रग्रहगति

क		रा०	अं०	क०	वि०
७४ २९	अमावस्या स्पष्टशुक्र	१	– १९	– ११	– ५५
× ४ दिन	जन्म स्पष्ट शुक्र +	०	– ४	– ५७	– ५६
२९६–११६	उत्तर स्पष्ट शुक्र =	१	– २४	– ९	– ५९

+ १ – ६०

२९७ ५६ वि

६०) २४० (४

अं०क०वि०

५७ क = ४–५७–५६

जन्म समय शनि वक्री है और राहु तथा केतु सदैव उलट गति से अपना मार्ग क्रमण करते हैं। साधारण ग्रह से वक्री ग्रह स्पष्ट करने की रीति भिन्न है क्योंकि साधारणतः प्रत्येक ग्रह जिस राशि में स्थित हों उस राशि से अगले राशि में जाने के हेतु आगे बढते जाते हैं किंतु वक्री ग्रह जिस राशि में स्थित हो उस राशि से पिछले राशि में जाने के लिये पीछे हटते जाते हैं। अर्थात् जन्म चतुर्थी का होने के कारण अमावस्या के स्पष्ट ग्रह में साधारण गति से भ्रमण करनेवाले ग्रहों गति द्वारा भ्रमण किये हुए कला विंकला को जोड़ना और वक्र गति से भ्रमण करने वाले ग्रहों के गति को घटाने से वक्री ग्रह स्पष्टसिद्ध होता है।

वक्री शनि गति	स्पष्ट शनि अमावस्या
क० वि०	रा० अं० क० वि०
०–११	९ – २० – ३ – ३५
× ४ दिन	—०– ० – ० – ४४
०–४४ वि०	उत्तर स्पष्ट शनि जन्मदिन ९ – २० – २ – ५१

स्पष्ट राहु

राहुगति	स्पष्टराहु अमावस्या
क० वि०	
३–११	रा० अं० क० वि०
× ४	१० – १० – २५ – ७
१२–४४	—० – ० – १२ – ४४
उत्तर जन्म दिन स्पष्टराहु	१० – १० – १२ – २३

स्पष्ट केतु

केतुगति	स्पष्टकेतु अमावस्या
क० वि०	
३–११	४ – १० – २५ – ७
×४	० – ० – १२ – ४४
१२–४४ उत्तर जन्मदिन स्पष्ट केतु	४ – १० – १२ – २३

ग्रहस्पष्ट करते समय गुणा भागाकार अधिक न करना पड़े इस हेतु जन्म दिन कौनसा है प्रथम यह ध्यान में लाना चाहिये। यदि जन्म पौर्णिमा (शुक्लपक्ष) ७ मी या ८ मी का हो तो अमावस्या के स्पष्टग्रहों में जन्म ग्रहों के गति को जोडने से अधिक गणित न करते हुए उत्तर आ सकता है किंतु जन्म यदि ९ मी १० मी का हो तो पौर्णिमा के स्पष्ट ग्रहों के राशि अंश कला विकलामेसे प्रतिपदा से जन्म दिन याने १० मी तक के ग्रहों के गति को घटाने से जन्म दिन के ग्रह स्पष्ट हो सकते हैं। इसी तरह अमावस्या ८ मी का जन्म हो तो पौर्णिमा के स्पष्ट ग्रहों मे जोडना और १० मी का जन्म हो तो अमावस्या के स्पष्ट ग्रहों से घटाना से ही योग्य उत्तर मिलेगा। परंतु यदि ग्रह वक्री हो अथवा राहु केतु इन दो वक्री ग्रहों के जन्म दिन तक के गति को पिछले पक्ष के अमावस्या या पौर्णिमा जो पक्ष हो स्पष्ट ग्रहों के राशि अंश कला विकला से घटाना ही चाहिये क्योंकि वे पिछले राशि के कितने समीप पहुंच चुके यह जानना है। ग्रहस्पष्ट करते समय जन्म दिन के पंचांग पर से जन्मपक्ष और पिछले पक्ष के स्पष्ट ग्रहों का, सूर्य के राश्यांतर का, वक्री ग्रह आदि का ज्ञान होना आवश्यक है अन्यथा जन्म दिन तक के ग्रहों का स्पष्ट करना कठिण होगा।

ग्रहांश से सूक्ष्म फलित ज्ञान

आकाशस्थ ग्रह अपने मार्ग व गति से एक क्षण भी विश्रांति न लेते नित्य भ्रमण करते हैं यह सर्वमान्य व सर्वश्रुत है। और नियोजित समय पर प्रत्येक नक्षत्र व राशि से भ्रमण करते हुए

दूसरे नक्षत्र और राशि में प्रवेश किया करते हैं। ग्रहों को एक राशि भ्रमण करने के लिये ३० अंश का समय लगता है यह हम पहिले कह चुके हैं और इसी आधार पर जन्म समय वे जितने अंश पर अपना मार्ग क्रमण करते हुए गणित शास्त्र द्वारा सिद्ध होता है उसे ग्रह का अंश या ग्रहांश कहते हैं। अर्थात् मनुष्य के जन्म समय वे जिस अंश पर उदित होते हैं उसी राशि और अंश पर जब गोचर का ग्रह परिभ्रमण करते हुए पहुँचता है तभी वह अपना शुभाशुभ फल देने के लिये समर्थ होता है। बहुतेक लोगों का यह समझ हो बैठा है कि ग्रहों का राश्यांतर होते ही वे उस राशि का शुभाशुभ फल देने के लिये समर्थ होते हैं किंतु स्थूल मान से उनका ऐसा समझना यद्यपि ठीक है तथापि सूक्ष्म पद्धति के अनुसार यह अशुद्ध पाया जाता है। क्योंकि कोई भी ग्रह किसी भी राशि में प्रवेश करते ही वह अपना फल जन्म होने के पिछले अंशों का किस तरह दे सकता है जब कि उन अंशों पर मनुष्य के जन्म का पता ही न था। मान लो कि राम की जन्म राशि मेष है और जन्म समय गुरु २० अंश का है। तो क्या राशि से पांचवा अर्थात् सिंह राशि में गोचर का गुरु प्रवेश होते ही वह शुभ फल देने के लिये समर्थ होगा? अर्थात् नहीं। क्योंकि ग्रहों का पहिला या दूसरा होना यह केवल उनके राश्यांतर पर नहीं किंतु जन्म समय के अंशों से राशियों के ३० अंश पूर्ण भ्रमण करने पर निर्भर है। स्थूल मान से सिंह राशि का गुरु पांचवां समझा जाता हो किंतु सूक्ष्म दृष्टि से वह चौथा ही होता है। जैसे २० अंश मेष राशि से १९ अंश वृषभ राशि तक पहिला गुरु, २० अंश वृषभ से १९ अंश मिथुन—दूसरा गुरु, २० अंश

मिथुन से १९ अंश कर्क तक—तीसरा गुरु और २० अंश कर्क से १९ अंश सिंह तक चौथा गुरु हुआ। अतः वह शुभ फल देने के लिये असमर्थ है किंतु २० अंश सिंहराशि में आने पर १९ अंश कन्या राशि तक पांचवा होने के कारण शुभ फल देने को समर्थ होगा इसमें संदेह नहीं। स्थूल और सूक्ष्म दृष्टि में यह भयंकर अंतर पड़ने के कारण तथा लोगों को इसका ज्ञान न होने के कारण वे बहुधा भविष्य वक्ता और ज्योतिषशास्त्र दोनों के प्रति यदि अपना अविश्वास व्यक्त करते हों तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि जन्म ग्रह, गोचर में उसी राशि और अंश पर पहुँचते ही वे अपना शुभाशुभ फल देते हैं अन्यथा नहीं। इसके अतिरिक्त दूसरे दृष्टि से विचार किया जाय तो भी यही सिद्ध होता है। जैसे क्षण भर के लिये मान लिया जाय कि ग्रह मनुष्य है। भाव शहर है। नक्षत्र मोहल्ला है। राशि नौकर है और अंश यह निवास स्थान है तो क्या एक शहर से दूसरे शहर की सीमा पर पहुँचते ही मनुष्य अपने घर पहुँच गया ऐसा कह सकते हैं। अर्थात् नहीं। इसी तरह ग्रहों के भ्रमण का भी विचार करना योग्य होगा। ग्रहों के शुभाशुभ फल निश्चय करने के मार्ग दो हैं एक जन्म राशि अर्थात् चंद्र से और दूसरा जन्म लग्न से। किंतु ग्रहों का राश्यांतर होने पर लग्न या राशि के अंशानुसार वे कितने समय के पश्चात् फल देने के लिये समर्थ होते हैं यह शनि के साढे साती के शुभाशुभ काल–कोष्टक से सहज ज्ञात हो सकता है। तात्पर्य सूक्ष्म फलित वर्तने के लिये ग्रहांश का ज्ञान होना कितना आवश्यक है इसका विचार पाठकगण स्वयं कर सकते हैं।

ग्रहांश से ग्रहों के अवस्था का ज्ञान

ग्रहांश का ज्ञान होने पर मनुष्य को उनके अवस्था का तथा उनके शुभाशुभ स्थिति व फल का ज्ञान हो सकता है अतः ग्रहांश का जानना आवश्यक है जिस पर उनका शुभाशुभ फल निर्भर है जैसे:—

ग्रह यदि सम राशि अर्थात् २–४–६–८–१०–१२ में हो तो।

१ से ६	अंश	तक वह	बाल्यावस्था	का ग्रह कहलाता है।
७ से १२	,,	,,	कुमारावस्था	,,
१३ से १८	,,	,,	युवावस्था	,,
१९ से २४	,,	,,	वृद्धावस्था	,,
२५ से ३०	,,	,,	मृतावस्था	,,

ग्रह यदि विषम राशि अर्थात् १–३–५–७–९–११ में हो तो।

१ से ६	अंश	तक वह	मृतावस्था	का ग्रह कहलाता है।
७ से १२	,,	,,	वृद्धावस्था	,,
१३ से १८	,,	,,	युवावस्था	,,
१९ से २४	,,	,,	कुमारावस्था	,,
२५ से ३०	,,	,,	बाल्यावस्था	,,

काल का सूक्ष्म विभाग

आर्य पद्धति के अनुसार		आंग्ल पद्धति के अनुसार	
६० विपल का	१ पल	अथवा	२४ सेकेण्ड
२॥ पल का	—	—	१ मिनट
६० पल का	१ घटिका	—	२४ ,,
२ घटिका का	१ मुहूर्त		
२॥ ,, ,,	—		१ घंटा
३॥। मुहूर्त ७॥ घटिका } का	१ प्रहर		
८ प्रहर ३० मुहूर्त ६० घटिका } ,,	१ दिन		२४ घंटे
१५ दिन १५ तिथी } ,,	१ पक्ष		
२ पक्ष ३० तिथी } ,,	१ मास	३०–३१ दिन का	१ मास
३० या ३१ दिन का	१ सौर मास		
२९॥ — ,, ,,	१ चान्द्र मास		
२ मास ,, ,,	१ ऋतु		
३ ऋतु ६ मास } ,,	१ अयन		
६ ऋतु १२ मास २ अयन } ,,	१ सौर वर्ष	१२ मास का	१ वर्ष

३६५ दिन १५ घटी २३ पल	,,	१ सौर वर्ष
३५४ दिन ३६० तिथी १२ मास	,,	१ चांद्रवर्ष

आर्य अद्धति के अनुसार

६० प्रतिकला का	१ विकला	१२ राशि या २७ नक्षत्र का	१ चन्द्र
६० विकला	१ कला		
६० कला	१ अंश		
१३ अंश २० कला	१ नक्षत्र		
२$\frac{१}{४}$ नक्षत्र ३० अंश	१ राशि		

जन्म कुंडली

जन्म कुंडली यह मनुष्य के जन्म सयय के आकाशस्थ ग्रह, राशि, नक्षत्रादि का तथा उसके पूर्व जन्म शुभाशुभ कर्मों के सुख-दुःखादि फल-भोग का एक अंधुक (निगेटिव) फोटो है जिसे इस शास्त्र द्वारा उज्वल (पाजीटिव) करने से उसके प्रत्येक अंग सताईस विभाग—नक्षत्र, बारह भाग-राशि, नव-ग्रह, तीस-तिथी, सात वार, दो-पक्ष, सत्ताईस-योग, ग्यारह-करण, बारह-मास, छः ऋतु, दो-अयन, और वर्षादिका तथा सुख दुःखादि फल के निश्चित स्वरूप व समय का मनुष्य को सूक्ष्म ज्ञान हो सकता है। कई आधुनिक विद्या प्रवीण पंडितों का यह मत है कि पूर्व जन्म कर्मों का संबंध इस जन्म में होना तथा आकाशस्थ ग्रहों का पृथ्वी के चराचर वस्तु और प्राणियों से संबंध होना यह समझना केवल भ्रम है किंतु सूक्ष्म विचार करने से प्रत्येक समंजस मनुष्य के ध्यान में यह सहज आ सकता है कि जिस तरह एक मकान को छोड़कर दूसरे मकान में जाते समय प्रत्येक मनुष्य अपना भला बुरा माल-मत्ता या उसके बदले प्राप्त किया हुआ नया माल भविष्य में उप-योग के लिये वह अपने साथ ही ले जाता है उसी तरह जीव एक देह (घर) छोड़ते समय व दूसरे देह (घर) में प्रवेश करने के पूर्व ही वह अपने पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्म या उसके एवज प्राप्त किये हुए नये फल भविष्य में उपयोग के लिये अपने साथ ही ले जाता हो तो इस पर अविश्वास करना या आश्चर्य मानना वृथा है। परंतु ऐसे विद्वानों का आक्षेप सच है यह भी यदि क्षण भर के लिये मान लिया जाय तो यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होना स्वाभाविक है कि वह अपने पूर्वजन्म कर्मों के फल को कहाँ, किसके पास व

कितने समय तक रख छोड़ता है ! उसके पाप पुण्यादि कर्मों के फल को कौन भोगता है और इस पृथ्वी पर वह किन कर्मों के आधार पर जन्म पाता है तथा उसके यह जन्म लेने का प्रयोजन ही क्या है ? हमारे अल्पमति से फल प्राप्ति के बाद जिस तरह लता-वृक्ष स्वयं सूखकर मर जाते हैं उसी तरह भोग-फल प्राप्ति के बाद शुभाशुभ कर्म स्वयं सूख कर मिट जाते हैं। अर्थात् प्रत्येक मनुष्य पूर्वजन्म कर्मों के फल भोगने के लिये ही इस पृथ्वी पर जन्म पाता है और भोग भोगने से ही कर्म का फल मिट सकता है अन्यथा नहीं यह स्पष्ट सिद्ध होता है। तात्पर्य—पूर्व जन्म में किये हुए शुभाशुभ कर्मों के फल का और भविष्य में होने वाले सुख दुःखादि भोग का निश्चित् ज्ञान जन्मस्थ ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति तथा जन्मकुंडली से हो सकता है इसलिये प्रत्येक मनुष्य को अपने जन्म कुंडली का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। सांसारिक परिस्थिति के अपेक्षा आकाशस्थ ग्रह स्थिति अत्यंत प्रभावशाली है यह हम पहिले लिख चुके हैं और इसका प्रत्यक्ष अनुभव मनुष्य को उसके जन्म कुंडली से नित्य मिलता है। अतः इस जगत में इस शास्त्र ने अग्र स्थान प्राप्त किया है और वह आज तक कायम है।

कुंडली मुख्यतः चार प्रकार की है (१) लग्न कुंडली (२) राशि कुंडली (३) वर्ष कुंडली (४) प्रश्न कुंडली। जन्म कुंडली के अंतर्गत् अनेक सूक्ष्म कुंडलियाँ जैसे—होरा, द्रेष्कोण, तृतीयांश, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश, भावचलित आदि। और किसी भी प्रश्न का अत्यन्त सूक्ष्म विचार करने के लिये इन कुंडलियों का अत्यन्त उपयोग भी है परन्तु कुछ वर्षों के अनुभव के बाद जन्म कुंडली का सूक्ष्म निरीक्षण और परीक्षण कर अनेक प्रश्नों का

विचार करना अशक्य नहीं है। इसलिये पाठकों का ध्यान हम मुख्यतः इन्हीं चार कुंडलीयों की ओर आकर्षित करना अत्यन्त आवश्यक समझते हैं।

१ मनुष्य के जन्म समय आकाशस्थ ग्रहों की गति व स्थिति दर्शानेवाले कुंडली को जन्म लग्न कुण्डली कहते हैं।

२ मनुष्य के जन्म समय जिस राशि में चन्द्र स्थित हो उसे लग्न में लिखकर दूसरे ग्रह-क्रम से अन्य भावों में जिस कुण्डली में लिखे जाते हैं उसे राशि कुण्डली कहते हैं।

३ जन्म वर्षारम्भ के दिन से एक वर्ष की ग्रह स्थिति दर्शाने वाले कुण्डली को वर्ष कुण्डली कहते हैं।

४ किसी भी समय किसी प्रश्न का उत्तर उक्त समय के ग्रह-स्थिति द्वारा बताने वाले कुण्डली को प्रश्न कुंडली कहते हैं।

जन्म लग्न कुण्डली से मनुष्य का रूप रंग गुण, स्वभाव, मानसिक स्थिति, सुख दुःख व हानि लाभ आदि का सम्पूर्ण ज्ञान हो सकता है और राशि कुण्डली से मन की स्थिति व गोचर ग्रहों के शुभाशुभ फल का ज्ञान होता है। लग्न कुण्डली में यदि लग्न प्रबल हो तो गोचर ग्रहों का फल लग्न से मिलता है और यदि लग्न से चन्द्र (राशि) प्रबल हो तो गोचर ग्रहों का फल राशि से मिलता है अतः जन्म कुण्डली में ये दोनों कुण्डलियाँ लिखी जाती हैं। कुण्डली का विशेषत्व याने वह किस प्रकार की है अर्थात् अत्यन्त उच्च है या नीच यह जानना है। सांपत्तिक दृष्टि से लक्षाधीश होने का योग जैसा विशेष है वैसा ही दरिद्री रहने का है क्योंकि जैसा एक सामान्य मनुष्य का संस्थानाधिपति होना वैसा ही किसी लक्षाधीश का एकाएक दरिद्री होना ये दो विशेष-

योग हैं और ये जन्म कुण्डली के द्वारा ही मालूम हो सकते हैं। परन्तु अनेक कुण्डलियों के निरीक्षण, परीक्षण व मनन से ही यह ध्यान में आ सकता है और यही जानना याने कुण्डली जानना है।

लग्न

मेषादि द्वादश राशि में से जो राशि मनुष्य के जन्म समय पूर्व क्षितिजपर उदित रहती है उसी राशि के अङ्क को जन्म लग्न कहते हैं और यह अङ्क जन्म कुण्डली के प्रथम स्थान में लिखा जाता है। कई लोग कुण्डली के इन्हीं अंको को विधि का अङ्क कहते हैं और वह यथार्थ है क्योंकि इन्हीं अङ्को पर मानवी जीवन का सुख दुःखादि सर्वस्व निर्भर है। जन्म लग्न यह फलित ज्योतिष शास्त्र का मुख्य आधार है। अतः यह जितना शुद्ध व सूक्ष्म हो उतना ही सूक्ष्म व पूर्ण अनुभव मनुष्य को मिलना निश्चित है।

भुक्तपल

हम पहिले कह चुके हैं कि सूर्य प्रत्येक राशि में एक महीना स्थित रहने के पश्चात् वह दूसरे राशि में जाता है। परंतु वह प्रति दिन किस गति से द्वादश राशि में भ्रमण करता है यह प्रथम जानना चाहिये और यह नीचे लिखे अनुसार है जैसेः—

लंकोदय (लंका में राशिके पलात्मक उदय)

राशि	कुल पल	घटी पल	प्रतिदिन के भुक्त पल
मेष	२३८	३ ५८	८
वृषभ	२६७	४ २७	९
मिथुन	३१०	५ १०	१०
कर्क	३३६	५ ३६	११

सिंह	३३१	५ ३१	११
कन्या	३१८	५ १८	११
तुला	३१८	५ १८	११
वृश्चिक	३३१	५ ३१	११
धन	३३६	५ ३६	११
मकर	३१०	५ १०	१०
कुंभ	२६७	४ २७	९
मीन	२३८	३ ५८	८

ता० २८–५–१९३३ को रवि उदय कब होता है प्रथम यह देखना चाहिये जो पञ्चांग में लिखा रहता है।

प्रत्येक राशि के सूर्य के भ्रमण गति का यह स्थूल प्रमाण शास्त्रकारों ने (लंका के उदय समय से अर्थात लंकोदय से) निश्चित किया है। लग्न साधन यह सूर्य के राश्यांतर व गति पर अवलंबित है। अतः लग्न निश्चित करते समय प्रथम यह ध्यान में लाना चाहिये कि जन्म दिन सूर्य किस राशि में है और कितने दिन से है, यह निश्चित करने के पश्चात् उन दिनों को उसी राशि के प्रति दिन के भुक्तपल गति से गुणाकर ६० से भाग दो। उत्तर घ. प. यह जन्म समय तक सूर्य भुक्त कर गया और इसे राशि के सामने लिखे हुए घटीपल से घटाने के पश्चात् जो शेष रहे वह घटी पल सूर्य को भोगना बाकी है यह समझना चाहिये। इसके उपरांत यह ध्यान में लाना चाहिये कि जन्म दिन सूर्योदय कब होता है और जन्म समय क्या है अर्थात् सूर्दोदय से जन्म समय तक जितने घंटे मिनट आते हों उसे २॥ घटी से गुणाकर घटी पल बनाओ। उत्तर यही जन्म समय

की इष्ट घटी समझना चाहिये। आगे सूर्य को जिस राशि के जितने घटी पल भोगना बाकी है उसके नीचे क्रम से दूसरे राशियों के घटी पल को इस हद तक लिखो जब तक कि जन्म इष्ट घटी के अंक से वह न मिल जाय। परंतु मिलने पर वही राशि जन्म लग्न समझा जाता है अथवा उसी राशि के अंक पर मनुष्य का जन्म हुआ अतः यह कुंडली के प्रथम स्थान में लिखा जाता है। उदाहरणार्थः—

लग्न साधन स्थूल रीति

मान लो किसी बालक का जन्म विक्रम संवत १९८९ शके १८५५ ज्येष्ठ, शुक्ल पक्ष, चतुर्थी, रविवार, ४१–९ पल, पुनर्वसू नक्षत्र ४७–१३, ता० २८–५–३३ को रात्रि समय ७ बजकर २० मिनट पर विलासपुर में हुआ तो उसकी जन्म इष्ट घटी क्या होगी?

ता. २८–५–३३ को रविउदय स्टैन्डर्ड टाईम के अनुसार ५–२४ मि० पर होता है।

रवि उदय स्टन्डर्ड टाईम के अनुसार ५–२४ मि० पर होता है और जन्म समय ७–२० मि० सायंकाल का है।

अब रवि उदय से जन्म काल तक के कितने घंटे व मिनट हुए यह देखना चाहिये } १३ घंटे ५६ मि०

इसे २॥ से गुणाकर पल बनाओ ×२॥ ×२॥

३२–३० १४०

६०)१२०(२

२०

२ – २०

जन्म इष्ट घटी ३४ – ५० पल

जन्म समय सूर्य वृषभ राशि में १४-५-३३ को आया और जन्म ता० २८-५-३३ को रात्रि समय पर हुआ अतः ता० १४ से २८ तक कितने दिन हुए यह निकालो = उत्तर १५ दिन। सूर्य वृषभ राशि का भ्रमण प्रति दिन ९ पल के गति से पूरा कर चुका इसलिये इसे १५ से गुणा कर घटी पल बनाओ।

१५ × ९ = १३५ ६०)१३५(२ = घ. पल.
१२० २ - १५
१५

वृषभ राशि में सूर्य कुल ४ घटी २७ पल रहता है इसलिये इस राशि के भुक्तपल को घटाओ ४-२७
२-१५
बाकी भोग्य २-१२ वृषभ राशि
इसमें अन्य राशि के घटी पल को जोड़ो ५-१० मिथुन
५-३६ कर्क
५-३१ सिंह
५-१८ कन्या
५-१८ तुला
५-३१ वृश्चिक
०-१४ धन
३४-५०

(१) अर्थात् धनराशि के ० घटी १४ पल भुक्त होने पर जन्म हुआ इसलिये जन्म लग्न धन समझा गया और धन का अङ्क ९ है अतः इसे प्रथम भाव में लिखा व इसके पश्चात् अगले

विक्रम संवत् १९९० शालिवाहन शके १८४५ ज्येष्ठ शुक्लपक्ष (मई-जून) दि. मा. ३२-४३ रा. मा. २७-१६ उत्तरायणे ग्रीष्मर्तुः।

ति.	वा	घ. प.	न.	घ. प.	यो	घ. प.	क.	घ. प.	दि. मा.	पा.	मु.	फ.	ई.	सू. उ. घं. मि.	सू. अ. घं. मि.	चन्द्रसंचार घ. प.	
१	गु	२७ ४३	रो	२१ ४५	सु	२५ १६	ब	२७ ४१	३२ ३१	२२	२१	२०	२५	५ २४	६ २८	२५।१ मि	दशहारारंभः।
२	शु	३२ ४१	मृ	३६ १२	धृ	२७ ५	कौ	३२ ४१	३२	२२	१	२१	२६	५ २४	६ २८	मिथुन	सफर।
३	श	३७ १	आ	४२ १०	शू	२८ २४	तै	४ ५३	३३	२३	२	२२	२७	५ २४	६ २९	मिथुन	रंभाव्रतं।
४	र	४१ १	पु	४७ १३	गं	२८ ५८	व	१ १	३४	२४	३	२३	२८	५ २४	६ २९	३०।५७ क	विनायका ४ म. प्र. ११९ म. नि. ४१।११।
५	सो	४३ ४६	पु	५१ ३१	वृ	२८ ५१	ब	१२ २७	३५	२५	४	२४	२९	५ २३	६ ३०	कर्क	श्रुतपंचमी।
६	मं	४५ १७	आ	५४ २१	ध्रु	२७ ४६	कौ	१४ ३१	३६	२६	५	२५	३०	५ २३	६ ३०	५४।२१ सिं	
७	बु	४५ ३७	म	५६ २१	व्या	२५ ५०	ग	१५ २७	३७	२७	६	२६	३१	५ २३	६ ३१	सिंह	
८	गु	४४ ३६	पू	५७ १	ह	२२ ५२	वि	१५ १७	३७	२८	७	२७	१	५ २३	६ ३१	सिंह	दुर्गा ८ मिथुनेशुक्रः ४।२१ गूल ३०।
९	शु	४२ २०	उ	५६ २५	व	१८ ५०	बा	१३ २८	३८	२९	८	२८	२	५ २३	६ ३१	११।५२ क	[╋ फसली सन् १३४२ आरब सन् १३३४।
१०	श	३८ ५१	ह	५४ ४३	सि	१३ ५०	तै	११ ३१	३९	३०	९	२९	३	५ २३	६ ३२	कन्या	दशहारसमाप्ति।
११	र	३४ ५०	चि	५२ १०	व्य	८ १८	व	६ ४९	४०	१	१०	३०	४	५ २३	६ ३२	२१।२७ तु	निर्जला ११ मिथुनेज्ञः।
१२	सो	२९ ४४	स्वा	४८ ५२	व	१ ५३ ४६ १	ब	२ १७	४१	२	११	३१	५	५ २२	६ ३३	तुला	सोमप्रदोषः सावित्री व्रतारंभः।
१३	मं	२४ २	वि	४६ १	शि	४७ ४८	तै	२८ २	४२	३	१२	१	६	५ २२	६ ३३	३१।४४ वृ	अमरदाद ३१।
१४	बु	१८ २	अ	४१ ११	सि	४० १६	व	१८ ७	४३	४	१३	२	७	५ २२	६ ३३	वृश्चिक	त्रिरात्रव्रते समाप्ति मृगेर्कः २८।४२ ╋
१५	गु	१२ ३	ज्ये	३७ १०	सा	३२ ४१	ब	१२ ३	४४	५	१४	३	८	५ २२	६ ३४	३७।१ ध	वट १५।

स्पष्ट ग्रहांश पौर्णिमा

ग्रह	सू	चं	मं	बु	गु	शु	श	रा	के
राशि	१	७	४	२	४	२	९	१०	४
अंश	३२	२१	२१	५	२४	७	११	१	१
कला	४८	१	११	२२	२७	४७	५६	३७	३७
विकला	७	४३	५६	१	४४	२२	१२	२८	२८
गति कला	५७	८५७	२८	१०५	५	७३	७	३	३
विकला	१२	४४	२	५६	१६	२५	२५ व.	३	३

अ. ५ ज्ये. शु. १५ गुरौ अ. ग. २३२४ चर ऋणं ८२।३०।

३ बुशु
१
४
२ सू
१२
५ मं गु के
११ रा
६
चं ८
१० श
७
९

राशियों को क्रमसे अगले भावों में लिखने से जन्म कुण्डली का जन्म लग्न तैयार हुआ।

जन्म लग्न कुण्डली
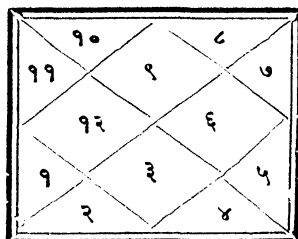
जन्म कुण्डली इस तरह तैयार करने के पश्चात् पञ्चांग में जो ग्रह जन्म दिन जिस राशि में हो उसी क्रम से कुण्डली में लिखने से कुण्डली पूर्ण तैयार हुई यह समझना चाहिये जैसेः—

जन्म लग्न कुंडली
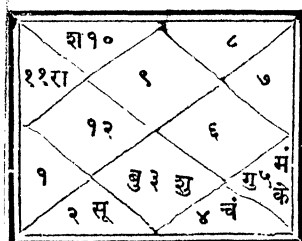
राशि कुंडली
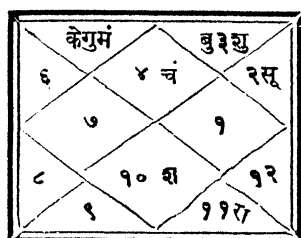
पञ्चांग के आखरी कोष्टक में चन्द्र कर्क राशि में लिखा है अर्थात् जन्म दिन चन्द्र जिस राशि में लिखा हो उसी राशि में, चन्द्र कुण्डली में लिखना चाहिये।

सूक्ष्म लग्न साधन रीति

उपर दिये हुए उदाहरण से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि जन्म लग्न सिद्ध करने के लिये सूर्योदय के ज्ञान की आवश्यकता सबसे अधिक है और प्रत्येक शहर में एक ही समय पर सूर्योदय का होना यह भी असम्भव है। ऐसे स्थिति में मनुष्य का जन्म जिस शहर में हुआ हो उस शहर के सूर्योदय का समय अन्य स्व प्रांतीय तथा अन्य प्रांतीय पञ्चांगों में दिये हुए समय से मिलना असम्भव है और शुद्ध सूर्योदय के ज्ञान के सिवाय शुद्ध जन्म लग्न का सिद्ध करना यह भी अशक्य है। परन्तु किसी भी शहर के शुद्ध सूर्योदय का समय निकालने के लिये नीचे लिखे हुए रीति का उपयोग करना चाहिये जैसेः—

लंकोदय (लंका में राशि के पलात्मक उदय)

मेष	२७८,	कर्क	३२३,	तुला	२७८,	मकर	३२३,
वृषभ	२९९,	सिंह	२९९,	वृश्चिक	२९९,	कुम्भ	२९९,
मिथुन	३२३,	कन्या	२७८,	धन	३२३,	मीन	२७८,

इस लङ्कोदय पर से जिस स्थान का सूर्योदय निश्चित करना हो उस स्थान के पलभा पर से चरखण्ड तैयार कर इनके तीनों अङ्कों को उपर दिये हुए मेष, वृषभ और मिथुन इन राशियों के पलों में से घटाओ । इसके पश्चात् कर्क, सिंह व कन्या इन राशियों के पलों में जोड़ो । इस तरह मेष से कन्या राशि तक सूर्योदय के प्रत्येक स्थान के पलात्मक उदय का ज्ञान सहज हो सकता है व इसी रीति से तुला से मीन राशि तकका

पलात्मक समय भी मालूम हो सकता है जैसेः—मानलो कि किसी शहर का पलभा ४ है तो पलभा को चरखण्ड के निश्चित तीन अङ्कों से गुणा करो।

४ पलभा	४ पलभा	४ पलभा
× १० चरखण्ड	× ८ चरखण्ड	× १० चरखण्ड
४०	३२	४०

चरखण्ड के आखरी अङ्कको ३ से भाग दो उत्तर यह तीसरा चरखण्ड आया जैसेः— पहिला ४०—०
दूसरा ३२—०
तीसरा १३—२०

लंकोदय पल चरखंड		सूयोदय	प्रतिदिन का पलात्मक
मेष	२७८ − ४० = २३८ ÷ ६० =	३ ५८ पल	८ पल
वृषभ	२९९ − ३२ = २६७ ÷ ६० =	४ २७ ,,	९ ,,
मिथुन	३२३ − १३ = ३१० ÷ ६० =	५ १० ,,	१० ,,
कर्क	३२३ + १३ = ३३६ ÷ ६० =	५ ३६ ,,	११ ,,
सिंह	२९९ + ३२ = ३३१ ÷ ६० =	५ ३१ ,,	११ ,,
कन्या	२७८ + ४० = ३१८ ÷ ६० =	५ १८ ,,	१० ,,

उपर दिये हुए छः राशियों के सूर्योदय समय मालूम होने पर तुला से मीन राशि तक इन्हीं अंकों को उलटे क्रम से लिखने से बाकी के छः राशियों का सूर्योदय सहज मालूम हो सकता है जैसेः—

	प्रतिदिनका पलात्मक
तुला	२७८ + ४० = ३१८ ÷ ६० = ५–१८ घ　१० फल
वृश्चिक	२९९ + ३२ = ३३१ ÷ ६० = ५–३१ ,,　११ ,,
धन	३२३ + १३ = ३३६ ÷ ६० = ५–३६ ,,　११ ,,
मकर	३२३ – १३ = ३१० ÷ ६० = ५–१० ,,　१० ,,
कुंभ	२९९ – ३२ = २६० ÷ ६० = ४–२७ ,,　९ ,,
मीन	२७८ – ४० = २३८ ÷ ६० = ३–५८ ,,　८ ,,

जन्म स्थान के द्वादश राशि का पलात्मक उदय मालूम हो सकता है और यही राश्योदय शुद्ध समझना चाहिये ।

पलभा जानने की रीति

मुख्य २ शहरों का पलभा अनेक गन्थो में दिया है परन्तु जिस स्थान का पलभा जानना हो उस स्थान का पलभा नीचे लिखे हुए रीति से सहज मालूम हो सकता है जैसे :—

सूर्य मेष राशि में जिस दिन प्रवेश करता हो उसदिन सूर्य के पूर्ण प्रकाशमें मध्याह्न समय चौरस जमीन पर १२ अंगुल का एक मेखा ठोंक दो । और उस मेख के छाया को अंगुली से नापने से जो नाप आवे वही उस स्थान का पलभा जानना । इस तरह पलभा मालूम करने के पश्चात् उसे चरखंड से गुणाकर द्वादश राशि का पलात्मक उदय उपर दिये हुए रीति के अनुसार लंकोदय के अंको में जोड़ने या घटाने से शुद्ध राश्योदय का समय मालूम हो सकता है । परन्तु यदि किसी को यह करना कष्ट साध्य मालूम होता हो तो नजदीक के शहर का पलभा उपयोग में लाने से गणित में विशेष अंतर नहीं आयगा । अन्यथा स्थूल रीति का उपयोग किये बिना अन्य कोई मार्ग ही नहीं ।

मेषादि द्वादशलग्नफल या लग्नलक्षण

कुंडली के प्रथम स्थान या लग्न में यदि केवल राशि हो तो नीचे लिखे अनुसार फल मिलना निश्चित है जैसेः—

मेष लग्न—कृश शरीर, नाटा, पुराणमताभिमानी परंतु धर्म आचरण कमी, भूरी आंखें, बहुत बाल, गोल चेहरा, वाक्‌पटु, सुंदर, उष्णप्रकृति, वात विकार, कौटुम्बिक सुख कम, कठोर भाषण, वृथाभिमानी, सांपत्तिक नुकसान के प्रसंग, मन की अनिश्चित स्थिति, दीर्घोद्योगी परंतु अनेक समय प्रयत्न में अपयश, धंदा बदलने की अधिक वृत्ति, क्रोधी, लोक प्रतिकूल।

वृषभ लग्न—गौरवर्ण, स्थूल शरीर, काले नेत्र, निष्कपटी, चैनी, सांसारिक बातों में निमग्न, स्थिर व शांत स्वभाव, विचारी, कम बोलनेवाला, गंभीर चेहरा, शीत प्रकृति, लंबा चेहरा, अल्प संतोषी, राजाश्रित, अनिश्चित उत्कर्ष, परिस्थिति में सदैव बदल, स्वतंत्र धंदे की इच्छा, द्रव्य लाभ व संचय के लिये अनु-कूल, वेदांत प्रिय, ईश्वर भक्त, सत्याभिमानी।

मिथुन लग्न—कृश शरीर, अशक्त प्रकृति, नाटा, भूरे नेत्र, अल्प बाल, लंबा चेहरा, विद्वान, तीक्ष्ण विचार, अचाट कल्पना, गूढ़तत्वों के शोध में आतुर, पोषाखप्रिय, सबों पर छाप रखने वाला, शूर, अभिमानी, वादविवाद में यश मिलानेवाला, शास्त्रीय विचार, स्वतंत्र धंदे में निपुण, उद्योगी, द्रव्यवान, खर्चिक परंतु आर्थिक संकटों से मुक्त।

कर्क लग्न—भव्य चेहरा, स्थूल शरीर, स्नायु व अवयव मज-बूत, गोल मुख, गौरवर्ण, बहुत बाल, तैरने में प्रवीण, दूरदर्शी,

निःस्वार्थी, सत्य के लिये कष्ट भोगने वाला, वाक्‌पटु, लेखक, कर्तव्य बुद्धि जागृत, परिश्रमी, कृति व भाषण में समान, लोकनायक व हितवादी, अनुकरणीय, संकटों को न माननेवाला, श्रेष्ठ अधिकार-संपन्न, हितकर्ता, लोगों का मित्र, खंबीर दिलका, ऐहिक सुख के लिये उदासीन, स्वार्थ साधु।

सिंह लग्न—भव्य शरीर, रक्तवर्ण, दीर्घ अवयव, गोल व लाल नेत्र, कम बाल, चौडा चेहरा, मत्सरी, अविचारी, अस्थिर-मन, किसी को न माननेवाला, कृति से बातें अधिक, राजवैभव, राजसभा के लोगों से मित्रता, चमत्कारिक मन की स्थिति, कठोर परंतु परिणाम में हित का बोलनेवाला।

कन्या लग्न—स्थूल व मध्य देह, ऊँचा, गौरवर्ण, गोल चेहरा, चंचल वृत्ति, भपकेबाज पोषाख, सुंदर चेहरा, थोडे बाल, दूसरों का हेवा करने वाला, स्वार्थी, पापबुद्धि, दुष्ट लोगों की संगति, परावलंबी, द्रव्य के संबंध से अत्यंत स्वार्थी, स्त्री प्रिय।

तुला लग्न—साधारण प्रकृति, गौरवर्ण, भव्यमस्तक, लंबा चेहरा, काले नेत्र, बडा नाक, थोडे बाल, तीक्ष्ण बुद्धि, रोगी, स्त्री अभिलाषी, स्वार्थ लोलुप परंतु परहित के लिये कष्ट उठानेवाला, व्यापार में निपुण, प्रत्येक बातों को तोल कर बोलनेवाला, द्रव्य संपन्न, वाहनों का परिक्षक।

वृश्चिक लग्न—ऊँचा कृश शरीर परंतु मजबूत, भूरे नेत्र, कडे बाल, कोती गर्दन, धूर्त, आपमतलबी, कपटी, विद्या अल्प परंतु धाडसी, स्वार्थ के लिये दूसरे का नुकसान चाहनेवाला, मायालू भाषण, दिखने में सीधा, कार्य साधु, व्यवहार कुशल, लोकमत अनुकूल करने में चतुर, महत्वाकांक्षी, सत्यासत्य की पर्वा न करनेवाला,

चाणक्ष, किसी पर भरोसा न करनेवाला, स्वतंत्र विचार, उष्ण प्रकृति।

धन लग्न—स्थूल व भव्य शरीर, चेहरा गोल, भव्य मस्तक, लंबा नाक, साधारण उँचा, लाल गौरवर्ण, स्थिर व शांत स्वभाव, द्रव्य अभाव का दुःख, धंदा व उद्योग में यश कमी, विद्वान, वेदांतविषय प्रिय, आलसी, अल्पसंतोषी, स्थिर बुद्धि, डरपोक, अव्यवस्थित, झगडों से दूर, प्रापंचिक सुख कमी।

मकर लग्न—कृश शरीर, काले नेत्र, लंबा मुँह, द्वेषी, आलसी, मूर्ख, महत्वाकांक्षी परंतु थोड़ा प्रयत्न, लोभी, गहरे दिल का, व्यसनी, विचारहीन, वात विकार, अस्थिर, कम कुवत दिल, सामान्य द्रव्य दृष्टि।

कुंभ लग्न—साधारण कृश शरीर, मध्यम गोरा, चंचल, भूरे नेत्र, थोड़े बाल, बैठा हुआ चेहरा, दिखने में शांत परंतु धूर्त, आप मतलबी, मितभाषी, परावलंबी, उदार, कष्ट से बचनेवाला विद्या पूर्ण, शास्त्रीय विषय में प्रवीण, मान सन्मान प्रिय।

मीन लग्न—स्थूल शरीर, गौरवर्ण, अशक्त प्रकृति, लंबा चेहरा, परोपकारी व दयालु, उदार, धर्म प्रिय, गंभीर, सत्याभिमानी, साधक-बाधक बातों में प्रवीण, आचार विचार में मेल, लोकहित-कम, द्रव्याभिलाषी, खर्चिक, कितीमान, लोगो में सन्मान, धंदे में प्रसिद्ध, यशस्वी।

द्वादश लग्न का फल हमने संक्षिप्त में वर्णन किया है परंतु लग्न में यदि ग्रह स्थिति हो अथवा दृष्टि व युति हो उस ग्रह के शुभाशुभ गुण धर्म स्वाभावानुसार उपर लिखे हुए फल में फेर बदल होना निश्चित है क्योंकि किसी भी भाव में ग्रह के रहते हुए उस भाव के राशि का फल मिलना संभव नहीं। लग्न से

मनुष्य के शरीर आकार, आँख, नाक, मस्तक, चेहरा, रूप, रंग बाल, बुद्धि, मानसिक स्थिति आदि का ज्ञान मालूम किया जा सकता है परन्तु लग्न फल निश्चित करते समय शुभाशुभ ग्रहों की स्थिति, दृष्टी आदि का विचार कर फलित वर्तने से ही योग्य फल का मिलना संभव है। लग्न के साथ यदि ग्रह स्थित हो तो निचे लिखे अनुसार लग्न का फल मिलेगा यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये, जैसे:—

लग्न में रवि—मध्यम उंचा शरीर, साधारण गौरवर्ण, कम बोलने वाला, उत्साही, तामसी, धाड़सी, चित्त प्रकृति,

लग्न में चन्द्र—सुन्दर, गोरा, रूपवान, मितभाषी, स्त्रियों को प्रिय, तेजस्वी आंखे, चंचल स्वभाव, दुबला पतला शरीर, सौम्य प्रकृति, कफवात पित्त प्रकृति,

लग्न में मंगल—कृश शरीर, लाल वर्ण व आंखे, चेहरे पर-माता के दाग, धैर्यवान, उदार, चंचल वृत्ति, क्रूर दृष्टि, तामसी, उग्रस्वभाव,

लग्न में बुध—प्रसन्न मुख, कृष्णवर्ण, विनोदी भाषण, मज-बूत शरीर, बुद्धिमान, पिंगटनेत्र, बोलने में प्रवीण, कफ वात पित्त प्रकृति।

लग्न में गुरु—साधारण गोरा स्थूल शरीर, काले नेत्र, लंबा नाक, ऊँचा मस्तक, पिंगट बाल, सदाचारी, विद्वान, स्थिर चित्त, गंभीर स्वभाव, ग्रंथ पठन का शौकीन।

लग्न में शुक्र—शुभ्र गोरा कोमल शरीर, सुंदर व तेजस्वी कांति, पानीदार आंखे, घुंघरवाले बाल, ऐट बाज पोषाख, व्यव-स्थित कारभारप्रिय, सुंगंधी पदार्थों का शौकीन व स्त्री प्रिय।

लग्न में शनि--काला रंग, कृश शरीर, पीलेनेत्र, बल हीन, मंद बुद्धि, कृपण, आलसी, मित भाषी, कड़े बाल, उत्साही परंतु क्रोधी, स्वार्थी परंतु परहित विचारी, वात प्रकृति।

लग्न में राशि और ग्रह के स्थित होने से जो निश्चित फल मिलता है, वह उपर लिखे अनुसार है। किंतु फल निश्चित करते समय ग्रहों के शुभाशुभ दृष्टि का भी विचार करने से योग्य फल अनुभव में आयगा यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

जन्म ग्रह और गोचर ग्रह

आकाशस्थ ग्रह अपने मार्ग व गति से नित्य भ्रमण करते हैं यह सर्वश्रुत है। मनुष्य के जन्म समय जो ग्रह जिस राशि में भ्रमण करते हुए मिलते हैं उन्हें जन्म ग्रह कहते हैं और वर्तमान समय वार्षिक पञ्चांगों में जो ग्रह जिस राशि में भ्रमण करते हुए वर्णित हैं उन्हें गोचरग्रह कहते हैं। जन्म ग्रह का फल मनुष्य को आजन्म मिलता है किंतु गोचर ग्रहों के फल वे जिस राशि में जितने समय तक स्थित रहते हैं उतने ही समय तक मिलता है। गोचर ग्रहों से वर्तमान समय शुभाशुभ फल मिलना संभव है अथवा नहीं यह निश्चित रीति से मालूम हो सकता है इसीलिये इनकी भ्रमण गति व स्थिति का वार्षिक पंचांगों द्वारा ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। जन्म लग्न या राशि से गोचर ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति का निर्णय करते समय जन्म या गोचर ग्रह दोनों शुभ स्थान में हों तो श्रेष्ठ फल, एक शुभ और दूसरा अशुभ स्थान में हो तो मध्यम फल और दोनों अशुभ स्थान में हों तो कनिष्ट फल मिलेगा। लग्नेश, धनेश, दशमेश व

लाभेश इन ग्रहों पर से जब गोचर ग्रह भ्रमण करते हैं तभी वे महत्व-पूर्ण शुभाशुभ फल देते हैं। इसी तरह ३–५–९–११ भावों से जब गोचर ग्रह भ्रमण करते हैं वे भी अपने शुभाशुभ स्थिति के अनुसार शुभाशुभ फल देते हैं। परंतु श० और मं० यदि २–३–६–७–८ इन भावों के स्वामी होकर इन्हीं स्थानों में हों अथवा १–४–५–९–१० इन भावों के स्वामी से अशुभयोग करते हों तो वे अनिष्ट फल अवश्य देंगे इसमें संदेह नहीं। पंचांग में जो कुंडलियाँ लिखी जाती हैं वे पक्ष के आखरी दिन अर्थात अमावस्या या पौर्णिमा की सूर्योदय कुंडलियाँ हैं। सूर्योदय कुंडली का यह अर्थ है कि सूर्य जिस राशि में हो उसी राशि को सूर्यसहित लग्न में लिखकर जो कुंडली लिखी जाती है उसे सूर्योदय कुंडली कहते हैं। जन्म राशि से गोचर या जन्म ग्रह किस स्थान में स्थित रहने से वे अपना शुभाशुभ देते हैं यह नीचे लिखा है जैसेः—

जन्म राशि से—गोचर या जन्मग्रह याने र. मं. श. रा. यदि ३–६–११ स्थान में हों तो पाप ग्रह शुभ फलदायी समझे गये हैं। किंतु रवि, २–४–८–१२ भाव में, मंगल १–२–४–७–८ भाव में और श. रा.—१–२–४–८–१०–१२ भाव में हों तो अशुभ फलदायी समझना चाहिये।

जन्मरासि से—बुध का २–४–६–८–१०–११ भाव में रहना शुभ और ४–८–१२ स्थान में रहना अशुभ माना गया है।

जन्मराशि से—गुरु का २–५–७–९–११ स्थान में रहना शुभ और ६–८–१२ स्थान में रहना अशुभ माना गया है।

जन्मराशि से—शुक्र का १–२–३–४–५–९–११–१२ भाव में रहना शुभ और ७–१० स्थान में रहना अशुभ माना गया है।

इन स्थानों के सिवाय यदि अन्य स्थानों में ये ग्रह यदि स्थित हों तो मिश्रित फल मिलेगा।

गोचर ग्रहों के फल समय

गोचर ग्रह किसी भी राशि में आने के पश्चात् वे कितने समय में अपना शुभाशुभ फल देते हैं यह नीचे लिखा है जैसेः—

ग्रह	स्थित काल	फल समय
र.	१ महीना	प्रथम ५ दिन
चं.	२। दिन	आखरी ३ घटी
मं.	१।। महीना	प्रथम ८ दिन
बु.	१ महीना	सर्वकाल
गु.	१३ ,,	मध्य २ महीना
शु.	१ ,,	,, ७ दिन
श.	३० ,,	आखरी ६ महीना
रा.	१८ ,,	,, २ ,,
के.	१८ ,,	,, २ ,,

ग्रहयोग

किसी भी राशि में जब दो या अधिक ग्रह जन्म समय अथवा वर्तमान समय में एकत्रित होते हों उसे ग्रहयोग कहते हैं। शुभग्रहों के दो तथा अशुभ ग्रहों के संयोग से शुभ तथा अशुभ फल मिलना स्पष्ट है किंतु शुभ और अशुभ ग्रहों के एक ही राशि में स्थित होने से किस तरह का फल मिलेगा इसका विचार करना

यहाँ आवश्यक है। एक ही राशि में भिन्न-भिन्न गुण धर्म स्वभाव के दो या अधिक ग्रहों का जब संयोग होता है ऐसे समय दोनों में से कौन सा ग्रह बलवान है यह प्रथम ध्यान में लाना चाहिये। और इसमें जो ग्रह अधिक प्रभावशाली हो उसी के अनुसार मनुष्य को फल मिलेगा यह समझना चाहिये। जैसे सदाचारी मनुष्य के प्रभाव से दुराचारी भी सदाचारी हो सकता है और दुराचारी के प्रभाव से सदाचारी भी दुराचारी हो सकता है। ग्रहों का बली या निर्बली होना यह उनके उच्च या नीच राशि और अंश पर निर्भर है। इसके अतिरिक्त अन्य योग भी है जिसके लिये ग्रहों के युति या संयोग की कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि उनमें आकर्षण शक्ति होने के कारण वे केवल अपने स्थान में स्थित रहते हुए भी दूसरे स्थान के ग्रहों पर अपना शुभाशुभ प्रभाव दिखा सकते हैं। इन योगों के नाम भिन्न भिन्न हैं जैसे:—

(१) युति योग (२) द्विर्द्वादश योग (३) त्रिरेकादश योग (४) केन्द्योग (५) समसप्तक योग (६) षडाष्टक योग (७) नव-पंचम योग !

(१) दो ग्रह जब एक ही भाव में हों तो उसे युति योग कहते हैं।

(२) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब द्वितीय या द्वादश स्थान में हो तो उसे द्विर्द्वादश योग कहते हैं।

(३) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब तृतीय और एकादश स्थान में हो तो उसे त्रिरेकादश योग कहते हैं।

(४) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब चतुर्थ या दशम स्थान में हो तो उसे केंद्र योग कहते हैं।

(५) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब पंचम या नवम स्थान में हो तो उसे नवपंचम योग कहते हैं।

(६) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब षष्ठ या अष्टम भाव में हो तो उसे षड़ाष्टक योग कहते हैं।

(७) एक ग्रह से दूसरा ग्रह जब सप्तम भाव में हो तो उसे समसप्तक योग कहते हैं।

जन्मकुंडली के विशेष योग याने आरोग्य, संपत्ति, संतति, विद्या, स्थावर व धन लाभ, स्त्री सौख्य, राजवैभव, श्रेष्ठ अधिकार, लोकमान्यता, व्यापार, नेतृत्व, व इसके उलट संकट, शत्रुपीडा; रोग, द्रव्यनाश, गृहकलह, अपघात, मातृ, पितृ, बंधु, संतति व स्त्रीनाश, अपयश, अधिकार भ्रष्ट, व्यापार में नुकसान, स्थावरनाश, पराधीनता, दैन्यावस्था, लोकोपवाद आदि हैं। जन्मकुंडली के आधार पर इनमें से किस प्रकार का फल किस समय पर मिलेगा यह जानना तथा काल निर्णय करना यही इस शास्त्र का वैशिष्ट है। इनका विचार करते समय लग्न, चतुर्थ, पंचम, नवम और लाभ स्थान तथा इनके स्वामी के शुभाशुभ स्थिति का विचार अवश्य करना चाहिये। जन्म ग्रह से गोचर ग्रह संयोग करने पर जब वे अपने अंश पर पहुँचते हैं उसी समय उनके शुभाशुभत्व का फल मनुष्य को मिलना निश्चित है। ऊपर लिखे हुए योगों में से त्रिरेकादश योग और नवपंचम योग-अत्यंत शुभ, द्विर्द्वादशयोग और युति योग शुभाशुभ, केंद्र योग-अशुभ, षडाष्टक योग-अत्यंत अशुभ, और समसप्तम योग ग्रहानुसार शुभ और अशुभ-फलदायी हैं। ग्रहों के परस्पर युति या संयोग से अन्य कई योग प्राप्त हो सकते हैं जैसे:—वेदांतविद्या योग, ब्रह्मज्ञान योग, बंधन योग, चोर

योग, व्यभिचार योग, वैराग्य योग, दारिद्र योग, धन लाभ तथा द्रव्य संचय योग आदि। किंतु इन सब योगों में धन लाभ योग सांसारिक मनुष्य के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण है अतः इसके विषय में प्रथम यहाँ विचार करना हम आवश्यक समझते हैं।

धन लाभ व द्रव्य संचय योग

प्रत्येक सांसारिक मनुष्य को इस जगत् में अपना जीवन सुख से व्यतीत करने के लिये धन की उतनी ही अधिक आवश्यकता है जितनी की उसे अपने प्राण रक्षण के लिये हवा व पानी की है। 'इस अखंड मंडलाकारम्' में इतनी अद्वितीयशक्ति, अद्भुद् जादू, विचित्रमोह, अमोघ आकर्षणशक्ति, और अखंड प्रेम कूट २ कर भरा है कि मनुष्य को इसके सिवाय एक क्षण जीवित रहना असह्य हो जाता है व इसे प्राप्त करने के लिये वह शारीरिक, मानसिक, आप्तवर्ग, धर्मकर्मादि सुखों को तिलांजली देने के लिये तत्पर रहता है। लक्ष्मी ने जगत के सारे मनुष्य को चाहे वह श्रीमान हो या गरीब, साधु हो या संत, ज्ञानी हो या अज्ञानी, सांसारिक हो या संन्यासी अपने मोह जाल में इस तरह आकर्षित कर रक्खा है कि वह उसे प्राप्त करने के लिये सदैव चिंतित रहता है, अघोर प्रयत्न करता है, सर्व सुखों का त्याग करता है, ईश्वर चिंतन करता है, और इतने पर भी यदि उसे अपयश मिला तो वह अघोर पापकर्म करने के लिये भी नहीं डरता। इतना ही नहीं किंतु अनेक प्रसंगों पर वह अपने प्राण की बाजी लगाकर अपनी जीवन यात्रा भी समाप्त कर बैठता है। लक्ष्मी में इतनी प्रचंड शक्ति है कि उसका आगमन होते ही मनुष्य अविद्य हो तो विद्वान, दुर्गणी हो तो सत्गुणी, मूर्ख हो तो गुणवान, कुरूप हो तो सुस्वरूप

और कीर्तिमान एक क्षण में दिखने लगता है। सारांश—"सर्वेगुणाः कांचनमाश्रयंति" इस कहावत का प्रत्यक्ष प्रमाण लोगों के अनुभव में प्रतिक्षण आता है। कांचन का महत्व जगत् में इतना अधिक होने के कारण यदि प्रत्येक मनुष्य "मुझे कब धन मिलेगा" यह जानने के लिये उत्सुक होता हो तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु जन्म कुंडली के सिवाय अन्य मार्ग में इसका ज्ञान होना असंभव है। धनलाभ व द्रव्य संचय के विषय यदि मनुष्य जानना चाहता हो तो जन्म कुंडली में किन ग्रहों के किस राशि में स्थित रहने से यह फल मिलना संभव है इसका प्रथम विचार करना चाहिये। जैसे:—

राशि	ग्रह	राशि	ग्रह
मेष	शु. श.	तुला	र. मं.
वृषभ	गु. शु.	वृश्चिक	बु. गु.
मिथुन	चं. मं.	धन	शु. श.
कर्क	र. शु.	मकर	श. मं.
सिंह	बुध	कुंभ	गुरु
कन्या	चं. शु.	मीन	श. मं.

उपर लिखे हुए राशियों में यदि नियोजित दो ग्रह हों तो उत्तम फल, एक हो तो मध्यम, और न हो तो अनिष्ट फल मिलना निश्चित है। धनलाभ ग्रह और राशि का विचार करते समय यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि ये ग्रह लग्न और जन्म राशि से किस भाव में स्थित हैं। क्योंकि:—

(१) लग्न से शुभ ग्रह ८–६–१२ भाव को छोडकर किसी भी भाव में हों तभी शुभ फल मिलना संभव है।

(२) जन्म राशि से द्वितीय भाव में शुभग्रह अवश्य होना चाहिये।

(३) लग्न या राशि से द्वितीय स्थान में गु. शु. या द्वितीय में शुक्र और चतुर्थ स्थान में गुरु अवश्य होना चाहिये।

(४) लग्न या राशि से पापग्रह ३–६–१०–११ भाव में अवश्य होना चाहिये अन्यथा ८–१२ भाव में हों तो विपरीत फल मिलेगा।

सट्टा शर्यत् व लाटरी से धनलाभ

जन्म कुंडली में (१) बु. शु. र. मं. बलवान होना चाहिये। (२) लग्न या राशि से रवि ३–६–११ भाव में हो तो रेसेस से फायदा होगा परन्तु इन भावों पर शुभ ग्रहों की दृष्टि होना आवश्यक है। (३) जन्म लग्न या राशि से रवि २–५–१० भाव में होकर लग्नेश या चंद्र से युक्त हो और इनपर अशुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो विशेष लाभ होगा। (४) र. मं. बु. शु. ये ग्रह अपने या उच्च राशि में होकर २–४–५–९–१०–११ स्थान में हों तो सट्टा से निरंतर लाभ होगा। और इन भावों में यदि चं. मं., र. चं., र. बु., र. शु., र. मं., मं. बु., मं. शु. लग्नेश से युक्त व दृष्ट हो और शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो विशेष लाभ होगा।

दरिद्र योग

(१) शुभ ग्रह केंद्र त्रिकोण को छोड़ अन्य भाव में हों और पापग्रह ३–११ में हों।

(२) २–९–१०–११ भाव के स्वामी निर्बली हों।

(३) बु.गु.शु. केंद्र में न हों और मंगल दशम भाव में न हो।

(४) केंद्र में शुभ ग्रह न हो अथवा एक भी ग्रह स्वराशि, मूल त्रिकोण या उच्च राशि का न हो।

(५) तीन ग्रह नीच के हों।

(६) सब ग्रह चर राशि में हों।

(७) केंद्र में पाप ग्रह हों।

(८) ७-८-९-१० में सब ग्रह हों।

(९) राहु केतु को छोड सब ग्रह लगातार तीन राशि में हों।

(१०) ,, ,, ,, दो ,, ।

(११) केंद्र व धन भाव में पापग्रह हों।

(१२) चंद्र मंगल परस्पर समसप्तम भावमें हों।

(१३) धन भाव में केवल शनि हो तो धन का चोरी से नाश।

वैराग्य योग

(१) चतुर्थ भाव में बुध व दशम भाव में शनि हो तो मनुष्य विरक्त स्वभाव का होगा।

(२) दशमेश शनि से युक्त होकर दशम भाव में ही हो ,,

(३) दशम भाव में चं. बु. हो व शनिकी दृष्टि हो ,,

(४) १-९-११ राशि का केतु व्यय भाव मे हो ,,

वेदांत विद्या योग

केंद्र या त्रिकोण में यदि गुरु स्थित हो तो मनुष्य वेदांत विषय प्रिय होगा।

ब्रह्मज्ञान योग

स्वगृह या उच्चराशि का गुरु यदि १-६-८-१०-११-१२ भाव में हो तो मनुष्य ब्रह्मज्ञानी होगा।

चोर योग

१—बु. मं. छठवें भाव में बलवान होकर शनि से दृष्ट हों तो मनुष्य चोर होगा।

२—लग्न में मकर का मंगल हो और सप्तम भाव में शनि हो तो राज दंड होगा।

३—लग्नेश पापग्रह से युक्त होकर नीच भाव में और तृतीयेश लाभ भाव में हो तो चोर योग।

४—लग्नेश पापग्रह होकर लग्न में पापग्रह स्थित हो व तृतीयेश नीच का हो तो मनुष्य चोरों का गुरु होगा।

५—लग्नेश व तृतीयेश नीच राशि व भाव में होकर नीच ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो चोर योग।

बंधन योग

१ २–५–९–१२ भाव में पापग्रह हो या पापग्रह की दृष्टि हो तो बन्धन योग समझना किंतु इन भावों पर यदि गुरु की दृष्टि हो तो सब दुःखों का नाश होगा।

व्यभिचार योग

१—सप्तम भाव में मंगल हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि हो।

२—शुक्र मंगल से युक्त अथवा दृष्ट हो।

३—सप्तम भाव में शुक्र हो और शनि से दृष्ट हो।

४—सप्तम भाव में श. मं. रा. स्व वा उच्च राशि के हो।

५—१–२–५–६–७ भाव के स्वामी शुक्र या पाप ग्रह से युक्त हों!

६—लग्नेश व षष्ठेश शनि मंगल से युक्त हो तो परस्त्री रत ।

७—२-७-१० भाव के स्वामी चतुर्थ भाव में हो तो पर-स्त्री गमन ।

८—चन्द्र पापग्रह से सप्तम भाव में युक्त व दृष्ट हो ।

९—सप्तमेश मं. से युक्त व दृष्ट हो ।

१०—सप्तमेश पुरुष ग्रह होकर पापग्रह से युक्त व दृष्ट हो ।

ऊपर लिखे हुए योगों के अतिरिक्त कई योग हैं जिनका यहाँ सविस्तर वर्णन करना अशक्य है । परंतु पाठकों के लाभार्थ इस पुस्तक के आखरी भाग में कुछ महत्व पूर्ण कुंडलियों का उल्लेख किया है जिससे पाठकों को अन्य योगों का ज्ञान सहज हो सके और कुंडली के फलित वर्तने में सहायता मिले ।

हर्शल व नेपच्यून

पाश्चात्य संशोधक तथा ज्योतिषज्ञों ने इन दोनों ग्रहों का शोध किया है यह हम पहिले लिख चुके हैं । अतः इनका संपूर्ण वर्णन पाश्चात्य ग्रन्थों में होना स्वाभाविक है और पाश्चात्य ज्योतिषी फलित वर्तते समय इन दोनों ग्रहों के शुभाशुभ परिणामों का विचार अधिकतर करते हों तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं । परंतु इस देश के प्रत्येक ज्योतिषज्ञ यदि इन ग्रहों के गुण धर्म स्वभाव युति दृष्टि व शुभाशुभ परिणाम से आज तक परिचित न हो सके तो यह दोष उनका नहीं किंतु परिस्थिति, साधन तथा राजाश्रय के अभाव का है यह स्पष्ट सिद्ध होता है । क्योंकि देश की स्वतंत्रता नष्ट होने के कारण इस देश के विद्वानों को राजाश्रय न मिलना और इस शास्त्र की प्रगति होना असंभव है । तथापि

इस देश के सुप्रसिद्ध विद्वान ज्योतिषज्ञ व अनेक ज्योतिष ग्रन्थों के निर्माता कै० पं०शं०बा० दीक्षित तथा रा.रा. गणेश शास्त्री देशिंगकर ने अपने ग्रन्थों में ५० वर्ष पूर्व इन ग्रहों का पूर्ण विवेचन करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है। जिसका परिणाम यह देखने में आता है कि महाराष्ट्र पंचांगों में इन ग्रहों का वर्णन किया जाता है और इससे यह सिद्ध होता है कि इन दो नये ग्रहों के शुभाशुभ परिणाम पर महाराष्ट्र प्रांत के ज्योतिषज्ञों का पूर्ण अविश्वास हो गया है। परंतु हिन्दी पंचांगों में इनका वर्णन न होने के कारण इनके विषय में यहाँ अधिक लिखना योग्य न होगा। तथापि पाश्चात्य संशोधक व ज्योतिषज्ञों ने अपने अविश्राम परिश्रम से इन ग्रहों का शोध किया और वर्तमान युग में इनका परिणाम मनुष्य प्राणी पर पड़ना आरंभ हो गया यह मान्य किये जाने के कारण इनके विषय में यहाँ पाठकों के लाभार्थ संक्षिप्त में विवेचन करना अत्यंत आवश्यक है ऐसा हमारा मत है। हमारे देश के सुप्रसिद्ध ज्योतिषज्ञ कै० पं० जनार्दन बालाजी मोडक महोदय ने कई वर्ष पूर्व शास्त्रके आधार हर्शल (यूरेनस) को प्रजापति और नेपच्यून को वरुण यह संज्ञा दे रक्खी है। अतः मराठी में हर्शल को प्रजापति और नेपच्यून को वरुण कहते हैं किंतु पंचांगों में ह० ने० लिखने की ही प्रथा है। पाश्चात्य संशोधक व फलित शास्त्रज्ञों ने इन दोनों नये ग्रहों का अपने ग्रंथों में यह वर्णन किया है कि :—

हर्शल (यूरेनस) प्रजापति

यह सूर्य से १७७ कोटि ७१ लाख मील के दूरी पर है। इसका व्यास ३२००० मील, आकार पृथ्वी से ६४ गुना अधिक

और द्रव्य पदार्थ पृथ्वी से १४ गुना अधिक है। इस ग्रह को सूर्य की एक परिक्रमा करने के लिये ८३ वर्ष ११ महिना ४ दिन का समय लगता है अर्थात् इस ग्रह को प्रत्येक राशि का भ्रमण पूरा करने के लिये ७ वर्ष ६ महिना याने प्रत्येक अंश भ्रमण करने के लिये २ महिना २४। दिन का समय लगता है। गुणधर्म स्वभाव–यह ग्रह शनि से अत्यंत खल, बलिष्ट, वायुवेग से कार्य करनेवाला, आकस्मिक घटना व रोग उत्पन्न करनेवाला, अनिश्चित, विलक्षण, विचित्र, सुधारणा प्रिय, लहरी, वियोग व स्थान त्याग प्रिय है। वर्तमान समय जगत में वायुवेग–रेलवे, तार, मोटर, प्रेस, सायकल, बिजली, ग्यास, टाईपरायटर, टेलिफोन, घडी, हवाई-जहाज आदि शीघ्र गतिवाक यंत्रों के शोध व नित्य उपयोग से तथा वायु प्रकोप सम्बंधी आकस्मिक बिमारियां प्लेग, इन्फ्लुएन्जा, हृदयरोग, पागलपन, अपस्मार, हिस्टीरिया, आदि रोगों से व सुधारणा प्रिय देशों में अनेक त्याग पत्रों की बिमारी जैसे स्त्री त्याग, पति त्याग, मातृ पितृ बंधु त्याग आदि से यह सिद्ध होता है कि इस ग्रह का प्रभाव जगत् के मनुष्य प्राणि पर पड़ने लगा। अतएव इस के सम्बंध से पाश्चात्य शास्त्रज्ञों ने अपने ग्रथों में जो वर्णन किया है वह ध्रुवसत्य है ऐसा मानना पड़ता है। कुंडली का फलित निर्णय करते समय पाश्चात्य ज्योतिषी प्रथमतः व विशेषतः इन ग्रहों के शुभाशुभ फलों का विचार अधिक किया करते हैं। इतना ही नहीं किंतु इन ग्रहों के सिवाय उन्हें फलित कथन करना कष्टमय मालूम पड़ता है। परंतु प्राचीन काल से इस देश के शास्त्रज्ञ वेग के संबंध से गुरु और केतु, और वैवाहिक जीवन के संबंध से मंगल का उपयोग करते आ रहे हैं। उसी तरह

श०शु०रा० के आधार पर रोगों का विचार किया करते हैं। कुंभ इस ग्रह की राशि है क्योंकि यह वायु-वेग प्रिय ग्रह है अतः शनि ने अपनी यह वायु राशि उसके गुणधर्मानुसार उसे दी है।

जिस पुरुष के कुंडली में चन्द्र हर्शल से युक्त हो व स्त्री के कुंडली में रवि-हर्शल से युक्त हो, केंद्र तथा प्रतियोग करता हो तो ऐसे स्त्री या पुरुष का परस्पर विवाह न करना उचित है। उसी तरह ५–७ स्थान में हर्शल हो तो उस पुरुष व स्त्री की चालचलन संशयास्पद समझना। इस ग्रह को गूढ व चमत्कारिक शास्त्र जैसे तंत्र-मंत्र, सामुद्रिक ज्योतिष आदि विद्या अधिक प्रिय है। यह अशुभ व तमोगुणी है। शास्त्रज्ञों का यह मत है कि इस ग्रह का प्रभाव क्रम से इस देश में पडना शुरू हो गया।

राशि विचार—हर्शल-मिथुन, तुला व कुंभराशि में अत्यंत बलवान समझा जाता है और मेष व वृश्चिक राशि में अत्यंत घातक फल देता है। जन्म समय हर्शल जिस राशि में जितने अंश पर हो उतने ही अंश पर जब वह दूसरे राशि में पहुँचता है तभी अपना शुभाशुभ फल देना आरंभ करता है। यह ग्रह ई०स० १८५१ में मेष राशि में था और १८५७ ई० स० में वृषभ राशि में २१ अंश पर था। वर्तमान समय यह ग्रह मेषराशि के शनि से ता० ११–५–१९३९ को युक्त हुआ था और वर्तमान महायुद्ध का ता० ३–९–१९३९ आरंभ हुआ यही इस के अशुभ राशि और ग्रह के अशुभ-युति का साक्षात उदाहरण है। विद्वान लोग इस पर से भविष्य का अनुमान कर सकते हैं।

भाव विचार—यह ग्रह ५–९–१०–११ स्थान में हो तो शुभ समझा गया है किंतु अन्य स्थानों में अशुभ माना गया है। जैसे:—

लग्न में हर्शल—मनुष्य लहरी होगा परंतु ३-७-११ राशि का हो तो तीव्र बुद्धि व शोधक वृत्ति का होगा।

द्वितीय में हर्शल—कौटुंबिक सुख के लिये प्रतिकूल व अशुभ राशिका हो तो द्रव्य हानि।

तृतीय में हर्शल—मातृ सुख विघातक, सदा स्थानांतर, यांत्रिक वाहन व रेल प्रवास।

चतुर्थ में हर्शल—भूमि या जल राशि का हो तो खेती से लाभ

पंचम में हर्शल—३-७-११ राशि का हो तो ज्ञानवान, विद्वान, शर्यंत आदि में यश।

षष्ठ में हर्शल—चंद्र से पीडित हो तो अग्निमांद्य, अपचन विकार रोगी। सैन्य आरमार प्रिय।

सप्तम में हर्शल—वैवाहिक जीवन सुख का नाश पर राष्ट्रीय संबंध।

अष्टम में हर्शल—मृत्युकाल स्थिति की चमत्कारिक परिस्थिति। खून, आत्महत्या, सी. आय. डी की नौकरी।

नवम में हर्शल—तत्वज्ञान, वक्ता, धार्मिक संस्था, शास्त्रीय शोध सुधारणाप्रिय।

दशम में हर्शल—राजा व राजकीय वर्ग से संबंध।

एकादश में हर्शल—देशी संस्था व कायदे कौंसिल से संबंध।

द्वादश में हर्शल—जेलखाना, दवाखाना डाकखाना से संबंध व कैद आदिका योग।

हर्शल बुध से युक्त हो तो बौद्धिक सामर्थ्य देता है, गुरु से युक्त हो तो अध्यात्म व वेदांत विषय में रुचि प्राप्त करता है। किंतु शुक्र से युक्त हो तो वैवाहिक जीवन बिगाडता है।

नेपच्यून (वरुण)

यह ग्रह सूर्य से २७७ कोटि मील दूर है। इसका व्यास ३४॥ हजार मील है। आकार पृथ्वी से ८३ गुने अधिक है। द्रव्य पदार्थ पृथ्वी से १७ गुने अधिक है। इसे सूर्य की एक परिक्रमा करने के लिये १६५ वर्ष का समय लगता है अर्थात् एक राशि में यह ग्रह १३ वर्ष ९ महीने रहता है।

गुणधर्म स्वभाव—यह जल राशि ग्रह है अर्थात् मीन यह इसकी राशि है। इसका धर्म गुरु चंद्र के समान शुभ है। आत्मा का विकास, पूर्वजन्म संस्कृति, व तदनुसार इस जन्म के शील का दिग्दर्शन, रवि के अपेक्षा वरुण से निश्चय पूर्वक कर सकते हैं। जल में रंग मिलानेसे जिस तरह जल का रंग बदलता है उसी तरह वरुण से जो ग्रह युक्त हो वैसा ही वह फल देता है। यह जल राशि ग्रह होने के कारण गुरु ने इसे अपनी मीन राशि अर्थात् जल राशि का अधिकार दिया जो कि इसका स्वग्रह है इसका प्रभाव रक्त प्रवाह में अधिक है। इस ग्रह को चंद्र बु. गु. शु. प्रिय हैं बाकी के अप्रिय हैं। गूढ विद्या, ज्ञान, वेदांत व अध्यात्म विषय, पवित्र दिव्य प्रेम, अंतर्ज्ञान, स्वप्न सृष्टि चमत्कार आदि इसका धर्म है। यह ग्रह १–५–९ स्थान में सत्व प्रधान, २-४-६ ८–१२ में तम प्रधान, ३–७–१०–११ में रज प्रधान समझा जाता है परंतु यदि अशुभ स्थान और राशि में हो तो मनुष्य के मन का झुकाव पाप वृत्ति की ओर होता है। इस ग्रह को ११-७-३-४-१२ इस क्रमसे ये राशियां प्रिय हैं बाकी की अप्रिय हैं। यह ग्रह यदि १–३–५–९–११ स्थान में ४-८-१२-३-७-११ राशि से युक्त हो व स्थित हो तो ऊँचा फल मिलेगा यह निश्चित जानना।

द्वादश भावफल

लग्न में वरुण—जल प्रवासी, गौर वर्ण, शीघ्र संस्कारी, निद्रा रोगी।

द्वितीय में वरुण—सांपत्तिक हानि, कुटुंब हानि।

तृतीय में वरुण—१-३-५-९-११ स्थान के स्वामी से शुभ योग करता हो तो प्रवास से लाभ, कल्पना चातुर्य, बुद्धिमत्ता मानसिक उत्कर्ष।

चतुर्थ में वरुण—माता को कष्ट, सौतेली माँ का योग, अंतिम समय एकांतवास, पापग्रह से युक्त हो तो मुकद्में कैद, आपत्ति, खेती में नुकसान।

पंचम में वरुण—पंचमेश व गुरु से युक्त हो तो पुत्र संतति व
" शुक्र " कन्या "
शु. से अशुभ योग करता हो तो व्यभिचार वृत्ति।

षष्ठ में वरुण—र. चं. युक्त व दृष्ट हो तो मूत्राशयरोग, अतिसार, संग्रहणी, नौकरों से त्रास। विश्वासघात, झगड़ा जल राशि का वरुण लाभदायक।

सप्तम में वरुण—जल राशि का हो तो सुंदर रूप व स्वभाव-वाली स्त्री का लाभ। स्त्री राशि या ग्रह से युक्त हो तो स्त्री से लाभ। पाप ग्रह से पीड़ित हो तो आयुष्य का मध्य भाग त्रासदायक, स्त्री को कष्ट, दावे में नुकसान, भागीदारी से हानि, असंतोष वैवाहिक जीवन, श. मं. रा. से युक्त हो तो अत्यंत अशुभ फल।

अष्टम में वरुण—शुभ ग्रह से युक्त हो तो आकस्मिक लाभ। पाप ग्रह से दृष्ट व युक्त हो तो मृत्यु पत्र, वारसहक्क संबंधी नुक-सान, राज दरबार से हानि, गुह्य भाग में विकार।

नवम में वरुण—धर्म शास्त्र, संस्कृति, आत्मोन्नति के लिये पोषण। पत्नी के बड़े भाई, बहिन, भावज का विचार। चर राशि का हो तो प्रवासी।

दशम में वरुण—इस स्थान की राशि व उसका स्वामी, ग्रह, दृष्टि, युति आदि का शुभाशुभ विचार कर फल निश्चित करना चाहिये।

एकादश में वरुण—मित्र, बहू, जामात, लाभ, आदि का विचार।

द्वादश में वरुण—यह स्थान अष्टम स्थान का त्रिकोण स्थान है गुप्त शत्रु, दंड, कैद, खर्च आदि। यह स्थान दशम स्थान से तृतीय है अर्थात् इस स्थान से अधिकतर प्रवास का विचार किया जाता है। नौकरी धंदा में अधिक प्रवास, गुप्त पोलिस, जेल, पागलखाना की नौकरी से लाभ। जल राशि का होकर चंद्र से युक्त हो तो जहाज में नौकरी, मंगल से हो तो अस्पताल की नौकरी व शनि से शुभ दृष्ट हो तो गुप्त खाते की नौकरी मिलेगी। इस स्थान का वरुण याने इस जन्म का व्यय व अगले जन्म की सामग्री एकत्र करने वाला होता है, यह शारीरिक व मानसिक शक्ति का व्यय करने का स्थान है।

हर्शल के अपेक्षा वरुण चंचल, दैवी, गूढ़ विद्या प्रिय, सामर्थ्यवान व संस्कार प्रिय है। प्रजापती तामस व वरुण सत्व प्रधान ग्रह है। प्रजापति यह यमलोक का गोल और वरुण यह इंद्रलोक का गोल है ऐसा कहते हैं।

द्वादश भाव विचार

कुंडली के द्वादश स्थान जहाँ मेषादि द्वादश राशि अंक रूप से स्थित होते हैं उन्हें भाव कहते हैं। इनका आरंभ जिस स्थान से होता है वह नीचे लिखा है:—
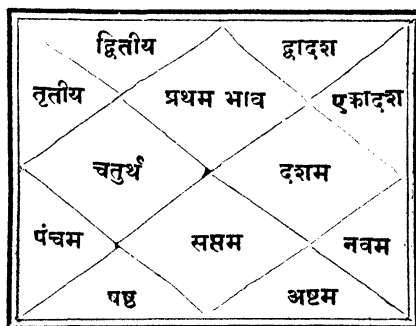
इन भावों से अनेक बातों का बोध होता है परंतु नित्योपयोगी बातों का यहां उल्लेख करना आवश्यक है जैसे:—
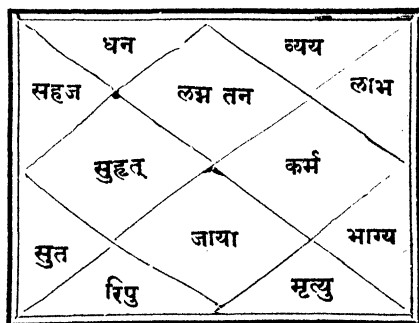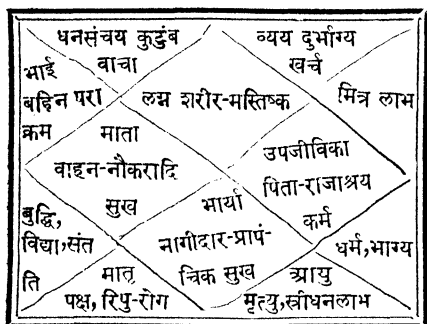
शारीरिक भाग
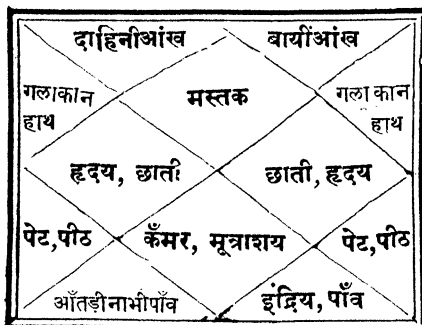
सम्बन्धियों का ज्ञान
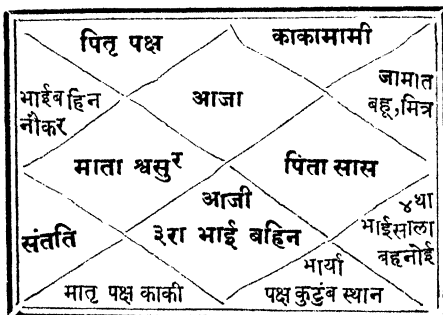
उपर लिखे हुए कुंडलियों में द्वादश भाव हैं और राशि भी बारह हैं अतः प्रत्येक भाव में प्रत्येक राशि का स्थित होना स्वाभाविक है परंतु इन राशियों के स्वामी ग्रह केवल सात हैं इसलिये ग्रहों का प्रत्येक भाव में स्थित होना असंभव है और ऐसी स्थिति में अपने २ भाव (घर) का प्रबंध नौकरों के जिम्मे किये बिना उन्हें अन्य मार्ग नहीं। हम पहिले लिख चुके हैं कि सूर्य और चंद्र को छोड़ बाकी के पाँच ग्रह दो दो राशि के स्वामी हैं जैसेः-

सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि।
५	४	१-८	३-६	९-१२	२-७	१०-११

द्वादश राशि और सप्तग्रह का विचार करने के पश्चात् राहु और केतु ये दो उपग्रहों का भी विचार करना आवश्यक है। इन्हें कोई राशि का स्वामित्व मिलना असंभव था इसलिये बुध और गुरु ने राहु और केतु को क्रम से मिथुन और धन इन राशियों पर अपना पूर्ण स्वामित्व कायम रख अधिकार दिया। परिणाम यह होता है कि ये दोनों उपग्रह बुध और गुरु के दोनों राशियों को अपना ही समझ काल क्रमण करते हैं अर्थात् मिथुन राशि में राहू और धन राशि में केतु ये उच्च राशि के कहलाते हैं और कन्या का राहू और मीन का केतु ये स्वगृह के समझे जाते हैं। इसी तरह शनि और गुरु ने हर्शल और नेपच्यून को एक-एक राशि का अधिकार दिया जिसका वर्णन इन ग्रहों के संक्षिप्त इतिहास में लिखा है।

गुरु महाराज ने इस तरह अपने दोनों राशियों का अधिकार केतु और नेपच्यून को देकर अपने दातृत्व शक्ति का परिचय अन्य ग्रहों को दिया व इसीलिये वे सब ग्रहों में श्रेष्ठ ग्रह कहलाते

हैं व यही शक्ति उन्होंने अपने जाति के लोगों को दे इस जगत में उन्हें श्रेष्ठ व अमर बनाया। यह इस जाति के लोगों ने अवश्य ध्यान में रखना चाहिये कि दातृत्व शक्ति तथा दान के सिवाय मान मिलना अशक्य है। और सब दानों में विद्या दान यह श्रेष्ठ दान है जो कि वे दे सकते हैं।

द्वादश भाव तथा राशि के स्वामी-ग्रह यदि अपने भाव में स्थित न रहें और उनकी दृष्टि भी न रही तो उस भाव का फल नौकर (राशि) के मर्जीनुरूप मिलना अत्यंत स्वाभाविक है जिसका अनुभव इस देश के लोगों को पिछले २०० वर्ष से मिल रहा है। राजा के गैर हाजरी में जिस तरह राज्य का कारभार उसके नियोजित मंत्री के मर्जीनुरूप होना योग्य समझा जाता है उसी तरह ग्रह के गैर हाजिरी में राशि का फल देना या मिलना यथा-योग्य समझना चाहिये। परंतु जिस तरह अपने राज्य पर राजा का, अपने घर पर मालिक की दृष्टि का लाभ प्रजा या कुटुंबियों को मिलता है उसी तरह ग्रहों की दृष्टि का फल उनके गुण धर्म स्वभावानुसार मनुष्य को मिलना स्वाभाविक है।

जन्म कुंडली यह जन्म समय आकाशस्थ ग्रहों की गति व स्थिति तथा उनके शुभाशुभ स्थिति के अनुसार मानवी जीवन में होने वाले शुभाशुभ घटनाओं का एक नकशा है जिसके आधार पर मनुष्य अपने आयुष्य के सुख दुःखादि विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। यहाँ पर यह विचार करना आवश्यक होगा कि द्वादश भावों का वर्गीकरण व शुभाशुभत्व की योजना शास्त्रकारों ने शास्त्रीय पद्धति के अनुसार जो की है उसका व्यावहारिक दृष्टि से कितना अधिक महत्व है और इस पर से उनके कुशलता तथा

दूर दर्शीपना का पाठकों को पूर्ण परिचय मिलेगा इसमें संदेह नहीं । मानवी जीवन सुखमय होने के लिये संसार में जिन साधनों की अधिक आवश्यकता है उसी क्रम से उन भावों को महत्व दे उन्होंने इन भावों का वर्गीकरण किया है यह सहज ध्यान में आवेगा । जैसे :—

भावों के शास्त्रीय नाम

पणफर मारक
आपोक्लिमत्रिक (दुष्ट)
उपचय आपोक्लिम
केंद्र अपचय
उपचय पणफर त्रिक
केंद्र अपचय, चतुरस्र
केंद्र उपचय
केंद्र अपचय, मारक
त्रिकोण, पणफर
त्रिकोण आपोक्लिम
उपचय त्रिक-आपोक्लिम
चतुरस्र त्रिक, पणफर
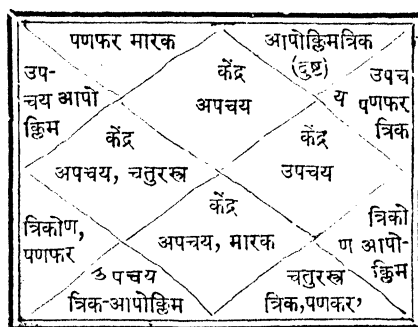
भावों के शुभाशुभत्व की योजना
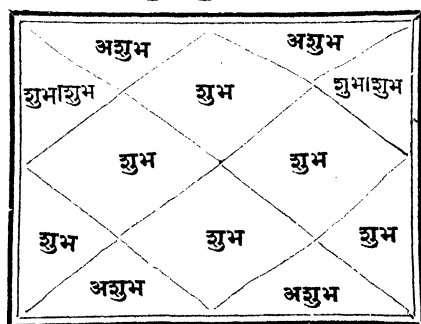
१—इस जगत् में सांसारिक सुख प्राप्त करने के लिये प्रत्येक मनुष्य को शारीरिक सुख, माता, पिता व भार्या इन चार साधनों

की अत्यंत आवश्यकता है। इसलिये शास्त्रकारों ने कुंडली के १–४–७–१० इन चार भावों को श्रेष्ठ व शुभ कहा है इसके साथ ही, यथार्थ सुख प्राप्ति के लिये इन चारों का एकत्रित रहना जितना आवश्यक है उतना ही कुंडली में इन चारों भावों का एकत्रित रहना है अतः इन्हें केंद्र भाव की संज्ञा दी गई।

२—शारीरिक व सांसारिक सुख प्राप्त होने के पश्चात् मानसिक सुख की भी उतनी ही आवश्यकता है और यह सुख प्राप्त करने के लिये बुद्धि और अवकाश दोनों की अधिक आवश्यकता है। अतः पंचम व नवम इन दो भावों को द्वितीय श्रेष्ठ व शुभ भावों की संज्ञा दी गई और इन्हें त्रिकोण भाव कहते हैं।

यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि बुद्धि (पंचम) भाव के साथ अवकाश (नवम) भाग्य-भाव को समान महत्व देने का क्या कारण ? इस पर हमारा यह उत्तर है कि मनुष्य की बुद्धि के विकास के लिये यदि उसे अवकाश ही न मिले या न दिया जाय तो क्या वह उस बुद्धि का यथार्थ उपयोग कर सकेगा ? अर्थात् नहीं यही कहना पड़ेगा। इसी तरह अवकाश के होते हुए भी यदि मनुष्य में बुद्धि ही न हो तो क्या उस अवकाश का यथार्थ उपयोग कर सकेगा ? अर्थात् नहीं। तात्पर्य—इन दोनों का परस्पर संबंध इतना निकट है कि एक के सिवाय दूसरे का उपयोग मनुष्य को होना असंभव है। अतः शास्त्रकारों ने इन्हें समान महत्व जो दिया वह सर्व स्तुत्य है। केंद्र और त्रिकोण इन छः भावों को इस तरह श्रेष्ठ स्थान प्राप्त हुआ और इनके स्वामी इन स्थानों में से किसी भी एक स्थान में हों तो वह अत्यंत श्रेष्ठ व शुभ फल-दायी योग समझा जाता है। पाराशरी ग्रन्थ में कहा है कि—

"लक्ष्मी स्थानं त्रिकोणं च विष्णु स्थानं च केन्द्रकम् ।
तयोः संबंधमात्रेण राजयोगादिकं भवेत् ।।"

अर्थात्—त्रिकोण यह लक्ष्मी का स्थान और केंद्र यह विष्णु का स्थान है और इनके स्वामी का परस्पर संबंध या योग इन्ही भावों में से किसी एक भाव में हो जाय तो वह श्रेष्ठ शुभ फल दायी व राजकारकयोग समझा जाता है। परंतु केंद्र के चार स्थान (१–४–७–१०) में से सप्तम स्थान यह मारक स्थान होने के कारण केवल चतुर्थ और दशम स्थान के स्वामी श्रेष्ठ माने गये हैं यह नीचे लिखे हुए श्लोक (पाराशरी) से विदित होगा :—

पंचमं नवमं चैव विशेषं धनमुच्यते ।
चतुर्थ दशमं चैव विशेषं सुखमुच्यते ।।
चत्वारो राशयो भद्रा केंद्रकोणशुभावहाः ।
तेषां संयोगमात्रेण ह्यशुभोऽपि शुभो भवेत् ।।

अर्थात्—५–९–४–१० इन चार भावों के स्वामी का परस्पर संबंध व योग होने पर ही पहिले लिखे हुए श्लोक का फल मिलेगा।

३—त्रिकोण भाव (५–९) से पराक्रम और लाभ भाव अर्थात् (३–११) निकट होने तथा इनका परस्पर संबंध होने के कारण इन दो भावों का विचार करना आवश्यक है। ३।५।९।११ इन चार भावों का सबंध केंद्र भाव के संबंध समान इतना निकट है कि ये परस्पर दूर दिखाई देते हुए भी एक के सिवाय शेष तीन भाव के स्वामी अपना सामर्थ्य दिखाने के लिये असमर्थ हो जाते हैं। जैसे मान लो कि मनुष्य में बुद्धि है परंतु क्या अवकाश मिलने पर पराक्रम किये बिना वह उससे लाभ उठा सकता है ? उसी तरह

मान लो कि मनुष्य में पराक्रम की शक्ति है परंतु क्या बुद्धि व अवकाश के सिवाय उससे वह लाभ उठा सकता है? इस तरह किसी भी दृष्टि से विचार किया जाय तो यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि बुद्धि, अवकाश व पराक्रम के सिवाय किसी भी वस्तु का लाभ होना असंभव है। अर्थात्—पराक्रम यह बुद्धिपर और लाभ यह अवकाश (भाग्य) पर निर्भर है यह स्पष्ट सिद्ध होता है। तात्पर्य पराक्रम और लाभ ये दोनों भाव परावलंबी हैं अतः शास्त्रकारोंने इन्हें सामान्य शुभाशुभ (उपचय) भाव की संज्ञा दी तो वह यथार्थ है।

४—मनुष्य के सुख के लिये केंद्र व त्रिकोण ये भाव अत्यंत आवश्यक हैं और ३–११ ये भाव अत्यंत उपयोगी हैं। अब बाकी रहे हुए ६–८–१२ इन तीन भावों का प्रथम विचार करना चाहिये। षष्ठ स्थान यह रोग, अष्टम स्थान यह मृत्यु और द्वादश स्थान यह व्यय स्थान है। मानवी सुख के परम शत्रु रोग, खर्च व मृत्यु हैं अतः शास्त्रकारों ने यदि इन तीनों भावों को अत्यंत अशुभ भाव की संज्ञा दी तो यह भी योग्य संभावना की, ऐसा समझना चाहिये। रोग भाव से प्रत्येक प्रकार के रोग का बोध जिस तरह होता है या अष्टम भाव से किसी भी कारण से मृत्यु का बोध होता है उसी तरह द्वादश भाव से हर प्रकार के खर्च या व्यय का बोध होता है अर्थात् प्रथम भाव से एकादश भाव के खर्च या व्यय का बोध इस भाव से किया जाता है।

५—इस तरह ग्यारह भावों का विचार करने के पश्चात् द्वितीय धन भाव के संबंध से विचार करना आवश्यक है क्योंकि इस भाव से धन संचय का बोध होता है। परंतु धन का संचय होना

यह मनुष्य के शरीर सामर्थ्य, माता, पिता, भार्या, बुद्धि, अवकाश पराक्रम और लाभ पर अवलंबित है। इतना ही नहीं किंतु रोग व मृत्यु सम पीडा आदि के संबंध से खर्च होने के पश्चात् जो शेष रह जाय तभी द्वितीय (धन संचय) भाव का फल मनुष्य को मिलना संभव है अन्यथा अशक्य है। इन सब बातों का कुशलतापूर्वक विचार करने के पश्चात् शास्त्रकारों ने इस भाव को अत्यंत परावलंबी व अशुभ भाव की संज्ञा दी तो यह सर्वथा योग्य है ऐसा समझना चाहिये ।

६—ऊपर लिखे अनुसार द्वादश भावों की शास्त्रीय योजना व व्यावहारिक उपयुक्तता का विवेचन संपूर्ण करने के पूर्व यह भी अवश्य ध्यान में लाना चाहिये कि शास्त्रकारों ने द्वितीय-धन और सप्तम भार्या इन दोनों भावों को मारक-स्थान की संज्ञा दी या उन्हें मारक भाव के नाम से संबोधित किया इसका क्या कारण !

वास्तव में लग्न से अष्टम स्थान यह आयुमर्यादा का स्थान है और अष्टम स्थान से अष्टम स्थान याने तृतीय स्थान यह भी आयुमर्यादा का स्थान है। आयुमर्यादा की समाप्ति निश्चित है अतः अष्टम स्थान को व्यावहारिक दृष्टि से मृत्यु स्थान कहने की प्रथा पड़ गई है परंतु आयुमर्यादा कायम रखने तथा बढ़ाने के लिये पराक्रम की अत्यंत आवश्यकता है। अतः इन दोनों भावों का परस्पर संबंध निकट है और इन भावों के द्वादश भाव याने सप्तम और द्वितीय भाव व्यय भाव अर्थात आयुमर्यादा का व्यय या कम करने के भाव बन बैठते हैं। शास्त्रकारों ने इसी कारण से द्वितीय और सप्तम भाव को यदि मारक भाव की संज्ञा दे

अत्यंत अशुभ समझा तो उनका यह निर्णय यथायोग्य ही है यह निर्विवाद है।

इसके अतिरिक्त दूसरे दृष्टि से विचार करने पर भी यही सिद्ध होता है कि द्वितीय धन और सप्तम-भार्या ये दोनों भाव यथार्थ में मारक भाव हैं क्योंकि मनुष्य के उत्कर्ष व सुख के लिये धन और स्त्री ये दोनों साधन यद्यपि अत्यावश्यक हैं तथापि धन और स्त्री ये ही अंत में मनुष्य के दुःख और मृत्यु के मूल कारण बन बैठते हैं यह भी निर्विवाद है। कनक और कांता ने अपने मोह पाश से जगत को इस तरह व्याप रक्खा है कि प्रत्येक मनुष्य इनके जालों में सदैव फँसा रहता है। इन दोनों के माया की जड़ इस संसार में इतनी गहरी गई है कि विरक्त मनुष्य को भी इन्होंने आकर्षित कर अपने कब्जे में रक्खा है तो सांसारिक मनुष्य की क्या कथा कहना। इन दोनों बहिनों की लीला अगाध है, अगम्य है, अतर्क है, अद्भुत है, जिसका वर्णन करने के लिये एक स्वतंत्र ग्रन्थ ही निर्माण करना पड़ेगा। अतः अधिक न लिख कर यहाँ संक्षिप्त में लिखना ही योग्य होगा। धन प्राप्ति के लिये मनुष्य इस जगत में ऐसा कौन सा कर्म है जिसको वह नहीं करता, चाहे वह पाप कर्म हो या पुण्य। धन प्राप्ति के लिये मनुष्य इस जगत में ऐसा कौन सा मार्ग है जिसको कि वह नहीं स्वीकार करता, चाहे वह भला हो या बुरा। धन प्राप्ति के लिये मनुष्य इस दुनियाँ में ऐसा कौन सा स्थान है जहाँ पर वह नहीं जाता, चाहे वह देश हो या परदेश। धन प्राप्ति के लिये मनुष्य इस संसार में ऐसा कौन सा पात्र है जिसकी मर्जी संपादन करने का प्रयत्न नहीं करता, चाहे व उत्कृष्ट पुरुष हो अथवा निकृष्ट। सारांश

मनुष्य धन के लिये चाहे जो कर्म हो, मार्ग हो, स्थान हो या पात्र हो स्वीकार करने के लिये सदैव तत्पर हो जाता है। इसी से यह सिद्ध होता है कि लक्ष्मी की शक्ति मनुष्य की शक्ति से कई गुना अधिक है जिसके कारण मनुष्य पर उसका प्रभाव पड़ वह उसका एक नम्र दास बन जाता है। इसी तरह स्त्री चरित्र भी अवर्णनीय है। वर्तमान युग में इस देश में स्त्री के कारण ही फी सदी नब्बे फांसी के मुकदमे अदालतों में चल रहे हैं, स्त्री के कारण ही सार्वभौम राजाओंने राज्यपद सुखों को तिलांजलि दी, नौजवानों ने जल समाधि ली, विषयांध लोगों ने फांसी के तख्ते पर चढने की प्रतिज्ञा की, स्त्री के कारण ही जन्म देने वाले माता पिता दूर कर दिये जाते हैं, दुर्जन लोग आप्त हो नज़दीक किये जाते हैं, नेक सलाह देने वाले सज्जन दुश्मन समझे जाते हैं। ऐसी अनेक दुर्घटनाओं से यह सहज सिद्ध होता है कि कनक के समान कांता में भी अद्भुत शक्ति है जिसका प्रभाव मनुष्य पर पूर्ण रूप से पड़कर विद्वान भी मूर्ख कहलाने लगता है। तात्पर्य इन दोनों बहिनों ने मनुष्य पर अपना पगड़ा इतने अधिक प्रमाणपर जमाया है कि अधिकांश लोगों को नामों निशान कर दिया। इतनाही नही किंतु कई राष्ट्रों को कार्य क्षमता से वंचित कर सदैव के लिये परतंत्रता की जंजीर में फंसा रक्खा है। इन कारणों से कनक और कांता इन दोनों भावों को शास्त्रकारों ने यदि मारक संज्ञा से आभूषित किया तो यह उनके प्रगल्भ विचार व दूरदर्शीपना का द्योतक है यह प्रत्येक समंजस मनुष्य को मान्य करना पड़ेगा। परंतु इसके साथही यहां यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि तृतीय (पराक्रम) और अष्टम

(आयुमर्यादा) इन दोनों भाव के स्वामी यदि द्वितीय और सप्तम भाव के स्वामी से अधिक बलवान हों तो आयुमर्यादा घटाने में इनका प्रभाव पड़ना असंभव है अर्थात् कनक और कांता के प्रभाव से यदि मनुष्य का पराक्रम अधिक हो तो वह उनपर विजय प्राप्त कर अनेक (इहलौकिक व पारलौकिक) संकटों से बचते हुए अपनी जीवन यात्रा इस मृत्युलोक में शांति और सुख से व्यतीत कर सकता है ऐसा अनेक विद्वान व कर्मयोगियोंने अपने जीवन चरित्र से जगत को सिद्ध कर दिखाया है और जिनका स्मरण संसार के समंजस लोग नित्य कर रहे हैं।

कुंडली के द्वादश भावों के शास्त्रोक्त नाम नीचे लिखे अनुसार है जैसे:—

स्थान	नाम
१–४–७–१०	केंद्रस्थान
५–९	त्रिकोणस्थान
३–६–१०–११	उपचय
६–८–१२	त्रिक्
२–५–८–११	पणफर
३–६–९–१२	आपोक्लिम
२–७	मारक
४–८	चतुरस्त्र

द्वादश भाव से अनेक बातों का बोध

कुंडली के प्रत्येक भाव अपने २ दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं और इन भावों के शुभाशुभ स्थिति अनुसार मनुष्य को अपने आयुष्य में सुख या दुःख भोगने का प्रसंग आता है यह सिद्ध हो चुका

है। परंतु इन द्वादश भावों से किन बातों का बोध होता है यह जानना आवश्यक है जैसे:—

तनुस्थान (प्रथम भाव)— शरीर सुख, आरोग्य, रूप, रंग, गुण, स्वभाव, मानसिक स्थिति, सत्यासत्य आचरण, आयुष्य, शरीर का बांधा, महत्वाकांक्षा, इच्छा, मनकी स्थिरता, सुखादि।

धन स्थान (द्वितीय भाव)—मनुष्य की आर्थिक स्थिति, धन नाश अथवा संचय, आप्तवर्ग, कौटुंबिक तथा प्रापंचिक सुख दुःख, नेत्र, वाणी, वक्तृत्व, गर्दन, गला, सुवर्ण रत्नादि की प्राप्ति, पूर्वार्जित द्रव्य लाभ, ऐश्वर्य, आर्थिक उन्नति या अवनति।

सहज स्थान (तृतीय भाव)— पराक्रम, साहस, महत्वाकांक्षाएं, महत्कार्य, भाई, बहिन, नौकर चाकर, औषधि, समीप का प्रवास, मित्रता, हस्ताक्षर, मनकी रुचि, खाने के पदार्थों में आसक्ति, इच्छा आदि।

सुहृत् स्थान (चतुर्थ भाव)— स्थावर जायदाद, वाहनादि-सुख, नौकर चाकर, मातृ सुख व माता का स्वभाव, पूर्वार्जित कमाया हुआ धन, गांव, घर, भूमिलाभ, भूमिगतलाभ, परोपकार के कार्य, मनकी स्थिति, ऐश्वर्य, उत्कर्ष, कीर्ति, आयुष्य का आखरी समय, सब प्रकार के सुखों का विचार आदि।

सुत स्थान (पंचम भाव)—विद्या, बुद्धि, संतति प्राप्ति व सुख दुःख, संतति के वैभव, गुण रूप रंग स्वभाव उत्कर्ष, आयुष्य विद्यायोग, यांत्रिक विद्या, शास्त्रों में निपुणता, विद्वत्ता, राज सन्मान मंत्र सिद्धि, चातुर्यता, विचार शक्ति, लेखन शक्ति, ग्रन्थ कर्तृत्व अकस्मात धन लाभ, सट्टाबाजी, लाटरी, चतुर्थ स्थान के सुख का साधन, गर्भ, इच्छा आदि।

रिपु स्थान (षष्ठ भाव)—रोग, मातृ पक्ष का सुख, शारीरिक व प्रापंचिक पीड़ा, स्वजन विरोध, अपमानकारक प्रसंग, दुष्ट कार्य, व्रण. कुष्टादि का उद्गम, मनस्ताप, शत्रु पीडा, चोरों का भय व उनसे नुकसान आदि ।

जाया स्थान (सप्तम भाव)—धर्म पत्नी का रूप, रंग, गुण, धर्म, स्वभाव, वृत्ति, प्रेम व विचार पद्धति, एक पत्नी व्रत, स्त्री का स्वास्थ्य, भार्यादि सुख, आकस्मिक स्त्री लाभ, व्यभिचार, पर स्त्री गमन व रत, भागीदारी का धंदा, व्यापार से लाभ या हानि, गुमा हुआ धन लाभ, शत्रु, दीवानी मुकदमे, स्वतंत्र धंदा का प्रयत्न मूत्राशय, अंडाशय, धात्वाशय आदि ।

मृत्यु स्थान (अष्टम भाव)—लाटरी, लाँच, रुश्वत, आकस्मिक धन लाभ, विवाहित स्त्री से धन, मकान, जमीन, गाँव आदि का आकस्मिक लाभ, पर स्त्री से आकस्मिक धन लाभ, स्त्री धन वारस हक्कलाभ, स्त्री अधिकारी के नौकरी से लाभ, कौटुम्बिक कलह, मानसिक चिंता, सर्पादि से भय, कल्पना, तरंग, आयुष्य-मर्यादा, अपघात, अपमृत्यु, भयंकर संकट, मृत्युसम पीडा, आत्म हत्या, शत्रु ज्वरादि रोग, गुह्य भाग के रोग आदि ।

धर्म स्थान (नवम भाव)—भाग्योदय, समुद्र पर्यटन, परदेश गमन, परदेश वास, पूर्व जन्म कर्म फल, वैदिक सामर्थ्य, धर्म-श्रद्धा, धर्माचरण, ईश्वर भक्ति, गुरु उपदेश, पुण्य कर्म, मंत्र सिद्धि, तिर्थ यात्रा, धार्मिक वृत्ति, तप, सामर्थ्य, दातृत्व, औदार्य, सुख-संपन्न स्थिति, बड़े भाई आदि का सुख, जाँघ की दशा आदि ।

कर्म स्थान—(दशम भाव) पिता का स्वभाव, गुण रूप रंग, आयुष्य, उत्कर्ष, राजानुकूलता, श्रेष्ठ अधिकार की प्राप्ति,

सत्ताधिकारी, उपजीविका का साधन, राजमान्यता नौकरी, राजा से सन्मान व पदवी, व्यापार, उद्योग धंदा, प्रवास, आकाश वृत्तांत का ज्ञान, लोगों पर छाप, किर्ती, राज्य प्राप्ति, महत्व के कार्य में यशापयश, ऐश्वर्य काल, घुटनों की दशा आदि।

लाभ स्थान (एकादश भाव)—मित्र सुख, बड़े भाई का सुख, इच्छा, महत्वाकांक्षा, सांपत्तिक स्थिति, राजा आप्तवर्ग स्त्री मित्रादि से धन, मान, वस्त्र, अलंकार वाहनादि लाभ, समाज में श्रेष्ठत्व, कुंटुबियों का सुख, पोटरी की स्थिति आदि।

व्यय स्थान (द्वादश भाव)—शारीरिक आपत्ति, सत्यासत्य कर्मों में धन का व्यय, शत्रु से हानि, ऋण ग्रस्त स्थिति, अनिवार्य क्लेश, राजविरोध, राजदंड, कैद, अधिकार भ्रष्टता, रोगोद्भव, दुष्टों की संगति, विश्वासघात से हानि, गुप्त शत्रु, अपघात, कलह, ऐश्वर्यनाश, द्रव्यनाश, चोरों से द्रव्यहानि, लोक व समाज में अपमान, मुकद्मों में अपयश, मित्र के कारण द्रव्य नाश, अनेक प्रकार से दुख व धन का व्यय, पाँव व नेत्र में पीड़ा आदि।

ऊपर लिखे हुए द्वादश भाव के फलों से यह ज्ञात होगा कि एक ही भाव से कई बातों का विचार किया जा सकता है किंतु समय पर इनका उपयोग करना या न करना यह प्रत्येक मनुष्य के बुद्धि, स्मरणशक्ति व तर्कज्ञान और फलित निर्णय करने के पद्धति पर सर्वस्व अवलंबित है। तथापि अनुभव के बाद या अनेक कुंडलियों का सूक्ष्म निरीक्षण और परीक्षण करते हुए यह ज्ञान आप ही आप ध्यान में आ सकता है। द्वादश भाव के सामान्यतः फल ऊपर लिखे अनुसार हैं। परंतु इसका प्रत्यक्ष अनुभव प्रत्येक मनुष्य को मिलना या न मिलना यह ग्रहों की स्थिति

व दृष्टि आदि पर निर्भर है। परंतु किसी भी प्रश्न का विचार करते समय पाठकों ने यह अवश्य ध्यान में लाना चाहिये कि जन्म कुंडली में उस प्रश्न के भाव की, भावकारक ग्रहकी, कारक ग्रह की और गोचर ग्रह की क्या स्थिति है। इन सब बातों का विचार कर फलित निश्चय करने से भविष्य कथन पर पूर्ण भरोसा होना निश्चित है।

द्वादश भाव-शुभाशुभ ग्रह के सामान्य फल

कुंडली के द्वादश भावों में पापग्रह और शुभग्रह के स्थित होने से प्रत्येक मनुष्य को इन ग्रहों के भिन्न २ फल किस तरह मिलते हैं इसका यहां सक्षिप्त में वर्णन करना आवश्यक है। जैसे:—

(१) तनु-स्थान

शुभग्रह—शरीर सुख, आरोग्य, ऐश्वर्य, मानसिक शक्ति, उंचाई, मित भाषी, रोगों का नाश, भाग्यवृद्धि, तीव्र बुद्धि, शांत स्वभाव, सुख व वैभव भोगने वाला।

पापग्रह—शारीरिक पीडा, रोगयुक्त, आलसी, दुर्बुद्धि, दुर्गुणी, गर्विष्ट, दुःखदायी।

(२) धन-स्थान

शुभग्रह—श्रीमान कुल में जन्म, बडा कुटुंबी, आप्त वर्गोंपर प्रेम दृष्टि रखने वाला, वक्ता, भाग्यशाली. द्रव्य संचय करने वाला।

पापग्रह—द्रव्य की अड़चन, आप्तवर्ग से विरोध, आपत्ति, कपटि, मिथ्याभाषी, दृष्टि विकार, नेत्र पीडा, द्रव्य नाश, बोलने में दोष।

(३) सहज-स्थान

शुभग्रह—पराक्रमी, साहसी, कार्य में यश, उद्योगधंदेमें यश, विद्याकी रुचि, उत्तम हस्ताक्षर, भाई बहिन का सुख, प्रवास में सुख व लाभ, मिष्टान्न प्रिय, धर्म पर श्रद्धा, शत्रुनाश करने वाला।

पापग्रह—कार्य में बाधा, प्रवास में क्लेश, कलह, तामसी, मित्र व बंधु से हानि व अनबन, साधारण हस्ताक्षर।

(४) सुहृत-स्थान

शुभग्रह—स्थावर संपत्ति की प्राप्ति, गांव, घर, जमीन बगीचा, वाहन आदि का सुख, ऐश्वर्य, आराम, दिलदार, संतोषी मन, स्थिति, दयालु, किर्ती, यश, धन व सुख, कुलाभिमानी, सुस्वभावी, मातृसुख, नौकर सुख, प्रतिपालक।

पापग्रह—सुखहीन, अस्वस्थमन, निरंतर क्लेश, मनका कपटी, स्वार्थी, दुसरों के उत्कर्ष में दुःख, कष्ट से इष्ट कार्य की सिद्धि, वाहन से अपघात, स्थावर संपत्ति लाभ परंतु कमसुख, आप्त विरोध, मातृ सुख हीन, संशयी, चंचल स्वभाव, नौकर सुख नाश व त्रास।

(५) सुत-स्थान

शुभग्रह—बुद्धिमान, चतुर, विद्या में प्रवीण, राजदरबार में मान्यता, तीक्ष्ण बुद्धि व गहन विषयों को सुलभ करने में प्रवीण, श्रेष्ट अधिकार, किर्तीवान्, कुलदीपक, संतति से सुख, मानसिक हेतु पूर्ण हो द्रव्य लाभ।

पापग्रह—विद्यामें अपयश, वृथा भिमानी, संततिका नाश व दुःख, अविचारी संतति, चिंताग्रस्त, बुद्धि भ्रष्ट, चंचलवृत्ति।

(६) रिपु-स्थान

शुभग्रह—लोगों की प्रतिकूलता, स्वजनों से विरोध, त्रास, अशक्त प्रकृति, शत्रुओं से त्रास व हानि, उदार दिल, परोपकारी, लोकोपयोगी, कार्य की उत्कंठा, कार्य कुशल, लोगों को अनुकूल करने में प्रवीण, मातुल पक्ष का सुख।

पापग्रह—शरीर स्वास्थ्य उत्तम, निश्चयी, तामसी, धाड़सी, उग्र स्वभाव, शत्रुका पराभव, रोगों का नाश, गुप्त शत्रु से त्रास, कठिण प्रसंग का सामना करने वाला, लेकिन स्वार्थी, मातृपक्ष सुख का नाश।

(७) जाया-स्थान

शुभग्रह—वैवाहिक स्त्री सुख, संसारदक्ष पतिव्रता स्त्री का सुख, गुणवान, रूपवान, सुंदर व सुस्वरूप भार्या, उच्चकुल के स्त्री से विवाह, व्यापार में भागीदार से लाभ, दीवानी मामलों में यश, देन-लेन के धंदे में लाभ, क्रय-विक्रय में कुशल, वाद-विवाद में प्रवीण, प्रवास में सुख।

पापग्रह—स्त्री सुख रहित, स्त्री संबंधी कलह, त्रास, स्त्री का स्वभाव उग्र, मानी, संसार सुख के विषय में चिंता, प्रवास में कष्ट, व्यभिचारी, परस्त्रीगमन करने वाला, अदालती मामले में अपयश, द्रव्य हानि, स्वतंत्र धंदे में नुकसान, बहुभार्या योग, स्त्री को अरिष्ट, अंत में पश्चात्ताप व दुःख।

(८) मृत्यु-स्थान

शुभग्रह—विवाह के पश्चात् स्त्री के तरफ से स्थावर स्टेट लाभ, वारस के नाते द्रव्य प्राप्ति, ट्रस्टी, स्त्री स्टेट पर अधिकारी

के नाते द्रव्य लाभ, श्वसुर की सांपत्तिक स्थिति उत्तम, शरीर प्रकृति साधारण, स्त्री धन लाभ, आकस्मिक धन लाभ।

पापग्रह—बुरे कर्मों से द्रव्य की प्राप्ति, परद्रव्यापहारी, कौटुंबिक व राजकीय संकट, दारुण प्रसंग, धंदे में हानि, गृहकलह, लोगों से वैमनस्य मानहानि, अपकीर्ति, कर्ज बाजारी, व्यसनाधीन।

(९) धर्म-भाग्य-स्थान

शुभग्रह—अनुकूलदैव, भाग्य व ऐश्वर्य की प्राप्ति, दूर का प्रवास व लाभ, नाना प्रकार के सुख, धर्म पर श्रद्धा, पुण्य कर्म करनेवाला, कीर्तिवान, कुटुंब के बड़े लोगों का सुख, स्वदेश में भाग्योदय।

पापग्रह—परदेश में भोग्योदय, सदा अड़चन, परिस्थिति में बारबार फेरबदल, भातृ से विरोध, मन को संताप, ऐश्वर्य प्रतिकूल।

(१०) कर्म-स्थान

शुभाग्रह—सत्कर्मी, नौकरी, व उद्योग धंदे में अधिकार, मान-सन्मान, राजाश्रय, पदवीदान, महत्वपूर्ण कार्य में यश, राजा व समाज में मान्यता, श्रेष्ट सांपत्तिक स्थिति, समाज कार्य का नेता, ऐश्वर्य, स्वपराक्रम से धन लाभ।

पापग्रह—पितृ सुख का नाश, कार्य में अपयश, श्रेष्ठ अधिकारियों का विरोध, हमेशा धंदे में फेरबदल, अपकीर्ति, उपजीविका साधन के संबंध से हमेशा चिंता, नुकसानी के प्रसंग, समाज विरोधी, राजा से दूषण, उच्चस्थिति से नीच स्थिति का प्राप्त होना।

(११) लाभ-स्थान

शुभग्रह—श्रेष्ठ अधिकार, उद्योग धंदा व नौकरी से सुख, सांपत्तिकयोग प्रबल, राजा लोगों से मैत्री व लाभ, आप्तवर्ग, बड़े भाई, मित्र, नौकर का सुख, धाड़सी, निश्चयी, अचाट काम में यश प्राप्त करनेवाला, अनेक प्रकार से तथा संबंधियों से द्रव्य प्राप्ति।

पापग्रह—पाप पुण्य की पर्वा न कर द्रव्य प्राप्ति करने में प्रवीण, दूसरों पर छाप रखनेवाला, अधिकारी अनुकूल, नौकर का त्रास, बड़े भाई को अनिष्ट, कलह, कौटुम्बिक व मित्र सुख कमी, सामान्य भाग्य।

(१२) व्यय-स्थान

शुभग्रह—शुभ कार्य में द्रव्य का खर्च, ग्रंथों का वाचन व चिंतन, शत्रुपीड़ा, संकट का निवारण, अधिकार में विघ्न, धन की कमी, मानसिक तथा शारीरिक स्थिति असंतोषजनक परंतु अंत में यश प्राप्ति व पूर्ववत् स्थिति की प्राप्ति।

पापग्रह—द्रव्य संबंधी चिंता, हानि, उद्योग धंदे में अपयश, बुरे कर्मों में धन का व्यय, धन का फजूल खर्च, अधिकार व मान्यता में कमीपना, अपमान, अपकीर्ति, ऋणग्रस्त स्थिति, शरीर को पीड़ा, बिमारी, श्रेष्ठ अधिकारी प्रतिकूल, अनेक संकट, ग्रहनिर्बली हों तो वृथापवाद, शत्रु से हानि, राजदंड, कैद, कार्य में अपयश, आयुष्य को धोका, अविचारी स्त्री, आदि।

ऊपर लिखे हुए फलों में शुभाशुभ ग्रहों के दृष्टि व युति के अनुसार फेर बदल होना संभव है परंतु भाव स्वामी व कारकग्रह के

स्थिति पर यह फल अवलंबित है यह भी ध्यान में रखना चाहिये। शुभ ग्रह यदि अशुभ भाव में स्थित हों अथवा अशुभ ग्रह शुभ भाव में स्थित हों तो वे उस भाव के परिस्थिति व प्रभाव के अनुसार फल देने के लिये उद्यत होते हैं। सारांश ग्रहों के अपेक्षा शुभाशुभ भाव पर सर्वस्व फल निर्भर रहता है। इस पर से स्थान महात्म की महिमा कितनी जबरदस्त है यह पाठकों के ध्यान में सहज आवेगी ऐसी आशा है।

द्वादश भाव विचार के सामान्य नियम

कुंडली के द्वादश भावों में शुभ और अशुभ ग्रहों के स्थित होने से मनुष्य को किस तरह शुभाशुभ फल मिलता है यह उपर लिखे हुए फलों से पाठकों के ध्यान में सहज आ सकता है किंतु इन भावों में से किन भावो में ग्रह स्थित होने से वे बली, मध्यम बली और निर्बली कहलाते हैं यह लिखना यहाँ पर अत्यंत आवश्यक होगा जैसेः—

बलीग्रह

(१) शुभ ग्रह केंद्र अथवा त्रिकोण में हों तो वे बलवान समझे जाते हैं।

(२) कोई भी ग्रह ३-११ भाव में बलवान समझे जाते हैं परंतु सौम्य ग्रह से क्रूर ग्रह पराक्रम करने के लिये अधिक योग्य समझे जाने के कारण वे इन स्थानों में अधिक बलवान समझे जाते हैं।

(३) शुभ ग्रह का धन स्थान में रहना अधिक लाभदायक समझा जाता है क्योंकि वे वहाँ बलवान रहते हैं।

(४) शुभ ग्रह से पाप ग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तो वे बलवान कहलाते हैं ।

मध्यम बली

(१) पापग्रह यदि ५–९ त्रिकोण भाव में स्थित हों तो वे मध्यम बली समझे जाते हैं ।

निर्बली

१ शुक्र के सिवाय कोई भी ग्रह यदि ६–८–१२ भाव में स्थित हो तो वे निर्बली कहलाते हैं ।

(२) कोई भी ग्रह यदि शत्रु ग्रह से तथा रवि से युक्त हो तो वे निर्बली कहलाते हैं ।

इसके अतिरिक्त

(१) किसी भी स्थान के स्वामी (ग्रह) अपने भाव से यदि १–४–७–१०–५–९ भाव में स्थित हों तो वे उस भाव संबंध से शुभ फल देते हैं ।

(२) गुरु जिस भाव में स्थित हो उस भाव का फल अशुभ समझा जाता है क्योंकि उसका किसी भी भाव में स्थित होना अशुभ समझा जाता है परन्तु उसके शुभ दृष्टि का अधिक फल मिलता है ।

(३) शनि जिस स्थान में स्थित हो उस भाव को सुरक्षित रखता है किंतु जिस स्थान पर उसकी दृष्टि हो उस स्थान के फल का नाश करता है। गुरु और शनि ये दोनों ग्रहों के स्थान के अपेक्षा दृष्टि का अधिक महात्म है ।

(४) किसी भी भाव में यदि शुभ ग्रह, पाप या शत्रु से युक्त

अथवा दृष्ट हो तो वह अशुभ फलदायी समझा जाता है और अशुभ ग्रह यदि शुभ ग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो शुभ फल देता है और यदि मित्र ग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो ऊँचा फल देता है चाहे वह शुभ हो अथवा अशुभ।

(५) कोई भी ग्रह यदि अपने राशि या भाव में स्थित हो तो उस भाव का तथा दृष्टि का अधिक ऊँचा फल मिलता है।

(६) ग्रह यदि परस्पर के राशि में हों तो वे जिस स्थान में स्थित हो उस भाव का पूर्ण फल मिलता है।

(७) किसी भी भाव में ग्रह न हो अथवा ग्रह की दृष्टि न हो तो उस भाव का फल राशि के गुण धर्मानुसार मिलेगा।

(८) राशि के फल के अपेक्षा भाव और दृष्टि का फल अधिक बलवत्तर समझा जाता है।

ऊपर लिखे हुए भावों का विचार करने से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि मनुष्य को ग्रहों के व्यक्तिगत गुणों के अपेक्षा वे जिस भाव में स्थित हो उस भाव के शुभाशुभ स्थिति के अनुसार फल मिलता है। अतः फलित निर्णय करते समय स्थान महात्म का प्रथम विचार करना चाहिये यह निर्विवाद है।

द्वादश भाव फल

किसी कुंडली का फलित निर्णय करने के लिये पाठकों को सुविधा हो इस हेतु से द्वादश भाव, सप्तग्रह तथा उनके दृष्टि का फल उदाहरण रूप से संक्षिप्त में यहां लिखना हम आवश्यक समझते हैं और आशा करते हैं कि इसे जानने में पाठकों को कुछ आनंद अवश्य मिलेगा। जैसे:—

(१) तनुस्थान

(१) लग्नेश शुभग्रह होकर यदि केंद्र स्थान में स्वराशि, मित्र राशि, उच्च राशि, मूलत्रिकोण राशि में स्थित हो और पाप ग्रह से दृष्ट न हो तो मनुष्य सुस्वरूप, विद्वान, धनी, निरोगी व सुखी होगा।

(२) लग्न स्थान पर मंगल की दृष्टि हो अथवा वह पाप ग्रह से युक्त व दृष्ट होकर लग्न को देखता हो तो मनुष्य के चेहरे पर चेचक के दाग होना चाहिये।

(३) लग्न में गुरु व शुक्र हो अथवा उनकी दृष्टि हो तो मनुष्य निरोगी, पुण्यशील, दूसरों पर छाप रखने वाला होगा।

(४) लग्न में उच्चराशि का गु. बु. शु. हो मनुष्य अतुल विद्या व धन प्राप्त करेगा।

(५) लग्नेश यदि ६-८-१२ भाव में स्थित हो तो मनुष्य लक्ष्मी पुत्र होने पर भी वह अंत में निर्धन होगा।

(६) लग्न में चंद्र या शुक्र हो तो मनुष्य विलासी व खर्चीला होगा।

(७) लग्न में तुला राशि का शुक्र हो तो मनुष्य दो स्त्री से विलास करेगा।

(८) लग्न में बुध और सप्तम में गुरु हो तो मनुष्य हंसकर बोलने वाला होगा।

(९) उच्चराशिके ग्रह यदि केंद्र में हों तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(१०) लग्नेश, पंचमेश, लाभेश व भाग्येश उच्च राशि में होकर अपने भाव में ही स्थित हों और अपने ग्रहों से दृष्ट हों अथवा शुभ ग्रह १-४-७-१० भाव में स्थित हों तो मनुष्य को अनेक प्रकार का सुख, ऐश्वर्य व अधिकार प्राप्त होगा।

(२) धनस्थान

(१) इस भाव में चंद्र या गुरु स्थित हो और उनपर शनि की दृष्टि हो तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(२) इस भाव में ऊंचे राशि का गुरु शुक्र हो तो भी मनुष्य श्रीमान होगा।

( ) धन भाव में शनि होकर बुध या गुरु की पूर्ण दृष्टि हो तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(४) धन भाव में मकर या कुंभ का बुध मंगल हो और सूर्य से दृष्ट हो तो मनुष्य विनोदी व हंसने वाला होगा।

(५) इस भाव में सू. मं. श. हो और गुरु की दृष्टि न हो तो मनुष्य धनहीन होगा।

(७) धन भाव में बुध या चंद्र हो और शनि की दृष्टि हो तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(८) इस भाव में रवि शुक्र मंगल हो तो धन नाश होगा।

(९) इस भाव में चंद्र या शुक्र पापग्रह से दृष्ट हो तो मनुष्य कामी और पर स्त्री रत होगा।

(१०) इस भाव में उच्च का र. बु. गु. श. हो तो मनुष्य अच्छा वक्ता होगा।

(११) धनेश केंद्र या त्रिकोण में हो तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(१२) धनेश गुरु होकर मंगल से युक्त इसी भाव में हो तो मनुष्य धनवान होगा ।

(१३) द्वितीय भाव का स्वामी जहां स्थित हो उस भाव का स्वामी यदि ६–८–१२ भाव में हो तो मनुष्य के वाणी में दोष जानना ।

(१४) धनेश शुक्र से युक्त व पापग्रह से दृष्ट होकर ६-८-१२ भाव में हो तो नेत्र दोष व दारिद्र योग जानना व प्रापंचिक सुख कमी रहेगा ।

(१५) धनेश केंद्र मे व लाभेश त्रिकोण में गुरु शुक्र से दृष्ट हो तो द्रव्य लाभ होगा ।

(१६) धनेश लाभ भाव में और लाभेष धन भाव में हो तो मनुष्य श्रीमान होगा ।

(१७) धनेश व लाभेश एकत्र होकर पाप भाव में, पापग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो आजन्म दरिद्री जानना ।

(१८) धन भाव में र. बु. गु. शु. उंचे राशि के हों तो कुटुम्ब के लोग उंचे दर्जे के और नीचे राशि के हों तो नीचे दर्जे के और साधारण राशि में हों तो साधारण दर्जे के होंगे । परन्तु मनुष्य भारी कुटुम्ब का सदस्य होगा ।

(१९) चंद्र धन राशि में हो तो मनुष्य विद्या संपन्न, धर्मशास्त्र में प्रवीण व गणितज्ञ होगा ।

(२०) बुध स्वराशि में या मित्रराशि में हो तो मनुष्य विनोदी, हास्यमुख, गणित, ज्योतिष, गायनवादन के विद्या में निपुण होगा ।

(२१) चतुर्थेश मंगल यदि धन भाव में हो तो मनुष्य को खट्टा व निमकीन पदार्थ की अधिक रुचि होगी ।

(२२) धन भाव में गुरु हो तो मनुष्य विद्वान, शास्त्रज्ञ, कीर्तन व व्याख्यान करने में चतुर होगा।

(२३) धन भाव में शुक्र हो तो मनुष्य मैथुन प्रिय, शौकीन, सुंदर नेत्रवाला, रत्नपारखी व संग्रही होगा।

(२४) धन भाव में रा. के. श. मं. हो तो क्रोधी होगा।

(२५) धनेश शुभ ग्रह होकर केंद्र या त्रिकोण में हो तो विद्वान व धनवान जानना।

(२६) धन भाव पर र. मं. श. की दृष्टि हो तो धनहीन।

(२७) धन भाव में चंद्र पर यदि बुध की दृष्टि हो तो मनुष्य धनवान होगा परंतु यदि बुध हो और चंद्र की दृष्टि हो तो मनुष्य दरिद्री होगा।

(२८) सूर्य पंचमेश होकर धन भाव में हो तो मनुष्य वेदांत व वेद में प्रवीण होगा और सूर्य चतुर्थेश हो, धनभाव में हो तो उष्ण पदार्थ और खारी वस्तु खाने की रुचि होगी।

(३) सहज स्थान

(१) तृतीय भाव में जितने अधिक शुभ ग्रह हों उतनाही अधिक मनुष्य पराक्रमी, दैवशाली व परोपकारी होगा।

(२) इस भाव में मंगल हो तो कनिष्ट बंधु का सुख मिलना या कनिष्ट बंधु होना भी प्रायः असंभव समझना परन्तु मनुष्य पराक्रमी होगा। मंगल से चंद्र युक्त हो तो युक्ति से धन प्राप्ति करेगा। चंद्र स्थित हो गुरु से दृष्ट हो तो मनुष्य श्रीमान होगा।

(३) इस भाव में पाप ग्रह हो अथवा तृतीयेश ६-८-१२ भाव में हो तो बंधु सुख नाश जानना।

(४) तृतीयेश शुभ हो, केंद्र या त्रिकोण में हो तो बंधु भगिनी का पूर्ण सुख मिलेगा ।

(५) तृतीयेश धन भाव में और धनेश तृतीय में या ३-१० का स्वामी होकर तृतीय में हो तो मनुष्य स्वपराक्रम से धन प्राप्त करेगा ।

(६) तृतीयेश शुभग्रह होकर तृतीय में ही हो तो उपजीविका का साधन आप से आप प्राप्त होगा ।

(७) तृतीय भाव में विषम राशि हो तो बंधु व सम राशि हो तो भगिनी की अधिक संख्या होगी ।

(८) तृतीय भाव में शनि हो तो बड़े भाई को, सूर्य हो तो छोटे भ्राता को और मंगल हो तो दोनों का नाश करता है ।

(९) तृतीयेश केंद्र या त्रिकोण में होकर शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो मनुष्य पराक्रमी, यशस्वी और बंधु भगिनी सुख वाला होगा ।

(४) सुहृत्-स्थान

(१) चतुर्थेश केंद्र, त्रिकोण, धन या लाभ भाव में हो तो मनुष्य संपत्तिवान होगा ।

(२) चतुर्थेश, गुरु, शुक्र से युक्त व दृष्ट होकर केंद्र या त्रिकोण में हो तो मनुष्य स्वपराक्रम स्थावर स्टेट संपादन करेगा ।

(३) चतुर्थेश नवमेश से युक्त हो गुरु से दृष्ट हो अथवा मंगल एकादश में व चंद्र नवम भाव में हो तो वह राजपूज्य होकर इच्छित वाहन का सुख भोगेगा ।

(४) चतुर्थेश चतुर्थ में हो और मंगल व गुरु की दृष्टि हो तो ग्रह प्राप्ति होगी ।

(५) चतुर्थेश शुभ ग्रह हो या शुभग्रह से दृष्ट हो तो मातृ सुख मिलेगा ।

(६) इस भाव पर शनि की दृष्टि हो तो बालपन में ही माता का मृत्यु या मातृ सुख नाश जानना व विमाता माता का योग भी होगा ।

(५) सुत-स्थान

(१) पंचमेश चतुर्थ स्थान मे हो तो प्रथम कन्या होगी ।

(२) लग्न या धन भाव में चं. मं. शु. एकत्र या पृथक् हों तो प्रथम पुत्र होगा ।

(३) पंचम भाव पर जितने शुभ ग्रह की दृष्टि हो या राशि का जो अंक हो उससे संतति की संख्या दुगुनी या उतनी ही होगी । पुरुष ग्रह की दृष्टि हो तो पुत्र व स्त्री ग्रह की दृष्टि हो तो कन्या की संख्या का विचार करना चाहिये ।

(४) इस भाव में कुंभ का शनि यदि गुरु से दृष्ट हो तो पांच पुत्र और मकर का मंगल हो तो कन्या संतति होगी ।

(५) स्वगृह का गुरु हो तो पांच पुत्र होगें ।

(६) शनि केंद्र में या त्रिकोण में होकर शुभ ग्रहसे दृष्ट हो किंवा लाभ भाव में हो तो मनुष्य कायदा प्रिय या वकील होगा ।

(७) ८-१० राशि का शनि केंद्र या १-२-३-९-११ भाव में हो, या स्वराशि का हो, या नवम भाव में गु. चं. परस्पर दृष्ट करते हों तो मनुष्य वकील होगा ।

(८) शु. बु. २-५-९-११ भाव में हो तो मनुष्य वेदांती होगा ।

(९) ५-११ भाव में बहुत ग्रह हों तो मनुष्य विद्वान व कारस्थानी होगा।

(१०) बुध मंगल परस्पर सांतवे भाव में हों तो मनुष्य इंजीनियर होगा।

(११) २-३ भाव में र. चं. बु. हो तो गणितज्ञ होगा।

(१२) लग्न भाव या मिथुन राशि में शुक्र हो तो शास्त्री होगा।

(६) रिपु-स्थान

(१) इस भाव में शुभग्रह स्थित हो तथा शुभग्रहों की दृष्टि हो अथवा पापग्रह हो तथा उसकी दृष्टि हो तो मनुष्य रोगी, गुप्त शत्रु वाला होगा परंतु मातुलपक्ष से सुख मिलेगा।

(७) जाया-स्थान

(१) सप्तमेश उच्चराशि में, शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट अथवा इस भाव में शुभ ग्रह हो तो आज्ञाकारी, व धर्माभिमानी भार्या मिलेगी।

(२) सप्तमेश—र. मं., चं. शु., या श. मं. रा. के. से युक्त व दृष्ट हो तो मनुष्य व्यभिचारी हो विधवा स्त्री से प्रेम व सहवास करेगा।

(३) सप्तम भाव में जो राशि या ग्रह हो अथवा जिस ग्रह की दृष्टि या युति हो तो उसके अनुसार स्त्री का रूप, रंग, गुण स्वभाव आदिका निश्चय करना चाहिये।

(४) इस भाव में शुक्र यदि मंगल, शनि, राहू ये तीनों या एक ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो मनुष्य व्यभिचारी होगा।

(५) इस भाव में शुक्र यदि उच्चराशि का हो अथवा पाप ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो उच्चकुल के स्त्री से, स्वगृह का हो और

पापग्रह से दृष्ट हो तो स्वजाति के स्त्री से, शत्रुक्षेत्र या नीच राशि के पापग्रह से दृष्ट हो तो नीच जाति के स्त्री से व्यभिचार करेगा व रममाण होगा ।

(६) इस भाव में कर्क का चंद्र हो और वह शुभग्रह से दृष्ट हो तो सुंदर, रुपवान, गौरवर्ण, पतिव्रता स्त्री से विवाह होगा। और यदि उच्च का पापग्रह हो तो पति पतिपर उसका अधिक प्रभाव रहेगा ।

(७) सप्तमेश लाभ में हो अथवा इस भाव पर श. मं. चं. शु. स्थित हो तो मनुष्य परस्त्री संग करेगा ।

(८) इस भाव में मिथुन का शुक्र हो तो मनुष्य कामी होगा।

(९) इस भाव में शुक्र होकर इसके द्वितीय व द्वादश भाव में पापग्रह हो और इस भाव पर पापग्रह की दृष्टि हो तो वह नपुंसक योग जानना ।

(१०) मंगल की दृष्टि इस भाव पर हो तो भार्या का नाश और द्वितीय विवाह योग जानना ।

(११) सप्तमेश वक्री, नीच राशि का या शत्रुक्षेत्र और अशुभ भाव में हो तो स्त्री सुख नाश ।

(१२) सप्तम भाव में रवि पापग्रह से दृष्ट हो तो वंध्या स्त्री से, चंद्र हो तो स्वजाति के स्त्री से, मंगल हो तो रजस्वला स्त्री से, बुध हो तो वैश्य जाति के स्त्री से, गुरु हो तो ब्राह्मण जाति के स्त्री से, श. रा. के. हो तो नीच जाति के स्त्री से मनुष्य रममाण होगा ।

(१३) इस भाव में रवि हो तो स्त्री के स्तन कड़े व खड़े, मंगल हो तो छोटे, श. रा. हो तो लंबे और शुभ ग्रह हो तो उत्तम व गोल होगें ।

(१४) इस भाव में श. या मं. अपने राशि का हो, अशुभ ग्रह से दृष्ट व युक्त हो तथा शुभ ग्रह से दृष्ट न हो तो स्त्री पर-पुरुषगामिनी होगी।

(१५) इस भाव में शुक्र १-८ राशि का हो, मं. से दृष्ट व युक्त हो तो मनुष्य अत्यंत विषयी जानना।

(१६) शुक्र इस भाव में हो व मं. र. श. शुक्र से चतुर्थ, सप्तम और अष्टम हो तो स्त्री जलकर मरेगी।

(१७) चंद्र से श. सप्तम भावमें हो और मंगल से दृष्ट हो तो पुनर्विवाह योग जानना।

(१८) सप्तमेश जहां हो वहां से १-४-७-८-१२ इन भावों में मंगल या पापग्रह हों तो बहु भार्या योग जानना।

(१९) इस भाव पर मंगल और गुरु दोनों की दृष्टि हो तो मनुष्य परस्त्री सुख से पराङ्मुख होगा।

(२०) सप्तमेश उच्च राशि का होकर अपने भाव पर दृष्टि करता हो व इस भाव पर पापग्रह की दृष्टि हो तो सुंदर स्त्रीयों की प्राप्ति होगी।

(२१) सप्तम भाव में २-७ राशि का शुक्र या चंद्र, शनि से दृष्ट या युक्त हो तो बहु स्त्री लाभ होगा।

(२२) लग्न में कर्क का चंद्र हो सप्तम में मंगल और नवम में शुक्र हो तो स्त्री पतिव्रता होगी।

(८) अष्टम-स्थान

(१) इस भाव पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो मनुष्य दीर्घायुषी होगा।

(२) अष्टमेश व लग्नेश पापग्रह से युक्त व दृष्ट हों, अशुभ भाव में हों और शुभग्रह से दृष्ट न हों तो मनुष्य अल्पायुषी होगा।

(३) र. चं. बु. द्वादश भाव में हो तो अल्पायुषी होगा।

(४) अष्टमेश केंद्र में व लग्नेश निर्बली हो तो अल्पायुषी होगा।

(५) अष्टम में शुभग्रह और केंद्र व त्रिकोण में अशुभग्रह हो तो अल्पायुषी होगा।

(६) लग्न में चंद्र पापग्रह से युक्त व अष्टम में मंगल हो तो माता व बालक को अरिष्ट जानना।

(७) अष्टम स्थान में जो राशि हो और वह राशि चक्र में दिये हुए अंग विभाग के जिस स्थान पर आती हो उसी स्थान में रोग होकर मनुष्य का मृत्यु होता है।

(८) अष्टमेश पापग्रह होकर लग्न में हो तो चेहरे पर चेचक के दाग होंगे।

(९) नवम-स्थान

(१) भाग्येश भाग्य भाव में होकर यदि शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो मनुष्य भाग्यवान होगा।

(२) भाग्येश गुरु होकर १-३-५ भाव में हो तो मनुष्य भाग्यशाली संपत्तिवान व विलासी होगा।

(३) श. चं. या मं. चं. इस भाव में उच्चराशि का हो तो मनुष्य मंत्री, सलाहगार होगा और बहुत धन प्राप्त करेगा।

(४) नवमेश व धनेश केंद्र में होकर यदि लग्नेश से दृष्ट हो तो मनुष्य गुणी व संपत्तिवान् होगा।

(५) नवम भाव में पांच ग्रह हो तो मनुष्य श्रेष्ठ अधिकार व अपार संपत्ति प्राप्त करेगा।

(६) इस भावपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो मनुष्य किर्तीवान् सुखी और श्रीमान् होगा।

(७) नवमेश दशम भाव में और दशमेश नवम भाव में हो तो पिता धनवान् व किर्तीवान होना चाहिये।

(९) पापग्रह उच्च का हो और उसपर गुरु की दृष्टि हो तो मनुष्य का भाग्योदय पापग्रह के अंश काल से आरंभ होगा।

(१०) भाग्य भाव में पापग्रह हो या उसकी दृष्टि हो तो भाग्योदय में अनेक बाधाएं आवेंगी।

(११) नवमेश ६-८-१२ में हो तो भाग्य हीन जानना और पापग्रह की दृष्टि हो तो अधिक अशुभ फल मिलेगा।

(१२) नवमेश केंद्र मे हो और शुभग्रह से दृष्ट हो तो भाग्यवान।

(१३) चतुर्थेश नवम भाव में गु. शु. से युक्त व दृष्ट हो तो अनेक प्रकार से संपत्ति प्राप्त होगी।

(१४) नवमेश उच्च हो गुरु से युक्त हो व केंद्र में शुक्र हो तो पिता दीर्घायुषी होगा।

(१५) नवमेश धन भाव में और धनेश नवम में हो तो ३२ वर्ष के बाद भाग्योदय होगा।

(१६) नवमेश से तृतीयेश युक्त हो नीचराशि या अंश में हो या निर्बली व अस्तंगत हो तो राजा भी रंक होगा।

(१७) रवि यदि कुंडली में ६-८-१२ में हो, षष्टेश पंच भाव में हो, अष्टमेश नवम में हों, और द्वादशेश लग्न में हो तो

बालक का जन्म होने के पूर्व पिता का मृत्यु होना संभव है।

(१८) नवमेश व अष्टमेश शनि हो और शुभ ग्रह से दृष्ट न हो, रवि अष्टम स्थान में हो तो बालक के जन्म के पहिले वर्ष ही पिता पर अरिष्ट जानना।

(१९) नवमेश नीच राशि का हो और व्ययेश नवम में हो तो तीसरे वर्ष या १६ वे वर्ष पिता को अरिष्टकारक जानना।

(२०) नवमेश नवम में और बुध उच्चांश में हो तो ३६ वर्ष से भाग्योदय होगा।

(२१) नवमेश लग्न में, लग्नेश नवम में और गुरु सप्तम में हो तो संपत्ति और वाहन का लाभ होगा।

(२२) नवमेश नवम को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो स्वदेश में भाग्योदय होगा।

(२३) नवम भाव में मकर का मंगल हो तो भाग्यवान व धनी होगा।

(१०) दशम–स्थान

(१) दशमेश व लग्नेश एकत्र होकर केंद्र या त्रिकोण में हो तो मनुष्य अपने स्वपराक्रम से द्रव्य प्राप्त कर अनेक प्रकार के सुख भोगेगा तथा व्यापार व नौकरी में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करेगा।

(२) ३–५–९–१० भाव के स्वामी शुभग्रह लग्नेश से युक्त हो, केंद्र या त्रिकोण में हों तो मनुष्य वेदांती व ज्ञानी होगा।

(३) दशमेश बुध हो या दशम भाव में बुध हो तो व्यापारी होगा।

(४) दशमेश रवि शुभ स्थान या दशम में हो तो मनुष्य बुद्धिमान, पुत्रवान, गुणवान व श्रीमान होगा

(५) दशमेश लग्न में अथवा लग्नेश से युक्त हो तो मनुष्य सुखी व कवि होगा।

(६) दशम भाव में मकर का मंगल हो तो मनुष्य पराक्रमी, श्रेष्ट अधिकारी, ऐश्वर्य युक्त व दैवशालीहोगा। किंतु मंगल नीच राशि का हो तो इसके विपरीत फल मिलेगा।

(७) दशमेश व लग्नेश पाप ग्रह हो तो बुरे कर्म से आप्त जनको दुख मिलेगा। दशमेश राहू से युक्त हो अष्टम भाव में हो तो महामूर्ख जानना।

(८) दशमेश शुभ ग्रह होकर श. मं. से दृष्ट व युक्त हो तो सत्कार्य के लिये संकट व बंधन होगा।

(९) दशमेश लग्न में व लग्नेश दशम में हो तो मनुष्य सुखी व पराक्रमी होगा।

(१०) दशम भाव में राहु हो तो गंगास्नान का लाभ होगा। दशमेश गु. शु. श. से युक्त हो दशम भाव में हो तो बड़ा ज्ञानी।

(११) दशमेश नवम में और नवमेश दशम में हो तो भाग्यवान्। दशमेश लाभ में और लाभेश दशम में हो तो रत्नादि से युक्त रहेगा।

(१२) दशमेश दशम में हो तो सत्यप्रिय व एक वचनी होगा, दशमेश शनि हो या दशम मे शनि हो या इस स्थानपर शनि की दृष्टि हो तो मनुष्य कायदे में निपुण व वकील होगा।

(१३) दशमेश लग्न में हो तो बाल्यावस्था में रोगी, यौवानीवस्था में भोगी व वृद्धावस्था में सुखी होगा।

(१४) दशम भाव पर पापग्रह की दृष्टि हो तो अधिकारी से सदैव विरोध होते रहेगा।

(११) एकादश स्थान

(१) लाभेश लग्न में हो तो सुशील, लाभेश शुभ ग्रह होकर शुभ ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो विद्वान, दयालु व संपत्तिवान होगा।

(२) लाभ भाव में शुक्र हो तो स्त्रीयों से देशांतर में धन प्राप्ति, लाभेश, लग्नेश, अष्टमेश केंद्र त्रिकोण में हों तो दीर्घायु। लाभेश केंद्र त्रिकोण में हो तो श्रीमान्। लाभेश लग्न में हो तो वक्ता। धनेश गुरु हो लाभ में और लाभेष धन भाव में हो तो ३६ वर्ष की अवस्था में भाग्योदय होगा।

(३) लाभेश लग्न में और लग्नेश लाभ में हो तो ३३ वर्ष से भाग्योदय शुरु होगा। लाभ में गुरु, नवम में शुक्र, धन में चंद्र हो तो हजारों का धनी होगा।

(४) लाभेश धन में और धनेश लाभ में हो तो विवाह के पश्चात भाग्योदय होगा।

(५) लाभेश तृतीय में और तृतीयेश लाभ में हो तो बंधु से धन प्राप्ति होगी।

(६) लाभेश व अष्टमेश केंद्र त्रिकोण में हो तो दीर्घायुषी लाभेश सूर्य हो अथवा उसकी दृष्टि हो तो राजा से धनलाभ होगा।

(७) एकादश स्थान में शुक्र या चंद्र हो अथवा उनकी दृष्टि हो तो सुंदर स्त्री, बाग बगीचा, स्थावर स्टेट, रत्नादि का लाभ होगा।

(८) लाभेश मंगल हो और उसकी दृष्टि हो तो राजा से मान द्रव्यलाभ।

(९) लाभ में बुध हो या लाभेश बुध हो और बुध की दृष्टि

हो तो मनुष्य को छापखाना, लेखन, व्यापार, राज्याधिकार से धन लाभ हो.ा ।

(१०) लाभ में गुरु हो अथवा उसकी दृष्टि हो तो सज्जन का संग, नित्य मिष्टान्न, वस्त्र, धनधान्य लाभ होगा ।

(११) लाभ में शनि हो अथवा उसकी दृष्टि हो तो वकील व व्यभिचारी स्त्री से धन लाभ।

(१२) लाभेश शनि हो अथवा श. की दृष्टि हो तो वकीली धंदे में, चोरी, रूश्वत, झूठे काम से धन लाभ ।

(१३) लाभेश शुक्र या शुभग्रह हो और वह लाभ, केंद्र व त्रिकोण में हों तो सन्मित्र से धन लाभ ।

(१२) द्वादश-स्थान

(१) इस भाव में शुभग्रह उच्च व स्व राशि का हो तो मनुष्य कमखर्ची, शय्यासुख व शुभ कार्य में खर्च होगा ।

(२) व्यय भाव शें अशुभ ग्रह हो या उसकी दृष्टि हो तो अशुभ कार्य में धन का व्यय होगा ।

(३) धनेश व्यय भाव में हो तो मनुष्य निर्धन होगा ।

(४) व्यय भाव में नीच का पापग्रह हो तो सदैव ऋण-ग्रस्त हो आर्थिक कष्ट मिलता रहेगा ।

(५) व्ययेश पापग्रह से युक्त अशुभ भाव मे हो और उस परचं.श.रा. की दृष्टि हो तो देशांतर वास व आर्थिक त्रास होगा ।

(६) व्ययेश शुभ ग्रह हो और उसपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो स्वदेश में किर्ती प्राप्त करेगा ।

(७) व्ययमें श. मं. रा. होकर गुरु से दृष्ट न हो तो पाप कर्म से धन प्राप्त करेगा।

(८) लग्न और व्ययभाव के स्वामी परस्पर भाव में हो और शुभग्रह से दृष्ट हो तो धर्मकार्य में धन का व्यय होगा।

स्थान परत्व ग्रहों का विफलत्व

चतुर्थ स्थान में बुध, पंचम में गुरु, दूसरे में मंगल, छठवें में शुक्र, सप्तम में शनि और रवि से युत चंद्रमा हो तो वे ग्रह योग्य फल देने के लिये असमर्थ होते हैं।

शनि की साढ़ेसाती

जन्मराशि के द्वादश स्थान में जब गोचर का शनि प्रवेश करता है उसी दिन से साढ़ेसाती शुरू होती है और जन्म-राशि के द्वितीय स्थान या राशि का भ्रमण जब वह पूर्ण करता है तभी साढेसाती समाप्त हुई ऐसा स्थूल दृष्टि से समझा जाता है। शनी को प्रत्येक राशि भ्रमण करने के लिये २॥ वर्ष का समय लगता है और इस गति से वह द्वादश, जन्म और द्वितीय राशि का भ्रमण ७॥ वर्ष में पूरा करता है अतः इस काल को शनि की साढ़ेसाती का काल कहते हैं। परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से जन्म समय चंद्र जितने अंश का हो वह उस अंक के सामने राश्यांतर काल के फल कोष्टक में प्रत्येक ग्रहों का जो निश्चित समय लिखा गया हो उसी समय से यथार्थ में साढेसाती शुरू हुई यह समझना उचित होगा। जैसे मान लो कि प्रभु रामचन्द्रजी की जन्मराशि कर्क है और जन्म समय चंद्र २० अंश का है तो स्थूल मान से मिथुन राशि में शनि प्रवेश करते ही साढ़ेसाती शुरू हुई ऐसा कहा जा सकता है किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से मिथुन राशि में शनि २० अंश या २० महीने (१ वर्ष ८ महीने) समाप्त होने के बाद साढ़ेसाती शुरु होती है और इसी दिन से साढेसाती का काल आरंभ हुआ यह समझना चाहिये। अर्थात् मिथुन राशि का शनि १० महीने, कर्क राशि का २॥ वर्ष, सिंह २॥ वर्ष और कन्या राशि में १ वर्ष ८ महीने का काल भ्रमण करने पर साढेसाती समाप्त हुई ऐसा समझना शास्त्रोक्त होगा।

जन्म कुंडली में शनि यदि अशुभ फलदायी हो या और वह जन्मराशि के द्वादश स्थान में प्रवेश करते ही जन्म या गोचर के अशुभ

ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो वह साढेसाती के युक्तिकाल तक इतना भयानक फल देगा कि मनुष्य को उसका आजन्म विस्मरण होना असंभव है। मनुष्य आस्तिक मत का हो या नास्तिक मतवादी हो ज्योतिष शास्त्र पर विश्वास हो अथवा न हो परन्तु साढेसाती शुरू होते ही शनि अपने शुभाशुभ फल से परिस्थिति में भयङ्कर परिवर्तन निर्माण कर मनुष्य को विश्वास करने के लिये बाध्य करता है। मनुष्य के आयुष्य में दो ऐसे प्रसङ्ग आते हैं कि उसे ग्रहों के शुभाशुभ शक्ति पर पूर्ण विश्वास करना भाग पड़ता है और वे प्रसङ्ग याने एक शनि की साढेसाती और दूसरा—लड़की की शादी है। प्रत्येक पिता को अपने लड़की के प्रति यह इच्छा होना स्वाभाविक है कि उसका विवाह एक उच्च कुल के रूपवान, गुणवान, धनवान व भाग्यवान वर से हो और उसके प्रयत्न से इस तरह कार्य होने पर जब लड़की को दुर्भाग्यवश वैधव्य प्राप्त होता है ऐसे समय वह अपने प्रयत्न व इच्छा को शक्तिहीन या वृथा समझ भाग्य, दैव, नसीब, प्रारब्ध, ईश्वरी इच्छा, पूर्व जन्मकर्मादि फल आदि शब्दों का आश्रय ले अपने मन को बोधकर लड़की का समाधान करता है। इसके उलट अत्यन्त गरीबी से कालक्रमण करने वाले लोग जब वे अपने लड़की को अपने से कई गुने अधिक ऊँचे कुलोत्पन्न, लक्षाधीश, सुविद्य वर से विवाहित हो सुख व वैभवयुक्त आयुष्य क्रमण करते हुए देखते हैं तब वे अपने स्थिति का, व प्रयत्न का तथा लड़की के भाग्य का विचार कर यह विश्वास करने लगते हैं कि वे केवल जन्म देने के अधिकारी हैं न कि कर्म देने के। अर्थात् इस जगत में उनके सिवाय अन्य अद्वितीय शक्ति भी वास कर रही है जिसमें ऐसे सुप्रसङ्ग या

कुप्रसङ्ग निर्माण करने की शक्ति है ऐसा उन्हें पूर्ण विश्वास हो जाता है। इसी तरह साढेसाती के काल में शनि रंक को राजा बनाकर और राजा को एक क्षण में रंक बनाकर अपना प्रभाव जब मनुष्य को दिखाता है तब मनुष्य ग्रहों के शक्ति पर पूर्णतया विश्वास करने लगता है।

अन्य सब ग्रहों से शनि अपना शुभाशुभ फल देने के लिये इतना प्रबल व शक्तिशाली है कि इसने अपने अतुल्य शक्ति का परिचय केवल मानवी प्राणी को ही नहीं किन्तु ईश्वर विभूति, महर्षि, देवता और प्रतापी राजाओं को भी दिया है और वर्तमान समय दे रहा है। उदाहरणार्थ—शनि ने अपने साढेसाती के काल में श्री प्रभु रामचन्द्रजी पर अरण्य वास भोगने का प्रसंग लाया, महान प्रतापी, तपस्वी, विद्वान व ज्योतिषज्ञ राजा रावण को सीता हरण की दुर्बुद्धि दे यम यातना भोगने लगाया, भगवान् श्रीकृष्ण को स्यमन्तक का कलंक लगाया, महान तपस्वी महर्षि वशिष्ट जैसे महर्षि के शतपुत्रों का नाश किया, सत्याभिमानी व पराक्रमी राजा विक्रम को असह्य शारीरिक दण्ड दे उसपर तेल घानी चलाने का दुर्धर प्रसङ्ग लाया, अपने गुरु महाराज बृहस्पति जी को पल भर के लिये फाँसी के तख्ते पर चढ़ाया, पांडवों को बनवास दिया, कौरवों का नाश किया, स्वर्ग सुख भोगने वाले राजा इंद्र को त्राहि भगवान कहने लगाया, श्री शंकर जी को क्षण भर के लिये कैलास में छुपने के लिये परवश किया, अपने पिता रवि को सारथी व अश्व सहित थोड़े समय के लिये अंधा बनाया, वर्तमान समय अपने साढ़ेसाती के काल में यह विश्वयुद्ध निर्माण किया यह जानते व देखते हुए ऐसे महान् शक्ति शाली ग्रह के प्रभाव के समक्ष यःकश्चित्

मानवी प्राणी की क्या कथा कहना ! सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि शनिग्रह अपना अशुभ फल दिखाने के पूर्व शूरों की शूरता, वीरों की वीरता, अधिकारियों की सत्ता, बुद्धिमानों की बुद्धिमत्ता, विचारी लोगों का मन, धनिकों का धन, संततिवानों का जन आदि को एक क्षण में हरण कर व अकल्पित परिस्थिति निर्माण कर मनुष्य को इतना विचार शून्य बना देता है कि अंत में उसे दुर्धर आपत्तियों के फेरे में डालकर जर्जर करते हुए प्राणदंड भी भोगने लगाता है। परन्तु इसके विपरीत जन्म समय यदि शनि महाराज शुभ फलदायी हों तो वे अपने साढ़ेसाती के काल में किसी भी निर्धन को कोट्याधिपति बनाकर उसे संतति, सुख वैभव व ऐश्वर्य से आभूषण कर एक अद्वितीय पुरुष बना देते हैं। ऐसे प्रसंगों को देखते हुए जगत में ऐसा कौन समंजस मनुष्य है कि जो ग्रहों के शक्ति पर अविश्वास व्यक्त करने का धैर्य या साहस दिखाने की चेष्टा करेगा ?

जन्म कुंडली में शनि यदि नीच राशि, शत्रु राशि, शत्रु से युक्त व दृष्ट होकर अशुभ हो तो यह कपट, नीचता, दुष्टता, विश्वासघात, परवशता और दास्यत्व आदि दुर्गुणों की खान बन बैठता है। प्रत्येक दुर्गुणों की परमावधि याने शनि है ऐसा कह सकते हैं। इस ग्रह की दया व सहानुभूति से अत्यंत दुश्मनी है। परवशता और गुलामगिरी शनि को अत्यंत प्रिय होने के कारण मन में स्वाभिमान को स्थान ही नहीं मिल सकता। यह ग्रह अत्यंत स्वार्थ परायण भी है अतः इसे पराये दुःख की कल्पना भी नहीं होती। परन्तु शनि यदि उच्च राशि का शुभग्रह से दृष्ट व युक्त हो तथा मित्र राशि में

हो तो सहन-शीलता, सूक्ष्म विचार, तुलनात्मक बुद्धि, निश्चयात्मकता, जवाबदारी, तत्व संशोधन, निष्पक्षपात, न्याय आदि गुणों का केंद्र स्थान बनकर नियम, कायदा, कर्तव्य कर्म का पालन अत्यंत नम्रता पूर्वक करता है। ऐसे स्थिति में वह गरीब–श्रीमान, लूला-लँगड़ा, छोटा-बड़ा इसका भेद भाव न करते अपने गुणों से सांसारिक मनुष्य के नेत्र पर के मोह-माया के पड़दों को दूर कर उसे अध्यात्म विषय की दृष्टि देता है और मनुष्य को आत्मोन्नति की ओर ले जाता है।

गुरु के शुभ परिणाम फल पर विश्वास न कर संसार के मायाजाल में फँसे हुए मनुष्य को शनि अपने तीक्ष्ण बाणों के अशुभ फल द्वारा जागृत करता है और उसे धन, जन, स्त्री, आप्तवर्ग, ऐश्वर्यादि से क्रमशः अलग करते हुए उसका ध्यान ईश्वर की ओर आकर्शित कर ईश्वर का ध्यान करने लगाता है अर्थात् वह ऐहिक सुख की अपेक्षा पारमार्थिक सुख तथा स्वार्थ के अपेक्षा परमार्थ का ऊँचा सबक सिखाता है। तात्पर्य कांचन और कांता के मोहपाश में निमग्न व लिप्त हुए पुरुषों को क्रमशः जागृत करते हुए ईश्वर के अस्तित्व का ज्ञान व विश्वास दिलाने के लिये यह ग्रह अत्यन्त श्रेष्ठ है यह प्रत्येक दूर दर्शी और विचारी मनुष्य को मानना पड़ेगा। इस तरह शनि ग्रह मानवी जीवन को ऊँचा करने के लिये, पापात्मा को पुण्यात्मा बनाने के लिये अपने अशुभ फल द्वारा महत् ऊँचा कार्य करता है। दूसरे दृष्टि से विचार किया जाय तो यह अवश्य मानना होगा कि जो धर्म कार्य अनादि काल से लाखों धर्म ग्रंथ तथा धर्मोपदेशकों द्वारा नहीं हो सकता वह कार्य यह एक ही ग्रह पृथ्वी से कोट्याधि मील दूर रहते हुए भी अपने

साढेसाती के काल में पूर्ण करने का सामर्थ्य रखता है और मनुष्य का जीवन सफल कर उसका भावी आयुष्य भी अत्यंत श्रेष्ठ बना देता है।

यहाँ पर यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि शनि ग्रह यह लोह धातु का द्योतक ग्रह है। जिस तरह पत्थर में मूर्ति का सच्चा व सुन्दर स्वरूप लाने के लिये लोहे के तीक्ष्ण घावों की अत्यंत आवश्यकता है उसी तरह मूढ़ मनुष्य में मनुष्यत्व का सच्चा व सुंदर स्वरूप उत्पन्न करने के लिये लोह रूपी संकटो के तीक्ष्ण घावों की आवश्यकता इस ग्रह द्वारा प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त होती है। अर्थात् ऐसे संकट ग्रस्त प्रसंग पर मनुष्य को अपनी सद्‌बुद्धि कायम रख दुःख के तीक्ष्ण घावों को सहर्ष सहन करने के लिये तथा ईश्वर को दोष न देते हुए अपने पूर्व जन्म पाप कर्मों के फलों को भोगने के लिये यह ग्रह देवता अद्वितीय शक्ति देता है। पूर्व संचित फलों का नाश हो रहा है इस आनंद वृत्ति से दुःखों को सहन करना और अपना काल क्रमण करना यह एक श्रेष्ठ विचार इस ग्रह द्वारा मनुष्य को प्राप्त होता है। सारांश, ऐसे अशुभ किंतु श्रेष्ठ फलदायी ग्रह के प्रति मन में पूज्य बुद्धि रखना, उसे अत्यंत आदर भाव से देखना और उसका अनंत उपकार सदैव मानना यह प्रत्येक विचारशील व दूरदर्शी मनुष्य का कर्तव्य कर्म है, ऐसा कहना अनुचित न होगा। शनि की साढ़ेसाती यदि अशुभ हो तो नीचे लिखे हुए उपायों का अवलंबन करने से मनुष्य का दुःख अवश्य कम होगा इसमें संदेह नहीं। परन्तु शनि की साढेसाती का फल शुभ या अशुभ मिलेगा यह प्रथम मालूम करना चाहिये व पश्चात् इन उपायों को कार्य रूप में लाना उत्तम होगा।

शनि की शुभाशुभ राशि व स्थान

१ जन्म कुंडली में शनि ६–८–१२ भाव में होकर अशुभ ग्रह से दृष्ट व युक्त हो तो साढ़ेसाती का अशुभ फल मिलेगा।

२ जन्म कुंडली में चंद्र यदि द्वितीय या द्वादश भाव में स्थित होकर मं० र० रा० से युक्त हो तो अशुभ फल।

३ जन्म कुंडली में चंद्र यदि निर्बली हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो साढेसाती का अशुभ फल।

४ चंद्र यदि वृश्चिक या शत्रु राशि में होकर रा० के० मं० से युक्त व दृष्ट हो तो साढेसाती का अशुभ फल।

५ जन्म चंद्र के द्वादश और द्वितीय भाव में शुभ ग्रह हो अथवा इन स्थानों पर शुभग्रह की पूर्ण दृष्टि हो तो साढेसाती का शुभ फल।

६ जन्म चंद्र के द्वादश और द्वितीय भाव में कोई ग्रह न हो तो भी साधारणतः शुभ फल मिलेगा।

७ जन्म चंद्र यदि गु० शु० बु० से युक्त हो तो शुभ फल।

८ चंद्र शनि से युक्त हो किंतु मंगल से दृष्ट न हो तो शुभ फल।

साढेसाती का शुभाशुभ फल

प्रत्येक राशि के साढेसाती के काल में से कौन सा काल शुभ या अशुभ फलदायी है यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। जैसे:—

मेष—मीन राशि का पहिला २॥ वर्ष का काल शुभ, मेष राशि का मध्य का २॥ वर्ष अत्यन्त अशुभ, द्रव्य, मान व मनुष्य हानि और वृषभ राशि का आखिरी २॥ वर्ष साधारण शुभ।

वृषभ—मेष राशि का २॥ वर्ष अशुभ, वृषभ राशि क

२॥ वर्ष शुभ और मिथुन राशि का शुभ फलदायी अर्थात् द्रव्य प्राप्ति के लिये अनुकूल।

मिथुन—वृषभ राशि का २॥ वर्ष शुभ, मिथुन राशि का २॥ वर्ष अनुकूल व कर्क राशि का २॥ वर्ष सामान्य।

कर्क—मिथुन राशि का शनि २॥ वर्ष शुभ, कर्क राशि का २॥ वर्ष शुभाशुभ और सिंह राशि का २॥ वर्ष अशुभ।

सिंह—कर्क राशि का २॥ वर्ष अशुभ, सिंह राशि का २॥ वर्ष अशुभ और कन्या राशि का २॥ वर्ष शुभ।

कन्या—सिंह राशि का २॥ वर्ष अशुभ, कन्या राशि का शुभ और तुला राशि का अत्यन्त शुभ अर्थात् इस समय अकस्मात धन, स्थावर स्टेट लाभ व परिस्थिति में न भूतो न भविष्यति इतना अन्तर पड़कर श्रेष्ठ दर्जे का शुभ फल मिलेगा।

तुला—कन्या राशि का फल शुभ, तुला राशि का फल अत्यन्त श्रेष्ठ, वृश्चिक राशि का फल अत्यन्त अशुभ।

वृश्चिक—तुला राशि का श्रेष्ठ, वृश्चिक राशि का कनिष्ठ और धन राशि का मध्यम फल।

धन—वृश्चिक राशि का अशुभ, धन का शुभ और मकर का मध्यम फल।

मकर—धन राशि का शुभ, मकर का मध्यम और कुंभ राशि का उत्तम फल।

कुंभ—मकर राशि का साधारण, कुंभ राशि का शुभ और मीन राशि का शुभ फल।

मीन—कुंभ राशि का शुभ, मीन राशि का शुभ और मेष राशि का अशुभ फल मिलेगा।

साढ़ेसाती के फल का निदान करते समय शुभाशुभ भाव, शुभाशुभ ग्रहों की दृष्टि व युति पर भी अवश्य ध्यान रखना चाहिये और इसके अनुसार ही प्रत्येक राशि में शनि प्रवेश करने पर साढ़ेसाती के काल में मनुष्य को शुभ या अशुभ फल मिलना संभव है। साढ़ेसाती के काल में यदि गुरु शुभफल दायी हो तथा उसकी शनि पर दृष्टि हो तो शुभ फल मिलेगा। साढ़ेसाती के विषय में लोगों का साधारणतः यह समझ हो बैठा है कि शनि की साढ़ेसाती याने मौत की घड़ी ही नही किंतु वह मौत से बड़ी है। और उनका ऐसा समझना यथार्थ है किंतु साढ़ेसाती जिस तरह अत्यंत अशुभ फलदायी है उसी तरह अत्यंत श्रेष्ठ शुभ फल दायी भी है यह हम पहिले लिख चुके हैं। किंतु साढ़ेसाती के काल का प्रारंभ जन्म चंद्र के अंशपर से होना और शुभाशुभ फल मिलना निर्भर है। शनि की साढ़ेसाती शुरु होते ही यह ध्यान में रखना चाहिये कि यदि लाभेश जन्म कुंडली में हर प्रकार से बलवान हो अर्थात् शुभस्थान वा स्वस्थान में स्थित हो और शुभ ग्रह से दृष्ट व युक्त हो और अशुभ ग्रह से दृष्ट न हो तथा गोचर ग्रहों से निर्बली न हुआ हो तो द्रव्य संबंधी कोई अड़चन न होगी। इस तरह इस काल का निर्णय जन्मस्थ व गोचर के शनि पर से तथा गुरु शुक्र के शुभ दृष्टि पर से करने से योग्य फल का मिलना संभव है, अन्यथा नहीं। साढेसाती के समय चंद्र व शनि जन्म कुंडली में किस स्थान में स्थित रहने से धन लाभ व धन नाश फल मिलेगा यह पाठकों के ध्यान में सहज आ सके इस हेतु से उदाहरणार्थ कुछ कुंडलियों का यहाँ लिखना हम आवश्यक समझते हैं। जैसे :—

धन लाभ कुंडली

धन लाभ कुंडली

धन लाभ कुंडली

धन नाश कुंडली

धन नाश कुंडली

धन नाश कुंडली

चंद्रांश–कोष्टक

जन्म लग्न या जन्म राशि के अंशोपर से ग्रहों का राश्यांतर होने पर वे कितने समय के पश्चात् फल देंगे यह जानने का कोष्टक।

अंश	र.बु.शु.दिन	मंगल	गुरु	शनि	(राहु—केतु)
१	१	१॥	०—०—१३	०—१—०	०—०—१८
२	२	३	०—०—२६	०—२—०	०—१—६
३	३	४॥	०—१—९	०—३—०	०—१—२४
४	४	६	०—१—२२	०—४—०	०—२—१२
५	५	७॥	०—२—५	०—५—०	०—३—०
६	६	९	०—२—१८	०—६—०	०—३—१८
७	७	१०॥	०—३—१	०—७—०	०—४—६
८	८	१२	०—३—१४	०—८—०	०—४—२४
९	९	१३॥	०—३—२७	०—९—०	०—५—१२
१०	१०	१५	०—४—१०	०—१०—०	०—६—०
११	११	१६॥	०—४—२३	०—११—०	०—६—१८
१२	१२	१८	०—५—६	१—०—०	०—७—६
१३	१३	१९॥	०—५—१९	१—१—०	०—७—२४
१४	१४	२१	०—६—२	१—२—०	०—८—१२
१५	१५	२२॥	०—६—१५	१—३—०	०—९—०
१६	१६	२४	०—६—२८	१—४—०	०—९—१८
१७	१७	२५॥	०—७—११	१—५—०	०—१०—६
१८	१८	२७	०—७—२४	१—६—०	०—१०—२४
१९	१९	२८॥	०—८—७	१—७—०	०—११—१२
२०	२०	३०	०—८—२०	१—८—०	१—०—०
२१	२१	३१॥	०—९—३	१—९—०	१—०—१८
२२	२२	३३	०—९—१६	१—१०—०	१—१—६
२३	२३	३४॥	०—९—२९	१—११—०	१—१—२४
२४	२४	३६	०—१०—१२	२—०—०	१—२—१२
२५	२५	३७॥	०—१०—२५	२—१—०	१—३—०
२६	२६	३९	०—११—८	२—२—०	१—३—१८
२७	२७	४०॥	०—११—२१	२—३—०	१—४—६
२८	२८	४२	१—०—४	२—४—०	१—४—२४
२९	२९	४३॥	१—०—१७	२—५—०	१—५—१२
३०	३०	४५	१—१—०	२—६—०	१—६—०

लग्न व रवि की साढ़ेसाती

शनि की साढेसाती न रहते हुए भी मनुष्य को अनेक समय अनेक प्रकार के दुःख भोगने का जो प्रसङ्ग आता है उसका एक मुख्य कारण रवि व लग्न की साढेसाती है। चंद्र के द्वादश और द्वितीय स्थान में गोचर शनि का वास्तव्य होते ही जिस तरह शनि की साढेसाती समझी जाती है उसी तरह लग्न के द्वादश और द्वितीय स्थान में जब गोचर का शनि भ्रमण करता है उसे जन्म-लग्न की साढेसाती कहते हैं और जन्म रवि के द्वादश व द्वितीय भाव में जब शनि भ्रमण करता है उसे रवि की साढेसाती कहते हैं। प्रत्येक साढेसाती का काल ७॥ वर्ष है। इन दोनों साढेसाती का फल नीचे लिखे अनुसार है। जैसेः—

(१) लग्न के साढेसाती की दशा में लग्न के द्वादश और द्वितीय भाव में जिस तरह के शुभ या अशुभ ग्रह स्थित हों तथा उन भावों पर दृष्टि हो उसी के अनुसार शारीरिक सुख, आरोग्य, हानि लाभ, धन लाभ व हानि, यशापयशादि फल मिलता है।

(२) रवि के साढेसाती की दशा में रवि से द्वादश और द्वितीय भाव में जिस तरह के ग्रह स्थित हों या उनपर शुभाशुभ दृष्टि हो उसी के अनुसार उद्योग धन्दा, अधिकार, सन्मान, मान मर्यादा, सुख दुःख आदि मिलता है।

अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फल नष्ट करने के शास्त्रोक्त उपाय

ज्योतिष शास्त्र ने इस जगत में अधिकार व प्रभुत्व आज तक जो कायम रक्खा है उसका मुख्य कारण केवल भविष्य कथन ही नहीं

किंतु अनिष्ट ग्रहों के फलों को नष्ट करने के उपायों का वर्णन है। जिसका अनुभव अधिकांश लोगों को अनादि काल पूर्व मिल चुका है और आज भी मिल रहा है। हमारे मत से इस शास्त्र का उपयोग केवल सुख व ऐश्वर्य की ऊँचाई जानने के लिये नहीं किंतु दुःख व सङ्कटग्रस्त स्थिति की गहराई जानने के लिये अधिक है ताकि प्रत्येक मनुष्य को भविष्य में आने वाले अनेक अशुभ प्रसङ्गों से सावध होकर उनका प्रतीकार करने के लिये पूर्व ही से अवसर मिले। जिन सज्जनों को इन शास्त्र निर्धारित उपायों पर भरोसा न होता हो उनसे हमारा यह नम्र निवेदन है कि वे स्वयं अनुभव लेकर इस पर विश्वास करें। क्योंकि बिना अनुभव के ज्ञान होना असंभव है और बिना ज्ञान के किसी भी विषय पर अविश्वास या अंधविश्वास व्यक्त करना यह भी किसी समजस मनुष्य को शोभा नहीं देता। द्वादश लग्न के प्रत्येक मनुष्य को कौन कौन से ग्रह शुभ, अशुभ, शुभाशुभ और मारक हैं इसका वर्णन हमने द्वादश लग्न कुण्डली कोष्टक में किया है व इसके आधार पर ग्रहों के शुभाशुभत्व का निश्चय कर अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फलों को मिटाने या घटाने का उपाय करने से ही यथार्थ फल मिलेगा। इन ग्रहों का शुभाशुभ फल उनके महादशा, अन्तर्दशा तथा गोचर काल में प्रत्येक मनुष्य को मिलना निश्चित है चाहे लोगों का विश्वास इस शास्त्र पर व इन उपायों पर हो अथवा न हो इससे कोई प्रयोजन नहीं। शास्त्रकारों ने अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फल नष्ट करने के लिये जपतप, उपवास पूजा आदि अनेक उपायों का उल्लेख शास्त्रों में किया है और जो लोग इन उपायों को कार्यरूप में ला सकते हैं उनके विषय में हमें

कुछ कहना नहीं। परन्तु वर्तमान परिस्थिति का विचार करते हुए जो लोग इन उपायों का अनुकरण करने के लिये असमर्थ हैं ऐसे सज्जनों के लिये रत्नादि धारण करने के शास्त्र निर्धारित उपायों पर यहाँ संक्षिप्त में लिख देना हम आवश्यक समझते हैं। शास्त्रकारों ने अशुभ ग्रहों के अनिष्ट फल नष्ट या कम करने के लिये रत्नादि धारण की योजना किस कारण या किस आधार पर की है इसका प्रथम विचार करना यहाँ उचित होगा।

हम पहिले लिख चुके हैं कि सूर्य यह विश्व के ग्रह माला का मुख्य कर्ता ग्रह है। वह अपनी सारी शक्ति अपने कुटुम्ब के प्रत्येक सदस्यों को प्रदान करता है। सूर्य के तेजपुञ्ज प्रकाश से मुख्य सात रङ्ग—लाल, पीला, काला, नीला, हरा, सफेद, नारङ्गी उत्पन्न होते हैं और उसने प्रत्येक ग्रहों को पृथक् २ रङ्ग दिया है जिसके कारण संशोधकों ने अपने यंत्रों (दूरवीनों) द्वारा प्रत्येक ग्रहों का भिन्न २ रङ्ग निश्चित रूप से पाया है। सूर्य यह आकर्षण शक्ति का केन्द्र स्थान तथा सात रङ्गों का उत्पादक होने के कारण उसके इस आकर्षण शक्ति का व प्रत्येक रङ्ग का प्रभाव उसके प्रखर किरणों द्वारा इस पृथ्वी पर नित्य पड़ता है यह प्रत्येक मनुष्य प्रतिदिन अनुभव कर रहा है। परन्तु क्षणभर के लिये यदि यह भी मान लिया जाय कि यह सब तर्क शास्त्र है तो इस पृथ्वी पर भिन्न रङ्ग की जमीन अर्थात् काली, पीली, लाल, सफेद, हरी, नीली व नारङ्गी मिट्टी किस तरह मिल सकती है? इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि सूर्य से उत्पन्न हूए भिन्न रङ्गों के किरणों का प्रभाव भूगर्भ तक पहुँचता है और इन्हीं रङ्गीन किरणों के प्रभाव से पृथ्वी के गर्भ में सात ग्रहों के भिन्न २ रङ्गों के अनुसार सात

रङ्ग के रत्न उत्पन्न होते हैं। मुख्य ग्रह, रङ्ग और रत्न प्रत्येक सात है। जैसेः—

ग्रह	रंग	रत्न
रवि	लाल	माणिक
चंद्र	मोरा	मोती
मंगल	फीकालाल	मूँगा
बुध	हरा	पन्ना
गुरु	पीला	पुखराज
शुक्र	सफेद	हीरा
शनि	काला	नीलम

और इसी कारण से जो ग्रह अशुभ हो उसके रत्न को धारण करने से उसका अशुभ फल नष्ट होता है यह शास्त्रकारों ने कहा है कि Two negative makes one positiree.

इस विश्व में केवल सूर्य से ही अन्य ग्रहों को आकर्षण शक्ति मिलती है। यह सर्वश्रुत और संशोधकों द्वारा सिद्ध होते हुए सूर्य के आकर्षणशक्तिमय प्रखर किरणों द्वारा भूगर्भ से निर्माण हुए इन रत्नों में आकर्षण नहीं और उन्हें धारण करने से कोई लाभ होना संभव नहीं ऐसा कहना कहाँ तक सयुक्तिक होगा इसका विचार पाठक गण स्वयं कर सकते हैं। ग्रहों का अधिकार मनुष्य के सप्त भागों पर अर्थात् शरीर, मन, शक्ति, वाणी, ज्ञान, काम और दुःख व उसी तरह सात अंतर्भाग अर्थात्, अस्ति, रक्त, मज्जा, त्वचा, वसा, वीर्य व स्नायु पर पूर्णतया होने के कारण यदि इन सात रंगों के सात रत्नों के प्रभाव से मनुष्य का बिगड़ा रंग भी सुधर जाता हो तो इसमें कोई आश्चर्य मानने का कारण नहीं क्योंकि यह अत्यंत स्वाभाविक दिखता है। अर्थात् अशुभ ग्रहों के रत्नों को धारण

करने से व इनमें सूर्य के किरणों द्वारा शरीर में विशेष प्रकार की आकर्षण शक्ति फिर से उत्पन्न होने से मनुष्य के संकट सहज दूर हो सकते हैं यह स्पष्ट सिद्ध होता है। परन्तु इतने पर भी जिन सज्जनों का विश्वास न होता हो उनसे क्या हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि संकट का निवारण विना प्रयत्न के होना संभव है ? अथवा विश्वास पूर्वक निम्न लिखित उपायों को कार्य रूप में परिणत करने से ही संकटों का निवारण होना संभव है ? हमारा यह मत है कि जिस तरह सूर्य लोगों के विश्वास या अविश्वास की पर्वाह न करते हुए अपना कार्य नित्य करता है उसी तरह उसके तेज से निर्मित हुए रत्न धारण करने से वे अपना फल नित्य देते हैं। चाहे लोगों का उन पर विश्वास हो अथवा न हो इसकी वे अपेक्षा नहीं करते।

सामान्य परिस्थिति के मनुष्य को इन रत्नों का प्रत्येक शहर में समय पर मिलना कठिन है तथापि शनि की साढेसाती व अशुभ या मारक ग्रहों की महादशा व अंतर्दशा प्रारम्भ होने के पूर्व इन्हें प्राप्त कर समय पर धारण करने से अशुभ ग्रहों का फल अवश्य नष्ट होगा इसमें संदेह नहीं। इन रत्नों में नीलम मात्र एक ऐसा विचित्र रत्न है वह अपने शुभ या अशुभ फल से अविश्वासी मनुष्य के मन में भी विश्वास उत्पन्न करा सकता है। यदि रत्न सच्चा हो तो इसे धारण करने से ७२ घंटे के अंदर शुभाशुभ फल निःसंदेह मिलेगा। कई प्रसंग पर यह रत्न धारण करने के कुछ घंटे के अंदर आकस्मिक सुख या दुःख की घटना उत्पन्न कर अपना चमत्कार इस तरह दिखाता है कि कट्टर अविश्वासी मनुष्य को भी इसके अतुल्य शक्ति पर अविश्वास करना

असंभव हो जाता है। असली नीलम की यही एक परीक्षा है। परन्तु नीलम यदि नकली पत्थर का हो तो वह शुभ या अशुभ दोनो प्रकार के फल देने को असमर्थ रहता है यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। पाठकों को यह स्मरण रहे कि नीलम में यदि जाला व लकीर हो या वह कटा हो तो वह अत्यंत हानि पहुँचाने वाला होने के कारण वे उसे ग्रहण न करें अन्यथा उन्हें वह हानि पहुँचायेगा। इस रत्न की खरीदी ७२ घंटे के अंदर वापिस लेने के शर्त पर ही की जाती है और यह शर्त प्रत्येक जौहरी को मान्य करना पड़ता है किंतु अन्य ग्रहों के रत्नों को धारण करने से कोई हानि नहीं पहुँचती। अतः उनकी खरीदी नित्य व्यावहारिक शर्तों पर की जाती है, प्रत्येक ग्रहों के रत्नों का नाम नीचे लिखे अनुसार है जैसेः—

रवि	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु
माणिक,	मोती,	मूंगा,	पन्ना,	पुखराज,	हीरा,	नीलम,	गोमेद

और केतु—लसन्या।

उपर लिखे हुए ग्रहों के रत्नधारण विधि के अतिरिक्त प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वे नीचे लिखे हुए धार्मिक उपाय कार्यरूप में लाने का प्रयत्न करे। क्योंकि एक ही साथ दोंनों उपायों को करने से अशुभ ग्रहों की तीव्रता शीघ्र ही नष्ट होगी। जैसेः—

(१) अशुभ या मारक ग्रहों के दिन उपवास कर आचार से रहना।

(२) शुचिर्भूत होकर पूजा, प्रार्थना, जप, दान आदि करना।

(३) अशुभ ग्रहों के रत्नों को सदैव या पूर्ण समय तक के लिये नियम से धारण करना ।

(४) आचार व कर्म निष्ठ ब्राह्मण द्वारा कर्म व जप कराना तथा उसे दान देना ।

(५) गुरु की कृपा व आत्मबल से संकटों के परिणामों पर विजय प्राप्त करना ।

नवग्रहों का जपदान वगैरः

ग्रह	रवि	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
धातुधारण व दान करना—	सोना	सोना	सोना	सोना	सोना	सोना	सोना	सोना	सोना
उप धातु ,, ,,	तांबा	चांदी	तांबा	कांसा	कांसा	चांदी	लोहा	सीसा	पौलाद
रत्न ,, ,, ,,	माणिक	मोती	मूंगा	पन्ना	पुखराज	हीरा	नीलम	गोमेद	लसन्या
धान्य—दान करना—	गोधूम	चावल	मसूर	मूंग	चना	चावल	उडीद	तिल	तिल
पशु ,, ,,	लालगाय	सफेद वृषभ	रक्तवर्ण वृषभ	गज	अश्व	श्वेताश्व	महिषी	अश्व	मेंढा
रस ,, ,,	गुड	घी	गुड	घी	शक्कर	घी	तेल	तेल	तिल
वस्त्र ,, ,,	कुसुंभव	सफेद	लाल	नीला	पीला	मिश्र	काला	नीला	काला
पुष्प—पूजाके लिये	लाल	सफेद	लाल	सर्वपुष्प	पीला	शुभ्र	काला	काला	धूम्र
जप संख्या	७ ह०	११ ह०	१० ह०	४ ह०	१९ ह०	१६ ह०	२३ ह०	१८ ह०	१७ हजार

संकट निवारणार्थ ऊपर लिखे अनुसार शास्त्रोक्त मंत्रों का जप तथा पूजा व दान करने से शीघ्र फल मिलेगा। परंतु प्रत्येक मनुष्य को यह करना संभव नही अतः उन्हें चाहिये कि वे आचार-तज्ञ व ब्रह्मकर्म में प्रवीण ब्राह्मणों द्वारा पूजा व जप करावें तभी फल मिलना संभव है।

द्वादशलग्न कोष्टक

प्रत्येक लग्न के मनुष्यको कौन से ग्रह अनुकूल व प्रतिकूल हैं यह कोष्टक में दिया है जैसेः—

द्वादशलग्न कोष्टक का स्पष्टीकरण

लग्न	शुभग्रह	अशुभग्रह	शुभाशुभग्रह	मारकग्रह
मेष	र. चं. मं.	बु.	गु. श.	शु.
वृषभ	र. श.	गु.	चं. शु.	मं. बु.
मिथु	बु.	मं.	शु. श. सू.	चं. गु.
कर्क	मं. चं.	शु	गु. बु.	सू. श.
सिंह	सू. मं.	चं.	गु. शु.	चं. श.
कन्या	बु.	सू. मं. चं.	श.	शु. गु.
तुला	श. चं.	सू. गु.	बु. शु.	मं.
वृश्चिक	सू. चं.	बु.	श. मं.	गु. शु.
धन	सू. गु.	चं. शु.	मं.	श. बु.
मकर	शु.	गु. सू.	मं. बु.	श. चं.
कुंभ	शु.	चं. सू.	मं. बु.	सू. गु.
मीन	गु. चं.	सू. श. शु.	—	मं. बु.

अशुभ ग्रहों की महादशा और अंतर्दशा जिस समय से शुरू होती है उसी समय से बहुधा अशुभ फलका मिलना आरंभ होता

है और पूर्ण दशाकाल तक वह फल मनुष्य को मिलता है अतः मारकग्रह और अशुभ ग्रहों के विषय में मनुष्य ने अत्यंत सावध रहना चाहिये। प्रत्येक ग्रहों का फल किस प्रकार व कितने समय तक मिलेगा इसके संबंध में महादशा विभाग में वर्णन किया है।

(ग्रहदशा) –महादशा का विचार

महादशा मुख्य दो प्रकार की है अर्थात् विंशोत्तरी और अष्टोत्तरी। इन के अनुसार मनुष्य के आयुष्य मर्यादा का विचार किया जाता है अर्थात् विंशोत्तरी महादशा से १२० वर्ष और अष्टोत्तरी महादशा से १०८ वर्ष का आयुष्य निश्चित किया गया है। नर्मदा नदी के उत्तर भाग में अष्टोत्तरी महादशा और दक्षिण में विंशोत्तरी महादशा का उपयोग बहुधा किया जाता है। जन्म नक्षत्र पर से ग्रहदशा का निर्णय किया जाता है यह हम प्रथम लिख चुके हैं। नवग्रह के मुख्य दशा को महादशा कहते हैं और इन दशा काल के अन्तर्गत फिर से नवग्रहों में जो काल विभाजित किया गया है उसे अन्तर्दशा कहते हैं। अन्तर्दशा के अन्तर्गत पुनः नवग्रहों में जो काल विभाजित किया गया है उसे विदशा कहते हैं। इस विषय का पूर्ण विवेचन स्वतन्त्र ग्रन्थ के सिवाय होना असंभव है। अतः विंशोत्तरी महादशा के विषय ही यहाँ संक्षिप्त में लिखकर इसे समाप्त करना उचित होगा।

हम पहिले लिख चुके हैं कि नक्षत्र २७ हैं, राशि १२ हैं और ग्रह ९ हैं अर्थात् प्रत्येक ग्रहों से तीन नक्षत्रों का विचार किया जाता है जो कि महादशा के कोष्टक से ज्ञात होगा। प्रत्येक नक्षत्र में ४ चरण होते हैं और इन चरणों का बोध मनुष्य के जन्म नाम के आद्य अक्षर

से होता है परन्तु जन्म या व्यावहारिक नाम यदि शास्त्रोक्त रीति से रक्खा गया हो तभी इसका विचार निश्चित रूप से करना संभव होगा। जैसे मान लो कि जन्म समय जन्म इष्ट घटी के अनुसार किसी मनुष्य का नाम रामचन्द्र रक्खा गया तो इसके नाम पर से इस मनुष्य का जन्म नक्षत्र, चरण, राशि व महादशा अथवा ग्रहदशा क्या होना चाहिये यह सहज मालूम हो सकता है। रामचंद्र नाम का आद्य अक्षर 'रा' है। इसलिये इस मनुष्य का जन्म चित्रा नक्षत्र तृतीय चरण में हुआ, इसकी जन्मराशि तुला है, और जन्म समय मङ्गल महादशा का प्रभाव था। इस तरह स्थूल मान से जन्म नाम पर से चरण, नक्षत्र, राशि और ग्रहदशा का ज्ञान क्रमशः हो सकता है परन्तु नक्षत्र के चरणों पर से कितना काल मुक्त हो गया और कितना काल बाकी है यह निश्चित रूप से जानने के लिये सूक्ष्म गणित करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त निश्चित समय का निर्णय करना तथा उसका फल मिलना अशक्य है। किंतु नीचे लिखे हुए उदाहरण पर से पाठकों के ध्यान में यह सहज आ जायगा कि आजकल गणित विषय कितने पूर्णावस्था के शिखर पर पहुँच चुका है और फलित शास्त्र के लिये शुद्ध गणित की कितनी आवश्यकता है।

जन्म महादशा (ग्रहदशा) जानने की रीति

मान लो किसी मनुष्य का जन्म शके १८५५ संवत् १९८९ ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष चतुर्थी रविवार पुनर्वसु नक्षत्र ४७।१३ पल जन्म इष्ट घटी ३४–५० पल पर हुआ तो जन्म समय में किस ग्रह की महादशा होनी चाहिये? जन्म नक्षत्र पुनर्वसू होने के कारण प्रथम यह जानना चाहिये कि यह पूर्ण नक्षत्र कितने घटी पल कब से

कब तक था । जन्म के पूर्व दिन याने शनिवार को आश्लेषा नक्षत्र ४२ घटी २० पल तक था अर्थात् इसके बाद पुनर्वसू नक्षत्र आरंभ हुआ परंतु उस दिन वह कितना था यह मालूम करने के लिये ६० घटी में से आश्लेषा नक्षत्र के घटी पल को घटा देने के बाद जो शेष बचे वही शनिवार के दिन का पुनर्वसू नक्षत्र समझना चाहिये । जैसेः—

	६०—०
शनिवार के दिन आश्लेषा नक्षत्र	४२—१०
,, ,, ,, पुनर्वसु ,,	१७—५०
रविवार के दिन पुनर्वसु नक्षत्र	४७—१३
कुल ,, ,,	६५—३ पल

अब यह जानना चाहिये कि नक्षत्र के प्रारम्भ से जन्म समय तक पुनर्वसु नक्षत्र कितना भुक्त हो चुका था

	घ. प.	
शनिवार के दिन पुनर्वसु नक्षत्र	१७—५०	पल था
रविवार ,, ,, ,, ,,	३४—५०	पर जन्म

हुआ व जन्म समय तक पुनर्वसु नक्षत्र ५२—४० पल भुक्त हो चुका था

इसके आगे कुल नक्षत्र व जन्म समय तक के नक्षत्रों को ६० से गुणाकर पल बनाओ ।

६५—३	५२—४०
× ६०	× ६०
३९००	३१२०
३	४०
३९०३ पल	३१६० पल

महादशा कोष्टक में पुनर्वसु नक्षत्र गुरु महादशा में लिखा है और इस ग्रह की दशा १६ वर्ष की है अतः त्रैराशिक द्वारा यह निकालो कि जन्म समय पुनर्वसु नक्षत्र कितना भुक्त हो गया था और कितना वर्ष भोग्य वाकी है। जैसेः—

पल पल वर्ष
३९०३ ÷ ३१६० × १६

३९०३)५०५६०(१२ वर्ष
३९०३
११५३०
७८०६
३७३४ × १२
३९०३)४५२०८(११ मास
३९०३
× ६१७८
३९०३
२२७५ × ३०
३९०३)६८२५०(१७ दिन
३९०३
२९२२०
२७३२७
१८९९

	वर्ष	मा.	दि.
गुरु महादशा काल	१६	०	०
,, ,, भुक्त ,,	१२	११	१७
,, ,, भोग्य ,,	३	०	१३

इस रीति से जन्म ग्रह दशा मालूम करने के पश्चात् यह जानना चाहिये कि वर्तमान समय में किस ग्रह की दशा चालू है और वर्तमान ग्रहदशा का शुभ फल मिलेगा अथवा अशुभ। प्रथम बालक की उमर आज कितनी है यह जानना चाहिये। जन्म ता० २८–५–१९३३ को हुआ और आज ता० २८–१२–१९४२ है इसलिये बालक की उम्र ९ वर्ष ७ महीने हुई।

	वर्ष	माह	दिन
गुरु महादशा संपूर्ण	३	०	१३
शनि महादशा प्रारम्भ (१६ वर्ष)			

शनि में अंतर्दशा

शनि	३	०	३
बुध	२	८	९
	८	८	२५
केतु	०	१०	५
	९	७	०

बालक की उम्र आज ९–७–० दि० है अर्थात् इस समय शनि महादशा में केतु की अंतर्दशा चालू है यह सिद्ध हुआ। इस तरह वर्तमान ग्रह दशा मालूम करने पर उसका क्या फल मिलेगा इसका निश्चय आगे लिखे हुए ग्रह दशा फल के आधार पर करना चाहिये।

ग्रह दशा फल

ग्रह दो प्रकार के हैं एक शुभ और दूसरा अशुभ। अतः

प्रथम शुभ और अशुभ ग्रहों का सामान्यतः किस तरह का फल मिलता है यह ध्यान में लाना चाहिये जैसेः—

शुभ ग्रहदशाफल—आरोग्य, धनवृद्धि, शत्रु का पराजय, इष्ट कार्य की सिद्धी, ऐश्वर्य, प्रापंचिक सुख आदि अनेक अनुभव आपोआप मिलते हैं।

अशुभ ग्रहदशाफल—लोकोपवाद, विश्वासघात, द्रव्य हानि, रोग, बिमारी, शरीर कष्ट, आप्तवर्ग के सदस्यों की मृत्यु, वियोग, धंदे में नुकसान आदि।

इस तरह शुभ और अशुभ ग्रहों के फल का साधारण ज्ञान होने से मनुष्य को संतोष होना कठिन है अतः प्रत्येक ग्रह की दशा का क्या फल मिलेगा यह जानना चाहिये ? ग्रह दशा का फल निश्चित करने के पूर्व प्रथम उस ग्रह के स्थिति का विचार करना चाहिये अन्यथा पूर्ण फल मिलना असंभव होगा। ग्रहों के स्थिति का विचार नीचे लिखे अनुसार करना चाहिये जैसेः—

१ ग्रह किस भाव व राशि में हैं, उच्च अथवा नीच राशि और शुभ अथवा अशुभ भाव में हैं।

२ ग्रह शुभ या अशुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हैं अथवा नहीं।

३ दशा स्वामी (ग्रह) से अंतर्दशा का ग्रह किस स्थान में हैं और दोनों परस्पर शुभ योग करते हैं अथवा अशुभ योग।

मनुष्य के जीवन में जो सदा सर्वदा परिवर्तन हुआ करता है उसका मुख्य कारण ग्रहदशा का प्रभाव है। जन्म कुंडली में यदि रा. गु. श. बु. और शु. शुभ फलदायी हों और मनुष्य का जन्म इनमे से रा. गु. या श. महादशा में हुआ हो तो उसका

पूर्ण आयुष्य सुख से व्यतीत होगा यह अनुमान इसी आधार पर किया जाता है व इसीलिये फलित वर्तते समय इस शास्त्र के ज्ञाता इन ग्रहों के स्थिति का प्रथम विचार किया करते हैं। जन्म कुंडली के द्वादश भाव और द्वादश राशि में से प्रत्येक भाव व राशि में नवग्रह यदि स्थित हों तो उनका शुभाशुभ फल मनुष्य को किस तरह मिलेगा यह संक्षिप्त में नीचे लिखा है। जैसेः—

रवि महादशा भावफल

लग्न भाव—देशांतर व रोग, प्रवास, भ्रमण, अस्थिर।

द्वितीय ,,—वाणी में दोष, द्रव्य की चिंता, राज भय, बंधु वियोग।

तृतीय भाव—बंधुवैर, धैर्य, सुख, धनलाभ, राजसन्मान।

चतुर्थ भाव—अग्नि, शस्त्र व चोर भय, मातृपीड़ा।

पंचम भाव—मंत्रविद्या, धन संचय, संतति को अपायकारक, आरंभशूर, शरीर कष्ट, अस्थिर बुद्धि।

षष्ठ भाव—व्रण, मूत्रकृच्छ्र, रक्त दोषादि क्लेश, ज्वर, शत्रू पक्ष का नाश।

सप्तम भाव—प्रापंचिक सुख में आपत्तियां, स्त्री को कष्टदायक, मानसिक चिंता।

अष्टम भाव—शरीर कष्ट, उद्योग धंधा के लिये अनिश्चित, नेत्र पीड़ा, ज्वर व उष्ण विकार से त्रास, मनकी दुर्बल स्थिति।

नवम भाव—अविचारी कार्य, विपरीत व दुष्ट बुद्धि, नास्तिकमत, धार्मिक विचारों में स्वजन से विरोध।

दशम भाव—उद्योग धंधा, राजसन्मान, अधिकारीयों की मैत्री के लिये अनुकूल, यशप्राप्ति, ऐश्वर्य प्राप्ति व धनलाभ।

एकादश भाव---विपुल द्रव्यलाभ, राजकीय व औद्योगिक उत्कर्ष, संतति के लिये उत्तम, सब प्रकार से द्रव्य लाभ ।

द्वादश भाव---सब प्रकार की चिंता, ऋणग्रस्त स्थिति, कष्ट, कलह, शत्रुत्व, संकट, नुकसान के प्रसंग, अपयश, राजा से अपमान ।

रविमहादशा-राशिफल

मेष राशि---स्वधर्म पर श्रद्धा, तीव्र बुद्धि, उच्चविचार, महत्वाकांक्षा, पूर्वार्जित धनलाभ, स्त्री पुत्रादि सुख ।

वृषभ राशि---संतति व स्त्री को पीडा, जमीन जुमला, घरदार वाहन की चिंता, हृदयरोग, द्रव्यनाश, मानसिक स्थिति असंतोषजनक ।

मिथुन राशि---विद्याका अभिमान, वाचनप्रिय, कवी, प्राचीन ग्रंथों के विषय में अभिमान, बुद्धिवान व द्रव्यवान ।

कर्क राशि---शीघ्र कोपी परंतु निष्कपटी, श्रेष्ठ अधिकारियों से मित्रता परन्तु आप्तवर्ग व मित्र से बैर करने वाला, स्त्री लोलुप ;

सिंह राशि---महापराक्रमी, द्रव्ययोग उंचा, राज सन्मान, धाड़सी, अचाट कार्य व सर्वोपर छाप ।

कन्या राशि---देव ब्राह्मण पर श्रद्धा व भक्ति, मधुर भाषी, भूमिलाभ, वाहनादि सौख्य ।

तुला राशि---स्त्री संबंध से अपमान व कष्ट, चोर, अग्निभय, स्त्री व स्थावर स्टेट के लिये प्रतिकूल ।

वृश्चिक राशि---अग्निभय, शस्त्राघात, विषारी जनावरों से भय, मातापिता व आप्तवर्ग से अपमानास्पद व्यवहार ।

धन राशि—द्रव्यलाभ, ऐश्वर्य, उत्कर्ष, प्रापंचिकपूर्ण सुख, स्वजाती व राजा से सन्मान, गायनवादनप्रिय,

मकर राशि—दुःख, कष्ट, परावलंबी जीवन, प्रापंचिक स्थिति निराशजनक।

कुंभ राशि—संतति, संपति, स्त्री, पुत्रादि संबंध से चिंता, विरोधी लोगोंसे त्रास व मानहानि, हृदयरोग, मानसिक दुःख।

मीन राशि–द्रव्यहानि, अल्पसुख, रक्तदोष, ज्वर व पित्तरोग,

चंद्रमहादशा–भावफल

प्रथम भाव—प्रापंचिक व सांपत्तिक सुख के लिये प्रतिकूल अस्थिर, दुर्बल मानसिक स्थिति, शरीर कष्ट, उद्योग के लिये प्रतिकूल।

द्वितीय भाव—द्रव्य संचय, प्रापंचिक सुख पूर्ण, पुण्यकर्म, ऐषाराम, मिष्टान्न प्राप्ति।

तृतीय भाव—भातृसुख के लिये अनुकूल, पराक्रम मे यश, प्रवास में सुख, स्थलांतर, लेखनादि कार्य में सन्मान,

चतुर्थ भाव–सांपत्तिक, स्थावर, वाहन, स्त्री पुत्रादि, अधिकार, लाभ व सौख्य, सार्वजनिक कार्य में प्रतिष्ठा, व कीर्ति।

पंचम भाव–संतति, विद्या, अधिकार सुख, विद्वान लोगों से मित्रता।

षष्ठ भाव–द्रव्यनाश, स्त्री पुत्रको पीडा, कलह, मूत्ररोग।

सप्तम भाव–स्त्री सुख, व्यापार से लाभ, शत्रुसे त्रास।

अष्टम भाव–माता को पीडा, परदेशगमन, शत्रुता, शरीरकष्ट,

नवम भाव–भाग्योदय को अनुकूल, उत्कर्ष, सर्व प्रकार का सुख।

दशम भाव—माता-पिता से सुख, द्रव्य लाभ, राजा से मान ।

एकादश भाव—स्त्री पुत्र, धन, मित्र आदिसे सुख व लाभ ।

द्वादश भाव—भाग्य हानि, मित्र व आप्तवर्ग से विरोध, संकट काल में अपयश के प्रसंग ।

चन्द्र महादशा-राशिफल

मेष राशि—ईश्वर पर भरोसा, उदार व दयालु, चञ्चल वृत्ति, दिखाऊ कामों का तिरस्कार ।

वृषभ राशि—सन्तति, संपति, स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब, वाहन, धनादि सुख, श्रीमान् व राज समान सुख ।

मिथुन राशि—मातृपितृ भक्त, प्रवासी, सुखी, धार्मिक वृत्ति ।

कर्क राशि—जमीन, घर, वाहन आदि की प्राप्ति, नये कार्य का आरम्भ, कीर्तिकारक प्रसङ्ग, परोपकारी, गुप्त विकार ।

सिंह राशि—राजकीय उन्नति, श्रेष्ठ अधिकार, मानमान्यता, द्रव्य प्राप्ति, किंतु शरीर कष्ट ।

कन्या राशि—पाप बुद्धि, द्रव्य व स्त्री प्राप्ति, स्त्री सुख, परदेश गमन, लोगों में गैरसमज ।

तुला राशि—स्त्री विषयक विचार, बुरे लोगों की सङ्गति, दारिद्र्य, द्रव्य का अभाव ।

वृश्चिक राशि—पराधीनता, राजकीय सङ्कट, सांपत्तिक हीनावस्था, स्वजन से शत्रुत्व, शरीर व्याधि, दुष्टकृत्य ।

धन राशि—पूर्वार्जित स्टेट का क्षय, मानसिक व राजकीय स्थिति असमाधान कारक, स्वपराक्रम से भाग्योदय ।

मकर राशि—प्रवास, द्रव्यलाभ, सन्तति सौख्य, गुप्तचिंता, व्यवसाय में अस्थिरता ।

कुंभ राशि—ऋणग्रस्त स्थिति, हीन द्रव्य स्थिति, क्लेश, बुरे लोगों की मैत्री, पाप कृत्य ।

मीन राशि—ज्यादा खर्च, जलोत्पन्न वस्तुओं की रुचि, सत्कर्म में द्रव्य का खर्च, स्त्री-पुत्र-सुख, शत्रु पक्ष का नाश ।

मङ्गल महादशा-भावफल

प्रथम स्थान—मस्तक में पीड़ा, संताप, शरीर कष्ट, त्रास, चिन्ता, स्त्री को कष्ट, अधिकार से भ्रष्ट, द्रव्यनाश, देशांतर, शत्रु से पराभूत, उद्योग धन्दा व नौकरी में सङ्कट ।

द्वितीय स्थान—धन की कमतरता, नेत्रविकार, फजूल खर्च, उष्ण विकार से त्रास, संतति को दुःख ।

तृतीय स्थान—पराक्रम, साहस, शौर्य के लिये अनुकूल, मान, प्रतिष्ठा, सत्ता, अधिकार प्राप्ति, भ्रातृ को अनिष्ट ।

चतुर्थ स्थान—स्थावर जमीन जुमला के सम्बन्ध चिंता, अपघात का डर, संतति को मृत्यु सम पीड़ा, रोगभय ।

पंचम स्थान—विपरीत बुद्धि, तामसी व हट्टी स्वभाव, दूषित कर्म, लाभ से हानि अधिक, नेत्ररोग ।

षष्ठ स्थान—शत्रु का पराभव, धाड़सी कार्यों में यश, कार्यसिद्धि, अनिश्चित सांपत्तिक स्थिति, कष्ट, त्रास, चिंतायुक्त मन ।

सप्तम—स्त्री को अनिष्ट, गंडांतर, प्रवास, द्रव्य नाश, भय, उद्योग धन्दा के कारण दूर २ का प्रवास ।

अष्टम स्थान—मस्तक में पीड़ा, बवासीर की बीमारी, गुप्त विकार के रोग, द्रव्यनाश, उद्योग संबन्धी चिंता, देवी, गोवर की बिमारी, सब प्रकार से चिन्ता ।

नवम स्थान--भाग्योदय में विघ्न, दांभिक, धर्म के विषय उदासीन, पापवृत्ति।

दशम स्थान--अधिकार प्राप्ति, व्यापार से लाभ, शत्रु नाश, स्थावर प्राप्ति योग, मान सम्मान, यश, द्रव्य लाभ, आदि सर्वसुख।

एकादश स्थान--स्त्री, स्थावर स्टेट, द्रव्य प्राप्ति व सुख, संतति को अनिष्ट, शत्रु नाश।

द्वादश स्थान—धन नाश, स्त्री को कष्ट, गंडांतर, प्रापंचिक व औद्योगिक विकट प्रसंग, राजभय, शत्रु पीड़ा, अपमान।

मङ्गल महादशा-राशि फल

मेष राशि—धाडसी कार्यों में यश, युद्ध में विजय, राजा से सन्मान वस्त्र व आभूषण की प्राप्ति, शारीरिक कष्ट, राज्य प्राप्ति।

वृषभ राशि—सत्कर्म के लिये द्रव्य का व्यय, स्त्री को कष्ट।

मिथुन राशि—पिता से विरोध, प्रवास, स्वजनविरोधी, अपने अभिमान में दंग, स्थालांतर, धूर्त, कला कौशल का जानने वाला, भयङ्कर खर्ची, द्रव्य नाश।

कर्क राशि—आप्तवर्ग व स्त्री पुत्र का वियोग, चिंता, जमीन जुमला, घरदार, नौकर वाहन भूमि की प्राप्ति।

सिंह राशि—अनेक लोगों पर अधिकार, मुख्य नेता, निश्चयी साहसी, सत्याग्रही, संकट में धैर्य रखने वाला, श्रीमान्, भाग्यवान परन्तु स्त्री पुत्र का वियोग, अग्नि भय, राज्य कारभार में प्रमुख।

कन्या राशि—धन धान्य की वृद्धि, स्त्रियों का अभिलाषी, प्रापंचिक सुख, सदाचारी, सत्कर्मी।

तुला राशि—व्यापार व स्त्री से धन लाभ।

वृश्चिक राशि—भूमि से लाभ, अधिक भाषण, गुप्त शत्रु।

धन राशि—धर्माचरण के ओर लक्ष, वादविवाद अप्रिय।

मकर राशि—रण व युद्ध में यश, अधिकार व सुख प्राप्ति, ऐश्वर्य संपन्न, पुढारी कार्यकर्ता, श्रेष्ठ आर्थिक स्थिति।

कुंभ राशि—धर्म भ्रष्ट, संतति से कष्ट, अधिक खर्च।

मीन राशि—परदेश वास, ऋणग्रस्त, हृदय रोग, पुत्र चिंता मस्तक व नेत्र की पीड़ा, सब प्रकार से हानि।

राहु महादशा-भाव व राशिफल

लग्न में राहु—शरीर को कष्ट, विष व अग्नि से भय, शत्रु से त्रास, नुकसान, इष्ट कार्य में अनेक अड़चन।

धन में राहु—द्रव्य नाश, पराधीन स्थिति, नेत्र रोग, स्त्री को कष्ट, अपयश, नुकसान, राजकीय कार्य में अपयश।

तृतीय में राहु—पराक्रम में यश, श्रेष्ठों से मित्रता, द्रव्यलाभ, प्रापंचिक सुख, नौकर चाकर सुख।

चतुर्थ राहु—मातृकष्ट, गंडांतर व वियोग, राजाका कोप, मित्रो से विश्वासघात, स्वजन से विरोध, घरदार जमीन जुमला संबंधी आपत्ति।

पंचम राहु—मनोभंग, विद्या में अपयश, अधिकार भंग, शत्रु से पराभव, कलह, ऋण ग्रस्त, द्रव्य नाश संतति को कष्ट।

षष्ठ राहु—शत्रुनाश, नौकर सुख, चोर, अग्नि, विष से भय, प्रमेह, गुल्मपित्त रोग से शरीर को कष्ट।

सप्तम राहु—स्त्री को कष्ट, मृत्यु समपीडा, मृत्युयोग, भाग्य-हानि, संकट, क्लेश, द्रव्यनाश, प्रवास व स्थलांतर।

अष्टम राहु–भयंकर रोग, मृत्युसम दुःख, द्रव्यनाश, कुटुंब नाश, उद्योगमें हानि, अनेक दुःखमय प्रसंग ।

नवम राहु–पिता या बड़े भाई से दुःख, प्रीति करने वालों का नाश, बंधु वियोग, समुद्र व तीर्थयात्रा, गंगास्नान, स्थानांतर ।

दशम राहु–साधुसंत का लाभ, गंगास्नान, तीर्थयात्रा, उद्योग में यश, परिस्थिति में फेरबदल, धर्म ग्रन्थों का पठन, प्रापंचिक सुख।

एकादश राहु–स्त्री, पुत्र, द्रव्य, मान, ऐश्वर्य लाभ, सुख व कीर्ति ।

द्वादश राहु–स्त्री पुत्र का नाश–वियोग, मनको दुःख, घर जमीन–धन–धान्य का नाश, राजकोप, शत्रुकोप, दुःख ।

मिथुन राशि राहु–मान मान्यता, श्रेष्ठ अधिकार, मित्र, संपति, संतति, सुख प्राप्ति, उद्योग धंदा, व्यवहार में यश, उत्कर्ष, चिंता का नाश ।

धन राशि राहु–इसके विपरीत अशुभ फल ।

गुरु महादशा–भावफल

लग्न में गुरु–शरीर, बुद्धि, विद्या, ऐश्वर्य, संतति लाभ, भाग्योदय को अनुकूल ।

धन में गुरु–राजसभा में प्रवेश, बडों से मित्रता, श्रेष्ठ अधिकार प्राप्ति, द्रव्यलाभ, ऐश्वर्य, शत्रु नाश, श्रीमान व सत्कर्माचरणी ।

तृतीय में गुरु–बंधु सौख्य, बंधु को अनुकूल, पराक्रम उद्योग में यश द्रव्यलाभ ।

चतुर्थ में गुरु–राज तुल्य सुख व ऐश्वर्य, सब कुछ अनुकूल सब प्रकार का पूरा २ सुख ।

पंचम में गुरु—वेदांत, शास्त्र, मंत्र विद्यामें निपुण, संतति सुख, राजमंडल में प्रवेश।

षष्ठ स्थान —स्त्री पुत्रादि सुख, द्रव्य लाभ, उद्योग में यश, रोग से कष्ट, गुप्त शत्रु व चोरों से त्रास।

सप्तम स्थान—द्रव्य, स्त्री, पुत्र आदि से सुख, व्यापार में वृद्धि, प्रवास में सत्कर्म।

अष्टम स्थान—स्वतः व स्त्री पुत्रादि को कष्ट, मृत्यु समपीड़ा, व्याधि, विरोध, परदेश वास, अन्त में राज सम्मान लाभ।

नवम स्थान—अधिकार, स्त्री पुत्र, द्रव्य, वाहन लाभ, व सुख, वेदांत शास्त्र की रुचि, धार्मिक वृत्ति।

दशम स्थान—राजकृपा, अधिकार, उद्योग, नौकरी, स्त्री, पुत्रादि से सुख, लोग अनुकूल, सर्वश्रेष्ट।

एकादश स्थान—स्थावर, भूमि, वाहन, द्रव्य प्राप्ति, अधिकार सम्पन्न लोगों से मैत्री, नौकर चाकर, सुख व राजा से विरोध।

द्वादश स्थान—सब प्रकार से लाभ परन्तु शरीर को कष्ट, शत्रु से पीड़ा, मानसिक चिन्ता।

गुरु महादशा-राशि फल

मेष राशि—समाज में मान्यता, वैभव, स्त्री पुत्रादि सुख, भाग्योदय, समाधान।

वृषभ राशि—द्रव्य लाभ व संचय, शत्रु पीड़ा, त्रापंचिक व शारीरिक सुख, मानसिक अस्वस्थता।

मिथुन राशि—बुद्धि व पराक्रम से सुख, विद्या योग, स्त्री अथवा स्त्री सम्बन्ध से त्रास, धार्मिक कर्म।

कर्क राशि–अधिकार व राज्य प्राप्ति, मंत्री पद लाभ, वैभव व ऐश्वर्य सुख।

सिंह राशि–विद्या में यश, बुद्धि श्रेष्ठ, संतति सौख्य, पराक्रमी, श्रीमान लोगों की मैत्री, राज सन्मान, धनलाभ व कीर्ति।

कन्या राशि–उद्योग धंदामे यश, अधिकारी से मित्रता, अधिकार लाभ, स्त्री पुत्रादि सुख, नीच लोगों से त्रास, विरोध, अपमान के प्रसंग, धन का व्यय।

तुला राशि–उद्योग में अपयश, स्त्री पुत्रों से त्रास, चंचल वृत्ति, स्वजाती से शत्रुत्व।

वृश्चिक राशि–स्थावर, जमीन जुमला, घरदार, स्टेट की प्राप्ति, विद्या बुद्धि, व यश प्राप्ति।

धन राशि—चतुष्पाद वाहन व नौकर सुख, वेदशास्त्र, यज्ञ कर्म में प्रवेश, ईश्वरभक्ति, परोपकार्य कर्म।

मकर राशि—परदेशवास, शत्रु-स्वजन-विरोध, गुप्त रोगों की वृद्धि, द्रव्यचिंता, दारिद्रयोग, स्त्री पुत्र को कष्ट, संकटकाल।

कुंभ राशि—तीव्रबुद्धि, विद्यामें यश, मान सन्मान, स्त्री सौख्य, संतति का उत्कर्ष, भाग्योदय, राज कार्य में यश और प्रतिष्ठा।

मीन राशि—प्रापंचिक व औद्योगिक सुख, राजदरबार में यश, द्रव्यलाभ व ऐश्वर्य सुख।

शनि महादशा भावफल

प्रथम स्थान—मानसिक बाधा, वात विकार, रोगवृद्धि, राज कोप, उद्योगमें अपयश, द्रव्य का अभाव।

द्वितीय स्थान—कौटुम्बिक आपत्ति, द्रव्यनाश, नेत्रपीडा,

उष्ण विकार, दुःखदायक प्रसंग, राजभय, स्त्री को कष्ट, मातृ कष्ट व वियोग, मृत्यु ।

तृतीय स्थान—बंधुपर संकट व बुद्धिभ्रंश, स्वजनपर छाप, उद्योगधंदा के लिये अनुकूल ।

चतुर्थ स्थान—मातृपीडा, शत्रु से त्रास, राजा से संकट, स्थावर नाश, वाहन से अपघात, अग्नि से गृह नाश, शस्त्र से पीडा ।

पंचम स्थान—बुद्धि को अनिष्ट, संतति को कष्ट, विद्यामें विघ्न. स्त्री को कष्ट, द्रव्य की कमतरता, ।

षष्ठ स्थान—शारीरिक व्याधि, मानसिक संकट, स्वजातीय व अन्य शत्रुओं से पीडा, गृह भूमिका नाश, द्रव्य लाभ के लिये साधारण ।

सप्तम स्थान—स्त्री को गंडांतर, भाग्योदय में आपत्ति, स्थावर नाश, मातृ कष्ट, स्त्री से दुःख, मूत्र कृच्छ्रादि रोग ।

अष्टम स्थान—शारीरिक कष्ट, रोग, मृत्यु समपीड़ा, गंडांतर अपमान के प्रसंग, संकटग्रस्त स्थिति का पीछा, सांपत्तिक नीच स्थिति ।

नवम स्थान—बड़े आप्त लोगों को मरणसम दुःख, शत्रु पक्ष का नाश, रोगों का नाश, स्थानांतर, दूर का प्रवास, भरपूर द्रव्य लाभ, परंतु संकट काल ।

दशम स्थान—स्त्री पुत्र नौकर आदि से त्रास, उद्योग व व्यापार में विघ्न, कार्यनाश, द्रव्यनाश आदि ।

एकादश स्थान—श्रीमान व अधिकार संपन्न लोगों से मैत्री, अनेक प्रकार से धन प्राप्ति, गृह, भूमि नौकर की प्राप्ति, भाग्योदय काल, सांपत्तिक उत्कर्ष ।

द्वादश स्थान—राजकीय संकट, द्रव्यनाश, अपयश, शरीर कष्ट, दारिद्र, दुःख, ऋणग्रस्त स्थिति चोर, राजदंड, राजकोप, कैद, शत्रु से त्रास आदि।

शनि महादशा—राशिफल

मेष राशि—मस्तक में पीड़ा, रक्तदोष, खजुली आदि की व्याधि, अपचनादि विकार, दुःखदायक प्रसंग।

वृषभ राशि—युद्ध व वादविवाद में जय, स्त्रियों से मैत्री, पराक्रम में यश, तीव्र बुद्धि, सांपत्तिक लाभ।

मिथुन राशि—स्त्री सौख्य, ऐष आराम, विलास में निमग्न, बुद्धि के बल लोगों पर छाप।

कर्क राशि—नेत्र पीड़ा, अस्थिर मन, शारीरिक अवस्था।

सिंह राशि—मानसिक अस्वस्थता, वादविवाद, विरोध व वियोग, स्त्री पुत्र से कलह, अनेक संकट।

कन्या राशि—उद्योग धंदा व्यापार में यश, द्रव्य की वृद्धि।

तुला राशि—आकस्मिक स्थावर, घरदार, जमीन जुमला, स्टेट, गज, अश्व, वाहन, सुवर्ण, रत्न, अधिकार, राजवैभव, राजसन्मान, वैभव, ऐश्वर्य आदि की प्राप्ति, सब प्रकार से सुख समाधान।

वृश्चिक राशि-इच्छित कार्य में यश, साहस के कार्य, भ्रमण प्रवास में यश व धन लाभ परंतु नीच लोगों की संगति व मैत्री।

धन राशि–शत्रु का पराभव, स्त्री पुत्र का सुख, अनुकूल बातें, अधिक खर्च।

मकर राशि–अधिक कष्ट व अल्प लाभ, विश्वासघात से द्रव्य

हानि, विषय सुख मे रममाण, द्रव्य की कम तरता, लोकोपवाद, आपत्ति के प्रसंग ।

कुंभ राशि—विद्या में यश, प्रापंचिक सुख, मित्रयोग, सन्मान में वृद्धि हो अधिकार प्राप्ति व ऊँचा पद ।

मीन राशि—बुद्धि के बल सब प्रकार के सुख का स्वामी, अनेक गाँव का मालक व अधिकारी ।

बुध महादशा—भाव फल

प्रथम भाव—राजा से सन्मान, ऐश्वर्य, सुख, समाधान, खेती से लाभ, द्रव्य सुख, आरोग्य प्रतिष्ठा ।

द्वितीय भाव—विद्या में यश, भाग्योदय व सन्मान, वक्तृत्व, कार्य में यश. कीर्ति, धन लाभ ।

तृतीय भाव—बंधु को यशप्रद व सुखकारक, मित्रता से लाभ, मानसिक त्रास, प्रवास आदि ।

चतुर्थ भाव—औद्योगिक संकट, स्थावर स्टेट का नाश, नौकरों से बेबनाव, अपयश ।

पंचम भाव- अस्थिर बुद्धि, पराधीनता, कार्य में अधिक कष्ट व कम लाभ, शारीरिक, मानसिक व प्रापंचिक चिंता ।

षष्ठ भाव—अशक्त प्रकृति, रोगों की वृद्धि, अपचन विकार, अशक्तता, चिड़चिड़ा स्वभाव ।

सप्तम भाव—गृह, स्त्री, पुत्र, द्रव्य लाभ व सुख, व्यापार से लाभ ।

अष्टम भाव—वातरोग, मृत्युसमपीड़ा, द्रव्यनाश, संकटकाल ।

नवम भाव—भाग्योदय, धर्म की ओर चित्त की वृत्ति, तीर्थयात्रा, साधु संत का दर्शन, दूर का प्रवास आदि ।

दशम भाव—श्रेष्ठ अधिकार प्राप्ति, राजमंत्रीपद, राजा से मान, द्रव्य लाभ आदि ।

एकादश भाव—वाहन सौख्य, धन संपन्न, सांपत्तिक ऐश्वर्य, अनेक प्रकार से द्रव्य लाभ ।

द्वादश भाव–शत्रु से त्रास, लोगों से सहायता, द्रव्य का व्यय, संकट समय परंतु आखरी में यश ।

बुध महादशा—राशि फल

मेष राशि–बुरे लोगों की संगत, पाप कृत्य, जूवा, चोरी, व्यसन में प्रवीण ।

वृषभ राशि—उद्योग हानि, द्रव्य नाश, स्त्री पुत्र व आप्तवर्ग से त्रास, दुःखमय स्थिति ।

मिथुन राशि—माता को कष्ट, विद्या में यश, प्रांपंचिक सुख, लेखन व वक्तृत्व शक्ति आदि ।

कर्क राशि—लेखनादि कला कौशल्य से धन लाभ, परदेश वास, चिंता दुःख व अनिष्ट ।

सिंह राशि—अस्वस्थ मन स्थिति, स्त्री पुत्र से कष्ट, बुद्धि भ्रष्ट, प्रसंग पर विपरीत बुद्धि पर धैर्य, वृद्धि व सुख ।

कन्या राशि—ईश्वर भक्त, विद्वान, गुणी, सदाचारी, लेखक, भाग्यवान, कार्यकर्ता, सब प्रकार के सुख ।

तुला राशि—व्यापार में द्रव्य नाश किंतु स्त्री सौख्य, कारीगरी या कला कौशल्य से प्राप्ति ।

वृश्चिक राशि—परदेश वास, स्वजनों से विरोध, शरीर कष्ट, परवशता, द्रव्य का नाश ।

धन राशि—स्वजनों से कलह, औद्योगिक अनिश्चितता, द्रव्य की कमतरता, कार्य के आरंभ में आपत्ति।

मकर राशि—असत्य भाषण, दुष्ट लोगों से मित्रता, अधिक खर्च, कार्य नाश।

कुंभ राशि—द्रव्य हानि, मित्रों से अपमान, दुःख, औद्योगिक व प्रापंचिक पराधीनता।

मीन राशि—शरीर को कष्ट, चंचलवृत्ति, कुबुद्धि, द्रव्य लाभ साधारण।

केतु महादशा-भाव व राशि फल

प्रथम स्थान—ज्वर, कालरा, अतिसार आदि की बिमारी, अशक्तता।

द्वितीय स्थान—धननाश, वाग्दोष, ऋणग्रस्त स्थिति, परवशता।

तृतीय स्थान—बंधु विरोध, स्वतंत्र वृत्ति, कलह, स्वपराक्रम से भाग्योदय व ऐश्वर्य प्राप्ति, उद्योग को अनुकूल व यश।

चतुर्थ स्थान--घर को अग्नि से भय, स्त्री पुत्रादि को कष्ट व उनका मृत्यु, दारिद्र्य, लोकोपवाद, स्थावर स्टेट का नाश, दुख-दायक प्रसंग।

पंचम स्थान—विद्या में अपयश, लोगों से विरोध, संतति नाश बुद्धि भ्रष्ट, अपमानकारक प्रसंग।

षष्ठ स्थान—शरीर सुख नाश, मातुलपक्ष सुख नाश, शत्रु का नाश, पराक्रम में यश, स्वपराक्रम से धन लाभ, अधिकारी लोगों से मित्रता।

सप्तम स्थान—स्त्री पुत्रादि का नाश, मूत्र रोग, परदेशवास।

अष्टम स्थान—क्षय, खाँसी, दमा की बिमारी से शरीर को अत्यन्त कष्ट, अपने से बड़े लोगों की मृत्यु, अपमान कारक प्रसंग, द्रव्य प्राप्ति की स्थिति असंतोषजनक।

नवम स्थान—ईश्वर भक्ति, परोपकार वृत्ति, कार्य में आपत्ति, प्रापंचिक कष्ट।

दशम स्थान—दशा के प्रथम भाग में हर प्रकार के कष्ट व प्रतिकूल परिस्थिति परन्तु अंत में अनुकूल तथापि पितृनाश, मान-हानि, साधारण द्रव्य प्राप्ति।

एकादश स्थान—विद्या में यश, अधिकारियों से मैत्री,, यश, कितीं, व्यापार में लाभ, प्रापंचिक सुख, ऐश्वर्य व वैभव, स्थावर स्टेट, वाहन प्राप्ति व सुख।

द्वादश स्थान—नेत्र पीड़ा, द्रव्यनाश, प्रवास, स्थानांतर, लोगों से मानहानि व निंदा, शारीरिक व मानसिक आपत्ति।

धन राशि केतु—कार्य में यश परंतु आरम्भ में कष्ट, परोप-कार बुद्धि, ऐश्वर्य व सुख।

मिथुन राशि केतु—इसके विपरीत फल, दुःखदायक प्रसंग,

शुक्र महादशा भावफल

लग्न में शुक्र—शरीर सुख, लोकमान्य, ऐषाराम व श्रीमान लोगों से मैत्री, राजमान्य, यशस्वी।

धन में शुक्र—स्त्री को कष्ट, धन का व्यय, दशा के अखेर-उत्कर्ष, पूर्ण द्रव्य लाभ, सन्मान, उद्योग में यश।

तृतीय में शुक्र—बंधु सुख, स्थानांतर, प्रवास, बंधु का उत्कर्ष, समाधान वृत्ति।

चतुर्थ में शुक्र—अधिकार वाहन, खेती, प्रतिष्ठा, राजा से सन्मान, कीर्तिकारक प्रसंग।

पंचम में शुक्र—दैविक अनुकूलता, विद्या में यश, व्यापार में यश, संतति सुख।

षष्ठ में शुक्र—शारीरिक रोग की वृद्धि, कार्य नाश, स्त्री-पुत्रादि को ज्वर कष्ट, अनिश्चित व चिंताजनक आर्थिक स्थिति।

सप्तम में शुक्र—स्त्री को गँडांतर, दुःखदायक प्रसंग, प्रापंचिक आपत्ति, उद्योग धंदा के लिये प्रतिकूल समय।

अष्टम भाव—शारीरिक, मानसिक, प्रापंचिक, राजकीय व औद्योगिक वगैरह बातों के लिये प्रतिकूल, द्रव्य नाश, चिंता, आपत्ति।

नवम भाव—दैव अनुकूल, भाग्योदय, सब प्रकार के सुख, विद्या, ऐश्वर्य, नौकर, वाहनादि सुख।

दशम भाव—विद्या में यश व लाभ, व्यापार से लाभ, मंत्रिमंडल या राजकीय लोगों में मान्यता, पूर्ण द्रव्य लाभ।

एकादश भाव—स्त्री सुख, राज दरबार में सन्मान, राजा से पदवी की प्राप्ति, राजसन्मान, संतति लाभ।

द्वादश भाव—मानसिक व्याधि, माता का मृत्यु या वियोग, द्रव्य नाश, सांपत्तिक व प्रापंचिक आपत्ति।

शुक्र महादशा—राशि फल

मेष राशि—स्त्री सुख, उद्योग में यश, प्रवास, अनेक प्रकार के सुख।

वृषभ राशि—घरदार, जमीन जुमला, वाहन, पशु से सुख व वृद्धि, दयालु व परोपकारी।

मिथुन राशि–ग्रंथकर्ता, उत्साही, विद्वान लोगों की मित्रता।

कर्क राशि–मन का चंचल, स्वावलंबी, उद्योगी, कार्य में कुशल, व्यवहार चातुर्य।

सिंह राशि–संतति से अल्पसुख, स्त्रियों से अल्प द्रव्य लाभ वाहन से अपघात, साहसी, कार्य में यश।

कन्या राशि–गुप्त रोग, शारीरिक क्लेश, अल्प द्रव्य लाभ, अपयश, कष्ट।

तुला राशि–खेती व व्यापार से द्रव्य लाभ, स्त्री पुत्रादि सौख्य, शत्रु नाश, नेता।

वृश्चिक राशि–बेधड़क छाती का, अविचारी, साहसी, परोपकार में निमग्न, ऋणमुक्त वादविवाद प्रिय, प्रवासी।

धन राशि–शत्रु से त्रास, भाग्यचिंता परंतु दशा के मध्य भाग में सब प्रकार के सुख।

मकर राशि–सत्ता व अधिकार, परदेश में वास, वाहन से त्रास, स्त्री को आजार, संतति की चिंता, शत्रु का पराभव।

कुंभ राशि–विद्या में यश, कला कौशल्य में प्रवीण, उद्योग व व्यवसाय से धन लाभ, संतति सुख।

मीन राशि–श्रीमान्, प्रापंचिक सुख, वाहन नौकर चाकर सुख, वैभव, मंत्रिपद प्राप्ति, राजमंडल का मुख्य प्रधान, राजसमान सुख व ऐश्वर्य।

उपर लिखे अनुसार जन्मस्थ ग्रह दशा का फल जन्मकुंडली में वे जिस राशि और भाव में स्थित हों उस राशि और भाव के फल पर अवलंबित है यह पाठकों के ध्यान में सहज आ सकता है। परंतु फलित का निष्कर्ष इन दोनों में से जो अधिक प्रबल हों

उसी पर अधिकतर निर्भर है। तथापि यह निश्चय करते समय अन्य शुभाशुभ ग्रहों की दृष्टि व युति का भी विचार करना चाहिये, जिस पर प्रत्येक ग्रहों के महादशा का शुभाशुभ फल मिलना संभव है। परंतु महादशा काल में इन ग्रहों के अंतर्गत अन्य ग्रहों के अंतर्दशा का किस तरह का फल मिलेगा यह पाठकों को मालूम हो सके, इस हेतु से महादशा के अंतर्गत अंतर्दशा का फल संक्षिप्त में नीचे लिखा है।

रवि महादशा की अंतर्दशा

प्रत्येक ग्रह के महादशा का काल इन्हीं नव ग्रहों में विभाजित है जिसे अंतर्दशा कहते हैं जैसे:—

रवि—राजमैत्री, धैर्य, ऐश्वर्य, अधिकार, मान्यता।

चंद्र—अधिकार व द्रव्य लाभ, परदेश गमन, प्रापंचिक सुख।

मंगल—शत्रुनाश, अनुकूल समय, सुवर्ण रत्न लाभ, कीर्ति की वृद्धि।

राहु—शरीर व्याधि, पराधीनता, द्रव्यनाश, प्रतिकूल कार्य।

गुरु—विद्या में सन्मान, द्रव्य लाभ, अधिकार प्राप्ति, संकट नाश।

शनि—गुप्त शत्रु, स्त्री पुत्रादि पीड़ा, विद्या में अपयश, संकट।

बुध—धन नाश, कफवात विकार, लोगों की अनुकूलता।

केतु—रोग वृद्धि, चिंताजनक स्थिति, उद्योग में अपयश, देश त्याग।

शुक्र—प्रापंचिक सुख नाश, अधिक खर्च, परदेश वास।

चंद्र महादशा की अंतर्दशा

चं०—स्त्री पुत्रादि लाभ, ऐषाराम, सांपत्तिक सुस्थिति ।

मं०—रक्तदोष, बंधु कलह, पित्त विकार, भूमि लाभ ।

रा०—धंदा व द्रव्य की हानि, दुःखदायक प्रसंग ।

गु०—शरीर सुख, द्रव्य प्राप्ति, धन संचय, स्त्री पुत्रादि सुख ।

श०—कलह, शोक, शत्रुत्व, शोक, भय, अपमान, कार्यनाश ।

बु०—विद्या, अधिकार, व्यापार, स्त्री पुत्र धन लाभ व सुख ।

के०—बंधु नाश, द्रव्य नाश, संकट, दारिद्र्य, भंग चित्त ।

शु०—स्त्री सुख, स्त्रियों की प्राप्ति, व्यभिचार, कन्या संतति योग ।

र०—द्रव्य लाभ, रिपुनाश, अधिकार प्राप्ति, अधिकारी से मैत्री ।

मंगल महादशा की अंतर्दशा

मं०—शौर्य के कार्य में यश, वेश्या अथवा पर स्त्री संग, अधिकार की प्राप्ति ।

रा०—शारीरिक कष्ट, आपत्ति, धन नाश, परदेश वास, सत्ताधारी ।

गु०—उद्योग में यश, संतति सुख, द्रव्य लाभ, तीर्थ यात्रा ।

श०—द्रव्य हानि, दुःख व त्रास, संकट, संतति पीडा ।

बु०—शत्रु से त्रास, अग्नि से स्थावरादि की हानि ।

के०—स्त्री संतति को कष्ट, गँड़ांतर, वियोग, द्रव्य की अनिश्चित स्थिति ।

शु०—स्त्री को कष्ट, नीचों की संगति, देशांतर, प्रवास ।

र०—राजदंड, राजा से वैमनस्य; द्रव्य लाभ, वाहन सुख ।

चं०—धन संचय, भाग्योदय, स्त्री सुख, पुत्र प्राप्ति, संकट नाश ।

राहु महादशा की अंतर्दशा

रा०—देशांतर में भाग्योदय, मान-सन्मान, द्रव्य का क्षय ।

गु०—अधिकारी वर्ग से मित्रता, द्रव्य लाभ, कार्य में यश, उच्च स्थिति ।

श०—राजकोप, प्राणांत कष्ट, आप्तवर्ग का नाश, प्रतिकूल समय ।

बु०—अल्प कष्ट, अधिक लाभ, बंधु को अनुकूल, तीव्र बुद्धि चिंता का नाश ।

के०—भयंकर शरीर पीड़ा, अपमृत्यु, द्रव्य नाश, नीच स्थिति ।

शु०—पर स्त्री संग, स्त्री से द्रव्य लाभ, आप्तवर्ग में विरोध ।

र०—अपमान कारक प्रसंग, प्रापंचिक दुःख, हीनावस्था, स्थावर नाश, चिन्ताजनक स्थिति ।

चं०—द्रव्य का अभाव, दुःख, चिंता, कष्ट ।

मं०—भयंकर हानि, देशांतर, लोकोपवाद, अनेक संकट, शारीरिक कष्ट, दुःख ।

गुरु महादशा की अंतर्दशा

गु०—विद्या में यश, धन, पुत्र लाभ, उत्कर्ष ऐश्वर्य व वैभव ।

श०—नीच, व्यसनी, पर स्त्री संग, द्रव्य हानि ।

बु०—दैविक चमत्कार, पुत्र लाभ, विद्वानों से बहुमान, सत्कर्म ।

के०—विरोध, मतभेद, प्रवास, चंचल वृत्ति ।

शु०—स्त्रियों के संबंध से धननाश, नुकसान, हानि, कलह ।

र०–विद्या, स्त्री पुत्र सुख व अधिकार लाभ।

चं०–अधिकारी वर्ग से मित्रता, उच्चाधिकार, वाहन व क्षेत्र लाभ।

मं०–शत्रु नाश, द्रव्य लाभ, विजय, यश, स्त्री पुत्र सुख।

रा०–मृत्यु समपीडा, स्थानांतर, श्रेष्ठ लोगों से वैर, बंधु-विरोध।

शनि महादशा की अंतर्दशा

श०–उद्योगहीन, परदेश वास, आप्तवर्ग नाश, ऋणग्रस्त, स्थिति।

बु०–द्रव्य लाभ, स्त्री पुत्रादि सुख, धंदे में लाभ, नौकरी में अधिकार लाभ।

के०–राजकीय बंधन का भय, अपघात के प्रसंग, द्रव्यनाश।

शु०–शत्रुनाश, स्वजन, मित्र, बंधु, अनुकूल, धन प्राप्ति व सर्व प्रकार के सौख्य।

र०–धन हानि, मृत्यु का भय, स्त्री पुत्र को घातक।

चं०–गुप्तरोग, स्त्री विरह, अन्य स्त्री संभव, संतति को कष्ट।

मं०–दारिद्र, दुःख, हानि, अपयश, मानहानि, परदेशवास।

रा०–बंधु द्वेष, कलह, प्रापंचिक सुख कम, संतति दुःख।

गु०–संकटों का नाश, संतति सुख, स्थावर, नौकर, द्रव्य, लाभ।

बुध महादशा की अंतर्दशा

बु०–विद्या, सुवर्ण, रत्नादि लाभ, स्त्री पुत्रादि आप्तवर्ग सुख।

के०–शरीर कष्ट, मनोभंग, विपरीत बुद्धि, द्रव्यनाश।

शु०–उच्च बुद्धि, विद्या में यश, स्त्री पुत्रादि सुख, द्रव्य लाभ।

र० वक्तृत्व में प्रशंसा, राज सभा में प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य, सर्व सुख ।

चं०–विशेष द्रव्य लाभ, धर्मकृत्य, सद्बुद्धि, स्थावर प्राप्ति ।

मं०–कर्ण रोग, शस्त्र से घात का भय, स्त्री व पुत्र को कष्ट ।

रा०–गुप्तशत्रु, धननाश, अकस्मात संकट, दुःख पीडा ।

गु०–अति कष्ट व अल्पलाभ, शत्रुभय, व्याधिग्रस्त स्थिति ।

श०–द्रव्यसुख स्त्री लंपट, कामी, गुप्तकर्म, अनेक लाभ के प्रसंग ।

केतुमहादशा की अंतर्दशा

के०–बुद्धिनाश, लोकनिंदा, संकट, प्रेमीजन का नाश ।

शु०–सांपत्तिकहानि, स्त्री रोग, पराधीनता ।

र०–परदेशवास, प्रवास में कष्ट, शारीरिक संकट ।

चं०–धनचिंता, अधिक प्रयत्न व अल्पलाभ, दुर्बुद्धि ।

मं०–धंदे में अपयश व नुकसान, दुष्टजनों की संगति ।

रा०–स्त्री को घातक, मानसिक दुःख, हीन स्थिति, देशत्याग ।

गु०–उच्चस्थिति, ईश्वर निष्ठा, स्थिरवृत्ति व सुख ।

श०–दुष्ट कल्पना, सब से विरोध, आत्मघात का प्रसंग ।

बु०–धंदे में यश, धनलाभ परंतु वृथा व्यय ।

शुक्रमहादशा की अंतर्दशा

शु०–धंदे में यश, द्रव्य लाभ व सुंदर स्त्रियों की प्राप्ति ।

र०–भाग्यवृद्धि, स्त्री को कष्ट, शरीर रोग, कारागृहवास का भय ।

चं०–स्त्री से मैत्री, स्त्री सौख्य व पर स्त्री गमन, लोक-प्रतिकूल ।

मं०—रक्त दोष, रक्त नाश, दुष्ट संगत, स्त्री को मारक, धन का व्यय।

रा०—सुखनाश, कर्ज, संकट, दारिद्र, अपमानकारक प्रसंग।

गु०—विद्या, अधिकार, द्रव्य, स्थावर स्टेट व पुत्र लाभ।

श०—वृद्ध स्त्री से संग, अपकीर्ति, द्रव्यलाभ स्त्री पुत्रादि को कष्ट।

बु०—पूर्ण धन लाभ, स्थिरबुद्धि, स्त्री सुख, ऐश्वर्य प्राप्ति।

के०—शरीर कष्ट, विपत्ति, शत्रु से संकट, अपयश, द्रव्यलाभ।

महादशा व अंतर्दशा के फल का वर्णन उपर लिखे अनुसार है। परंतु फल कब मिलेगा यह जानने के लिये इसका स्पष्टीकरण करना आवश्यक है। जैसे मानलो कि केतु महादशा में चंद्र अंतर्दशा का फल अशुभ दिया है किंतु इस फल का अनुभव चंद्र अंतर्दशा में अशुभ ग्रह की विदशा जब आयगी तभी यह फल अनुभव में आयगा। परंतु यह निश्चय करते समय यदि गोचर शुभ ग्रहों की दृष्टि महादशा, अंतर्दशा और विदशा ग्रहों पर हो तो फल की तीव्रता कम होकर कुछ अशुभ फलों का नष्ट होना भी संभव है। इसके उलट यदि अशुभ ग्रह से इन दशाओं के स्वामी युक्त व दृष्ट हों तो उपर दिये हुए फल की तीव्रता अधिक बढ़ेगी यह भी ध्यान में रखना चहिये। इस तरह किसी भी ग्रह का शुभ या अशुभ फल कुंडली के ग्रहों पर से ध्यान में आ सकता है और अनुभव से यह सिद्ध होगा इसमें संदेह नहीं। ग्रहदशा का फल निर्णय करते समय यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि ग्रहदशा और अंतर्दशा दोंनो ग्रहोंका संबंध किस तरह है अर्थात् वे परस्पर शत्रु

हैं या मित्र। और वर्त्तमान समय गोचर ग्रह गुरु, शनि, राहु, शुभ फलदायी है अथवा अशुभ फलदायी। दशा ग्रह और अंतर्दशा ग्रह दोनों परस्पर शत्रु हों तो अधिक अशुभ, मित्र हो तो शुभ, सम हो तो साधारण फल मिलना निश्चित है। उसी तरह जन्म ग्रहदशा और गोचर ग्रह दोनों अनुकूल हों तो शुभफल, प्रतिकूल हों तो अशुभफल और एक अनुकूल दूसरा प्रतिकूल हो तो मध्यम फल मिलना स्पष्ट है। इस तरह प्रत्येक विषय अर्थात् भाग्योदय काल, विद्या, उद्योग, व्यापार, नौकरी, धनलाभ—आदि का विचार करने से योग्य फल मिल सकता है।

अंतर्दशा का काल जानने की रीति

किसीग्रह के महादशा के अंतर्गत, अं।र्दशा का काल जानना हो तो दोनों ग्रहों के महादशा का काल ध्यान में रखना आवश्यक है। जैसे राहु में चंद्र की अंतर्दशा का काल क्या है यह जानने के लिये उनके महादशा से गुणा करो। राहु महादशा का काल १८ वर्ष है और चंद्र महादशा काल १० वर्ष है इसलिये १८ × १० = १८० और विंशोत्तरी महादशा का आयुष्यमान १२० वर्ष है अतः १८० को १२० से भाग दो। शेष जो बचे उसे महिने और दिनसे गुणा कर १२० से फिर भाग दो। उत्तर चंद्र अंतर्दशा जानना।

वर्ष महीना

१२०) १८० (१   १—६   उत्तर चंद्र अंतर्दशा
१२०
६० × १२
१२०) ७२० (६

इसी तरह अन्य ग्रहोंकी अंतर्दशा मालूम हो सकती है।

कुंडली निर्णय विचार

फल ज्योतिष शास्त्र या भविष्यकथन विद्या यह जन्म ग्रहों के स्थिति अनुसार मनुष्य के विकास तथा संकोच इन दो मुख्य तत्वों का दिग्दर्शन मात्र है। और शुभ ग्रह या अशुभ ग्रह इस वर्गीकरण में इन्हीं दो तत्वों का प्रतिबिंब पूर्ण रूप से दिखाई देता है। जिन भाव, राशि या ग्रहों से मनुष्य को हर्ष, आनंद, व लाभ होता है उसे विकास (उत्पत्ति) कहते हैं और जिनसे मनुष्य को हानि, दुःख, व संकट प्राप्त होता है उसे संकोच (विनाश) कहते हैं। अर्थात् विकास और संकोच या उत्पत्ति और विनाश इन दो तत्वों पर शुभ और अशुभ ग्रहों की व्याख्या अवलंबित है। और इन दो तत्वों के रूपांतर या नामांतर पर फल ज्योतिष शास्त्र का महल खड़ा है। तात्पर्य प्राचीन महर्षियों ने अपने तपस्या व आत्मबल पर इन तत्वों का सूक्ष्म विचार ग्रह, राशि, नक्षत्र योगादि द्वारा निश्चित कर उनका सूक्ष्म परिणाम फलित शास्त्र में वर्णन किया है।

कुंडली का फल, निर्णय करने के पूर्व, प्रथम यह ध्यान में रखना चाहिये कि जिस तरह कुटुंब या समाज में अधिकारारूढ़ पुरुष के मर्जीनुरूप कुटुंब या समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने व्यक्तिगत अधिकार का विचार न करते कार्य करना पड़ता है उसी तरह कुंडली में बलिष्ठ या प्रभावशाली ग्रह के प्रभावानुसार अन्य ग्रहों को अपने व्यक्तिगत अधिकार का विचार न करते शुभाशुभ फल देने का कार्य करना पड़ता है। यह एक महत्वपूर्ण सिद्धांत अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। अर्थात् जिसके कब्जे

में हरिण वही पारधी यह तत्व यहाँ भी दिखाई देता है। संभव है कि पाठकों के मन में यह शङ्का उपस्थित होती हो कि क्या एक बलवान ग्रह अन्य सब ग्रहों के शुभाशुभ फल को मिटा कर अपना शुभ या अशुभ फल देने के लिये बाध्य कर सकता है? इस पर हमारा यह उत्तर है कि व्यवहार में जिस तरह कुंटुंब अथवा शहर का एक शक्तिशाली पुरुष अपने अधिकार व कर्तृत्व शक्ति से वह कुंटुंब या शहर के अन्य व्यक्तियों को हानि या लाभ पहुँचा सकता है या अपने प्रभाव से संकट समय उनका रक्षण कर सकता है। उसी तरह ग्रह माला यह एक कुटुंब है और हर एक ग्रह उसके सदस्य हैं कुटुंब का एक भी सदस्य यदि पूर्ण शक्तिशाली हो तो वह अपने प्रभाव से संकट समय मनुष्य का रक्षण करते हुए उसे सुख के शिखर पर पहुँचा सकता है इसमें संदेह नहीं। कै० लो० बा० गं० तिलक व महात्मा गांधी इन दो पूजनीय व्यक्ति ने भारतवासियों को यह सिद्ध कर दिखाया है कि किसी भी देश के एक व्यक्ति में कितनी शक्ति है। आशा है कि उपर लिखे हुए उदाहरण से पाठकों के शंका का समाधान अवश्य होगा। जन्म कुंडली में यदि गुरु बली होकर केंद्र में हो तो वह सब दोषों का निवारण करता है। अतः कुंडली का निर्णय करते समय प्रथम आकाशस्थ ग्रहों के स्थिति का विचार कर इनमें अधिक श्रेष्ठ फलदायी ग्रह कौन है यह निश्चय करना चाहिये। इसके पश्चात् सांसारिक परिस्थिति का विचार करना उतना ही आवश्यक है। क्योंकि पृथ्वी यह स्वयं एक ग्रह है और इसके अंतर्गत देश, काल, राजा, और कुटुंब का कर्ता ये चार मुख्य उपग्रह हैं, जिस

पर प्रत्येक मनुष्य का सुख दुःख निर्भर है। इस संसार में प्रत्येक मनुष्य परिस्थिति का गुलाम है अर्थात् प्रत्येक मनुष्य की वर्तमान स्थिति और उसमें होने वाले नित्य परिवर्तन यह आकाश व पृथ्वी के ग्रहों के शुभाशुभ परिणाम के समन्वय का निष्कर्ष है। सांसारिक परिस्थिति का विचार न करते हुए यदि किसी ज्योतिषज्ञ ने किसी व्यक्ति के विषय यह फलित किया कि आप शीघ्र ही हिन्दुस्थान के अध्यक्ष होंगे और इसी तरह अमेरिका के किसी व्यक्ति के विषय यह फलित किया गया कि आप अमेरिका के सार्वभौम राजा हो जावेंगे तो उनका यह भविष्य कथन सर्वस्व झूठा ठहरेगा इसमें संदेह नहीं। राजा के सुख दुःखादि परिस्थिति का प्रभाव जिस तरह उसके प्रजा पर पड़ता है, जिसका अनुभव लोगों को आज प्रत्यक्ष मिल रहा है, उसी तरह कुटुम्ब के मुख्य कर्ता की परिस्थिति का कुटुम्बियों पर शुभाशुभ प्रभाव पड़ना निश्चित है। तात्पर्य, आकाशस्थ ग्रहों की स्थिति व पृथ्वी की परिस्थिति, इन दोनों के समन्वय पर भविष्य कथन निर्भर है।

फलित वर्तते समय मुख्यतः तीन बातों का अवश्य विचार करना चाहिये जैसे:—

(१) जन्म ग्रह स्थिति (२) जन्म ग्रह दशा (३) वर्तमान ग्रह स्थिति कुंडली का फलित निर्णय करना यह एक बड़ा विकट प्रश्न है। परंतु पाठकों को कुछ अंश से क्यों न हो इसे अवगत करने में विशेष कष्ट उठाना न पड़े इस हेतु से उदाहरणार्थ नीचे लिखे हुए कुंडली का विचार किया है।

जन्म कुंडली

रवि उदय
५–२४

रवि अस्त
६–२९
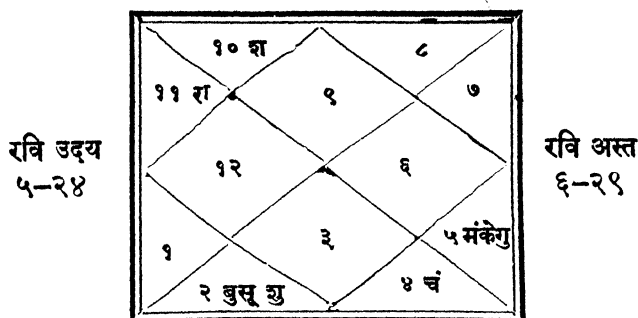
जन्म तारीख २८–५–१९३३ संवत १९९० शके १८५५ शुक्ल पक्ष, चतुर्थी, रविवार घटी ४१–९ प०, पुर्नवसू नक्षत्र घ० ४७–१३, जन्म इष्ट घटी ३४–५० पल।

प्रश्न व उत्तर

(१) प्र० कुंडली किस लग्न की है ?

उ० कुण्डली धन लग्न की है क्योंकि धन का अंक ९ कुण्डली के प्रथम स्थान या लग्न में है।

(२) प्र० कुंडली किस राशि की है !

उ० कुंडली कर्क राशि की है क्योंकि कर्क राशि के अंक में जन्म समय चन्द्र स्थित है।

(३) प्र० द्वादश भावों के स्वामी किन भावों में स्थित हैं।

उ० (i) लग्नेश व चतुर्थेश—गु० नवम भाव में या त्रिकोण में है।

(ii) धनेश व तृतीयेश—श० द्वितीय स्थान में अपने भाव में स्थिति है।

(iii) पंचमेश व द्वादशेश—मं० नवम (त्रिकोण) भाव में है।

(iv) षष्ठेश व लाभेश—शु० छठवें स्थान में है।

(v) सप्तमेश व दशमेश—बु० षष्ठ भाव में र० शु० से युक्त है।

(vi) अष्टमेश —चं० अपने भाव अष्टम में है।

(vii) नवमेश—र० षष्ठ भाव में है।

(४) प्र० केंद्र और त्रिकोण में कौन २ से ग्रह हैं ?

उ० केंद्र में कोई ग्रह नहीं है और गु० मं० के० त्रिकोण में है।

(५) प्र० ग्रहों की दृष्टि किन भावों पर है और उसका क्या फल मिलेगा।

उ० (i) शनि की अशुभ दृष्टि–तृतीय–मातृ[४] स्थान, सप्तम–दृष्टि मृत्यु स्थान और दशम दृष्टि–लाभ[११] स्थान पर पडती है जिसका फलः—४ मातृ नाश ८ स्त्री धन प्राप्ति में बाधा, ११ तुला राशि का शनि उच्च राशि का होने के कारण साधारण लाभ होगा।

(ii) मंगल की चतुर्थ दृष्टि–व्यय[१२] स्थान, सप्तम दृष्टि-पराक्रम[३] स्थान और अष्टम दृष्टि-मातृ[४] स्थान पर पड़ती है—फल ८ यह राशि मंगल की होने के कारण धन का विशेष व्यय न होगा। ३ पराक्रम में बाधा। ४ मातृ सुख का नाश।

(iii) गुरु की पंचम शुभ दृष्टि लग्न भाव पर[१], सप्तम दृष्टि पराक्रम[३] स्थान पर और नवम दृष्टि–बुद्धि व[५] विद्या स्थान पर पडती है—फल–१ शारीरिक आरोग्य ३ पराक्रम में लाभ किंतु कष्ट ५ विद्या, बुद्धि और संतान सुख पूर्ण।

(iv) सू. बु. शु. की सप्तम (पूर्ण) दृष्टि व्यय भाव पर है। सूर्य अशुभ ग्रह है अतः धन का व्यय होगा। और

बुध व शुक्र की भी पूर्ण दृष्टि इस स्थान पर है बुध वह सप्तमेष भार्या भाव का स्वामी है और शुक्र यह स्त्री ग्रह है अतः धन का व्यय स्त्री संबंधी बातों में होगा।

(६) प्र० ग्रहों की स्थिति क्या है ?

उ० श. चं. शु. स्वराशि या अपने स्वगृह में स्थित है।

(७) प्र. ग्रहों का उच्चांश व नीचांश, बल, अवस्था जानने के लिये ग्रह स्पष्ट हैं अथवा नहीं ?

उ० ग्रह स्पष्ट हैं जैसेः—

ग्रह	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.	के.
राशि	१	३	४	१	४	१	९	१०	४
अंश	१३	०	१६	१४	२३	२४	२०	१०	१०
कला	५२	४६	४	४७	५२	९	२	१२	१२
विकला	४२	३६	३२	५०	५६	५१	५१	२३	२३

(८) प्र० जन्म नक्षत्र व चरण पर से जन्म समय जन्म ग्रहदशा किस ग्रह की कितनी योग्य व मुक्त थी।

उ० पुनर्वसू नक्षत्र, चतुर्थ चरण और गुरु महादशा थी व भुक्त १२–११–१७ दिन व भोग्य ३–०–१३ दि. = १६ वर्ष।

(९) प्र० जन्म लग्न या राशि से कौन २ से ग्रह केंद्र व त्रिकोण में हैं ?

उ० लग्न से गु. मं. के. त्रिकोण में हैं, केंद्र में कोई ग्रह नहीं। और राशि से केंद्र में शनि है परंतु त्रिकोण में कोई ग्रह नहीं।

(१०) प्र० धन और सप्तम भाव के स्वामी अर्थात् (मारक भाव के स्वामी) कहाँ स्थित हैं ?

उ. धनेश शनि धन में है और सप्तमेष बुध षष्ठ स्थान में हैं।

(११) प्र. बालक का भविष्य,–विद्या, भाग्य, आयुष्य के संबंध से क्या है ?

उ. विद्या इस प्रश्न का कारक ग्रह गुरु है और उसकी पूर्ण नवम दृष्टि विद्या स्थान पर है । विद्या भाव का स्वामी मंगल है और वह गुरु ये युक्त हो त्रिकोण में स्थित है तथा अपने स्थान से नव पंचम योग करता है जो कि शुभ योग है । मंगल यह ग्रह शरीर, रोग, रक्त, शस्त्र, क्रिया, चीर-फाड़ आदि से संबंध रखता है और गुरु वेदांत, अध्यात्म विद्या का दाता है । अतः बालक को वैद्यक व डाक्टरी विद्या की अधिक रुचि और उसी प्रकार अध्यात्म विद्या की रुचि होना आवश्यक है ।

भाग्य–इस भाव का स्वामी रवि षष्ठ स्थान याने अशुभ स्थान में स्थिति हो, शुभ ग्रह से युक्त व अशुभ ग्रह से दृष्ट नहीं हैं । गु. मं. के. भाग्यभाव में है किंतु सू. बु. शु. चतुर्थ में होने के कारण केंद्र योग करते हैं । यह योग अशुभ है अतः भाग्य साधारण है ।

आयुष्य–लग्न का स्वामी गुरु है और उसकी पूर्ण दृष्टि लग्न पर है, अष्टम स्थान पर श० की दृष्टि है परंतु स्वराशि का चंद्र स्थित है अतः बालक का आयुष्य पूर्ण हैं परंतु शारीरिक पीड़ा से त्रास होगा ।

(१२) प्र० कुंडली में सर्व श्रेष्ट व अधिकारी ग्रह कौनसा है और क्या वह शुभ फल देने के लिये समर्थ है ?

उ० गु० लग्नेश व सुखेश होकर त्रिकोण में स्थित है तथा पञ्चमेश मंगल से योग करता है इसलिये पराशर के मत से यह भाग्य योग है । अतः इन्हीं दो ग्रहों पर शुभफल का मिलना निर्भर है ।

(१३) प्र० धनलग्न कुंडली में कौन से अनुकूल व प्रतिकूल

हैं और प्रतिकूल ग्रह के अशुभ परिणामों को घटाने या हटाने के लिये किन उपायों की योजना करना चाहिये ?

उ० इसलग्न के मनुष्य को शनि व बुध मारकग्रह हैं अतः इनग्रहों के महादशा और अंतर्दशा में शारीरिक पीडा आदि का होना निश्चित है। सू. गु. शुभ हैं, चं. शु. अशुभ हैं और मंगल शुभाशुभ हैं बु० और श० मारक ग्रह हैं। अतः मारक व अशुभ ग्रहों के रत्न धारण करना चाहिये और अन्य उपायों का अवलंबन करना भी आवश्यक है।

(१४) प्र० ग्रहों के अंशानुसार कौन से ग्रह बलवान और निर्बली हैं और वे अपना शुभाशुभ फल देने के लिये किस तरह समर्थ हैं ?

उ० रवि, सम राशि में १३ अंश का युवावस्था का है परन्तु वह भाग्य का स्वामी व अशुभ ग्रह होकर अशुभ स्थान में स्थित है और गुरु से दृष्ट नहीं है। इसलिये इसका अशुभ फल।

चं०, शून्य अंश का है अतः गोचर ग्रहों के शुभाशुभ फल का विचार राशि के बदले लग्न से करने से ही यथार्थ फल मिलना संभव है।

मं०, विषम राशि में १३ अंश का युवावस्था का है और वह गुरु से युक्त है अतः उसका शुभ फल मिलना संभव है।

बु०, १४ अंश का है और १५ अंश का बु० उच्च का कहलाता है अतः व उच्च है परंतु यह नपुंसक ग्रह है और रवि अशुभ ग्रह से युक्त होने के कारण अस्त हो चुका है। यह मारकेश भी है अतः इसका अनिष्ट फल मिलेगा।

गु० यह २३ अंश का विषम राशि में कुमारावस्था का ग्रह है अतः यह शुभ फलदायी है।

शु० यह सम राशि में २४ अंश का वृद्धावस्था का ग्रह है किंतु वह अपने राशि लग्न से छठवें स्थान में और राशि से ग्यारवें भाव में है अतः वह शुभ फलदायी है।

श० सम राशि का वृद्धावस्था का ग्रह है किंतु वह अपने राशि का है और २० अंश का है जो कि उसका उच्च अंश है अतः यह अशुभ ग्रह अशुभ फल देने के लिये अत्यंत बलवान है।

कुंडली के द्वादश भाव का फल

ऊपर लिखे हुए प्रश्न पाठकों के ध्यान में एकाएक आना कठिन है अतः कुंडली का फलित निर्णय करने की दूसरी रीति भी यहाँ लिख देना आवश्यक है जैसेः—

(१) कुंडली धन लग्न की है। लग्न के लक्षण पर से यह कह सकते हैं कि बालक का नाक उठा हुआ, माथा चौड़ा, शरीर मजबूत व स्थूल होना चाहिये। शरीर का रंग साधारण गोरा होना चाहिये। शरीर स्वास्थ्य उत्तम रहना चाहिये क्योंकि लग्नेश त्रिकोण में स्थित है और गु० की अपने राशि पर उसकी पूर्ण दृष्टि है।

(२) धनेश शनि धन भाव में है। शनि जिस भाव में स्थित रहता है उस भाव की रक्षा करता है और जिन २ भावों पर उसकी दृष्टि रहती है उन भावों के फलों का नाश करता है अतः इस ग्रह के महादशा या अंतर्दशा में धन का संचय होना संभव है। इस भाव में पापग्रह है अतः कुटुम्ब की मनुष्य संख्या भी थोड़ी ही होनी चाहिये। शनि की दृष्टि मातृ स्थान, मृत्यु स्थान और लाभ स्थान पर है परंतु मातृ सुख का मिलना संभव नहीं।

(३) तृतीय स्थान पराक्रम व बंधु भगिनी सुख-दुःख का स्थान है

इस स्थान पर गुरु की शुभ दृष्टि है अतः बंधु सुख व पराक्रम में यश मिलना निश्चित है परन्तु इस भाव में रा० स्थित और मं० व केतु ये दोनों पाप ग्रहों की भी दृष्टि है इसलिये इस भाव का पूर्ण रूप से फल मिलना संभव नहीं।

(४) यह मातृ भाव और हर प्रकार का सुख भाव है। इस भाव पर शनि की तृतीय पूर्ण दृष्टि और मंगल की भी अष्टम पूर्ण दृष्टि है अतः मातृ सुख तथा अन्य सुख का नाश होगा। मन को संतोष व समाधान आदि मिलना अशक्य है। शनि की महादशा या अंतर्दशा में माता का स्वर्गवास होना चाहिये। यह भाव वाहन और नौकर सुख का भी है। अतः इस भाव पर दो अशुभ ग्रहों की पूर्ण दृष्टि होने के कारण इनका साधारण सुख मिलेगा।

(५) पंचम भाव यह बुद्धि, सुत, विद्या का भाव है और इस भाव पर गुरु की दृष्टि है तथा इस भाव का स्वामी मंगल गुरु से युक्त हो त्रिकोण याने शुभ स्थान में स्थित होकर उस स्थान से नव पंचम योग करता है जो कि शुभ है। अतः इस स्थान का पूर्ण सुख याने तीव्र बुद्धि, सुविचार और पुत्रादि सुख मिलना निश्चित है।

(६) यह भाव रोग व मातुल पक्ष सुख का भाव है। इस भाव का स्वामी शुक्र यह अपने स्थान में स्थित है इस भाव में शुक्र का शत्रु रवि स्थित है इसलिये प्रकृति नाजुक रहना व निर्बल शरीर का होना संभव है। और मातृपक्ष-सुख का मिलना संभव नहीं परंतु गुरु की एक चतुर्थांश दृष्टि इस भाव पर है इसलिये कुछ काल तक मामा का सुख मिलगा।

(७) इस भाव का स्वामी बुध मारकेश होकर रोग स्थान में

स्थित है यह भाव भार्या का भाव है । बुध व्यापार द्योतक ग्रह है व भाग्येश से युक्त है अतः संसार दक्ष, व्यवहार चतुर, रूपवान गुणवान, भार्या मिलेगी । साझीदारी के धन्दे में साधारण लाभ होगा ।

(८) यह आयुष्य अंत होने का अर्थात् मृत्यु स्थान है परंतु इस भाव में निर्बली चंद्र स्थित होकर पाप ग्रह शनि की दृष्टि है अतः स्वास्थ्य का नित्य खराब होना संभव है । यह भाव स्त्री से धन प्राप्ति का भाव है किंतु पाप ग्रह के दृष्टि के कारण इस मार्ग से लाभ होने में अड़चन उत्पन्न होकर लाभ का मिलना अशक्य होगा । शनि भ्रमण करते हुए जब मिथुन राशि में प्रवेश करेगा उस समय शनि की साढ़ेसाती शुरू होगी व श. बु. दोनों मारकेश का मारक भाव में स्थित होकर लग्न पर दृष्टि करना याने आयुष्य के विषय चिंताजनक स्थिति उत्पन्न करना है । उसी तरह कर्क राशि में शनि आने पर मृत्युसम पीड़ा का होना निश्चित है ।

(९) गुरु मंगल अपने मित्र भाव में हैं। अतः भाग्योदय काल का विचार करने से यह ज्ञात होता है कि गुरु का फल विद्या १६ से २२ वर्ष तक शुभ, २२–२४ तक सूर्य अशुभ स्थान में अतः साधारण अशुभ, २४–२५ वर्ष चंद्र अशुभ अतः साधारण फल । परंतु मंगल गुरु से युक्त व त्रिकोण में होने के कारण प्रबल है इसलिये आयु के २८–३२ वर्ष में भाग्योदय होगा व हर प्रकार का सुख मिलेगा ।

(१०) इस भाव का स्वामी बुध-धन्दा, रोजगार, क्रय, विक्रय, दुकानदारी में प्रवीण ग्रह है । वह लाभेश से युक्त होकर

छठवें भाव में स्थित है इसलिये व्यापार धन्दा से उपजीविका का साधन होना चाहिये।

(११) लाभेष शुक्र षष्ठ भाव में है। इस भाव में तुलाराशि शनि की उच्च राशि है जो कि शनि से दृष्ट है इस राशि का स्वामी शुक्र, शनि का मित्र है अतः लाभ भाव का पूर्ण फल मिलना चाहिये।

(१२) यह व्यय या खर्च का भाव है। इस भाव का स्वामी मं० गुरु से युक्त होकर त्रिकोण में है अतः धन का व्यय पाप कर्म के लिये न होगा। सूर्य की दृष्टि अशुभ है परंतु अपने मित्र के राशि पर है इसलिये धन का वृथा व्यय होना संभव नहीं।

जन्मकुंडली में मं० गु० ये दो ग्रह उँचे हैं अतः इन ग्रहों के भाग्योदय कालके अनुसार बालक को फल मिलेगा अर्थात् १६–२२ तक पूर्णविद्या प्राप्ति, २२ से २४ तक साधारण काल, २४-२५ तक साधारण काल २५ से २८ तक स्त्री सुख, २८ से ३२ वर्ष तक शौर्य व पराक्रम में यश व ३२–३६ व्यापार उद्योग में लाभ जन्म राशि के द्वितीय भाव में शुभ ग्रह हैं यह एक विषेश शुभ योग है जिसका फल उँचा मिलना संभव है।

फलित वर्तने में पाठकों को सहायता मिल सके इस उद्देश से हमने कुंडली का निर्णय यथाशक्ति इस पद्धति से किया है और आशा है कि पाठकों को इससे फलित वर्तने में अवश्य सहायता मिलेगी।

मेरी कुंडली कैसी है ?

प्रत्येक मनुष्य बहुधा यही प्रश्न किया करता है कि मेरी कुंडली कैसी है और मेरी कुण्डली अच्छी होना चाहिये ऐसी

आशा प्रायः सभी करते हैं। परंतु शांत चित्त से यदि मनुष्य विचार करे तो उसे यह मालूम होगा कि जगत में जिस तरह अच्छे पुरुष, अच्छी बातें, अच्छे मकान, अच्छी चीजें आदि बहुत थोड़े प्रमाण में हैं उसी तरह अच्छी कुण्डलियाँ भी बहुत थोड़े प्रमाण में हैं। तथापि प्रत्येक सर्वसाधारण मनुष्य को अपने कुण्डली का ज्ञान सहज हो सके इस हेतु से कुण्डली के मुख्य फलों के विषय में यहाँ दो शब्द लिखना हम आवश्यक समझते हैं। जैसेः—

(१) लग्न का स्वामी और चंद्र किसी पाप ग्रह से दृष्ट व युक्त न हो तथा ये दोनों ६–८–१२ भाव में न हो तो शारीरिक व मानसिक दृष्टि से कुंडली साधारणतः अच्छी है यह समझना चाहिये अन्यथा अनिष्ट फल मिलेगा।

(२) कुंडली में र० और मं० लग्न से ३–६–१०–११ भाव में हो तो मनुष्य साहसी, पराक्रमी, महत्वाकांक्षी, स्वातंत्र प्रिय, अचाट कार्य करने वाला तथा यश मिलाने वाला होगा अन्यथा इसके विपरीत फल।

(३) अष्टम स्थान में यदि कर्क का चंद्र हो व गुरु से दृष्ट हो और पाप ग्रहों से दृष्ट न हो तो विवाह समय स्त्री से धन लाभ होगा किंतु चंद्र बलवान होना चाहिये।

(४) गु० और शु० ४–५–९ भावों में से किसी भी भाव में लग्नेश या चंद्र से युक्त हों परन्तु पाप ग्रह से दृष्ट न हों तो आर्थिक दृष्टि से कुंडली अच्छी समझना चाहिये।

(५) दशमेश यदि लग्नेश, भाग्येश या लाभेश से युक्त, केंद्र व त्रिकोण में हो और पाप ग्रह से युक्त व दृष्ट न हो तो नौकरी, व्यापार धंदा में यश, व सुख के दृष्टि से कुंडली उत्तम समझना।

(६) शुक्र का सप्तमेष से शुभ योग हो और पाप ग्रह से दृष्ट न हो तो स्त्री व प्रापंचिक सुख के दृष्टि से कुंडली उत्तम समझना।

(७) चंद्र के द्वादश और द्वितीय भाव में कोई ग्रह न हो तो साढेसाती का सामान्य फल मिलेगा किंतु इन भावों में यदि गु० शु० हो तो विशेष धन लाभ की कुंडली समझना।

(८) लग्न या राशि से ३-६-१०-११ भाव में यदि सौम्य ग्रह हों तो धन योग की दृष्टि से उत्तम फल जानना।

(९) जन्म लग्न से द्वितीय भाव में गुरु और अष्टम में चं० या शु० हो और यही योग गोचर ग्रहों का जिस दिन होता हो उस दिन सट्टा, शर्यत, लाटरी से अकस्मात धन लाभ होगा।

(१०) लग्नेश, धनेश, पंचमेश व भाग्येश या लाभेश अष्टम भाव के स्वामी से युक्त हो तो भी धन लाभ होगा किंतु पाप ग्रह से शुभ ग्रह अधिक बलिष्ट होना चाहिये।

तुम किस दिन पैदा हुये हो ?

अपने जीवन यात्रा का संक्षिप्त हाल जन्म दिवस से भी मालूम हो सकता है। जैसेः—

(१) रविवार—इस दिन पैदा होने वाला मनुष्य, प्रेमी, कामी, संसारिक विषयों में कुशल, कार्य में सफल किंतु खर्चीला होगा।

(२) सोमवार—इस दिन जन्म हुआ मनुष्य, सुखी, भाग्यशाली, खेल कूद में प्रवीण, व्यवहार में कुशल व सुशील पत्नी वाला होगा।

(३) मंगलवार—जिस व्यक्ति का इस दिन जन्म हुआ हो वह गंभीर मुद्रा, विचार शाली, सत्य भाषण प्रिय व शीघ्र विजयी होगा।

(४) बुधवार—इस दिन जन्म लेने वाला पुरुष दिर्घायुषी, धैर्यवान, साहसी, आपत्तियों का सहर्ष सामना करनेवाला होगा किंतु अंत में वह निर्बल व दुखी होगा।

(५) गुरुवार—इस दिन जन्म पाने वाला मनुष्य अस्थिर चित्त का, असंतुष्ट, व नवीन वातावरण का इच्छुक होता है।

(६) शुक्रवार—जिस पुरुष का इस दिन जन्म हुआ हो वह उदार व शुद्ध हृदय, मिलनसार स्वभाव, मित्र व स्त्री प्रिय व उत्तम काम करने की वृत्ति वाला होगा।

७ शनिवार—इस दिन जन्म लेने वाला पुरुष मेहनती, इच्छित कार्य में दत्तचित्तवाला, खर्चीला व कार्य में यश प्राप्त करने वाला होगा। उसका विवाह सुखी व समान गुण के स्त्री से होगा।

चंद्रचक्र

किसी भी कार्य के लिये प्रयाण करते समय यदि वार, तिथि नक्षत्रादि का मुहुर्त मिलना कठिन हो तो चंद्र का विचार कर प्रयाण करने से कार्य की सिद्धि होना निश्चित है। चंद्र के विषय में शास्त्रकारों ने कहा है किः—

सन्मुखे अर्थे लाभाय दक्षिणे सुख सम्पदा।
पृष्ठतः प्राण नाशाय वामे चंद्र धनक्षयः॥

अर्थात–प्रयाण करते समय सन्मुख चंद्र हो तो धन लाभ, दाहिने हो तो सुख, पीठ-पीछे हो तो प्राणि हानि या संकट और बायें हो तो धन का नाश होगा। और किस राशि का चंद्र किस दिशा में शुभ या अशुभ समझा गया है यह जानना भी आवश्यक है अतः वह नीचे लिखे अनुसार है। जैसेः—

१–५–९	मेष, सिंह, धन चंद्र हो तो	पूर्व	दिशा
२–६–१०	वृषभ, कन्या, मकर ,,	दक्षिण	,,
३–७–११	मिथुन, तुला, कुम्भ ,,	पश्चिम	,,
४–८–१२	कर्क, वृश्चिक, मीन ,,	उत्तर	,,

कार्य में यश मिलाने के हेतु से कार्य करने के पूर्व अनुकूल समय का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है और इसी हेतु से शुभ कार्य का आरंभ करते समय तथा महत्वपूर्ण कार्य के लिये प्रयाण करते समय शुभ मुहुर्त्त का विचार करना चाहिये। यह जानने के मार्ग अनेक हैं और उन सबों का यहाँ उल्लेख करना असंभव है किंतु केवल चंद्र का विचार कर कार्य आरंभ करने से भी शुभ फल मिलेगा यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

भविष्य कथन

कुण्डली देखते ही भविष्य कथन करना कठिन है परंतु अनुभव के बाद व व्यक्तिगत बुद्धि के अनुसार इसे अवगत करना अशक्य भी नहीं है। यह विद्या प्राप्त करने में पाठकों को विशेष कठिनाई न मालूम हो इसलिये यहाँ कुछ महत्वपूर्ण विषयों का भावग्रह व राशि के आधार पर अनुभव सिद्ध फलित लिखना आवश्यक है। जैसे:—

(१) शारीरिक स्थिति—लग्न का स्वामी यदि शुभ ग्रह हो, शुभ स्थान में हो, शुभ ग्रह से दृष्ट व युक्त हो तो मनुष्य को उत्तम प्रकार का स्वास्थ्य व शरीर सुख प्राप्त होगा। किंतु लग्न का स्वामी यदि पाप ग्रह हो या पाप ग्रह से युक्त व दृष्ट हो विपरीत फल जानना।

(२) वक्तृत्व शक्ति—धन भाव में यदि बुध हो तो मनुष्य भाषण में प्रवीण होगा व वादविवाद से वह लोगों को अपने वश करेगा।

धन नाश—धनेश यदि व्यय भाव में हो तो मनुष्य को धन की सदैव चिंता रहेगी।

मालगुजारी—मंगल ग्रह यदि यह धन भाव में हो तो मनुष्य पूर्वार्जित जमीन या गाँव का हिस्सा, चतुर्थ में हो तो वारस हक्क से प्राप्त हुआ स्थावर स्टेट. दशम में उच्च राशि का हो तो स्वपराक्रम से मकान गाँव आदि का मालक होगा।

(३) बंधु नाश—तृतीय भाव में मंगल हो तो लघु भ्राता का होना, उसका जीवित रहना तथा उससे सुख मिलना असंभव है।

(४) मातृ नाश—२–७–१० भाव में शनि स्थित होकर चतुर्थ स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो माँ का जीवित रहना और सुख मिलना असंभव है।

(५) संतति सुख—गुरु लग्न, नवम, एकादश भाव में हो और पाप ग्रह की पंचम भाव पर दृष्टि न हो तो पुत्रादि सुख मिलेगा।

(६) मातुल पक्ष सुख—षष्ठ स्थान में पाप राशि या पाप ग्रह हो अथवा यह भाव पाप ग्रह से दृष्ट हो तो मामा आदि का सुख मिलना कठिन जानना।

(७) द्विभार्या योग—चतुर्थ में मंगल हो तो प्रथम भार्या की मृत्यु व द्वितीय भार्या का योग जानना। उसी तरह

धनेश धन में, सप्तमेश व अष्टमेश परस्पर भाव में या सप्तम भाव में श० मं० रा० हो अथवा इनकी दृष्टि हो तो विवाहित स्त्री का सुख नाश होगा।

आज्ञाधारी पति—सप्तम भाव में उच्च राशि, स्वराशि का रा० मं० श० हो तो मनुष्य आज्ञाधारी पति होगा।

आज्ञाधारी पत्नि—सप्तम भाव पर यदि शुभ ग्रह की पूर्ण दृष्टि हो तो वह स्त्री पतिव्रता और आज्ञाधारी होगी।

(८) स्त्री धन लाभ—अष्टम भाव में वृषभ या कर्क का चंद्र हो अथवा वृषभ, तुला या मीन का शुक्र हो तो मनुष्य को विवाह के पश्चात् स्त्री से धन लाभ, स्टेट प्राप्ति या वह स्त्री स्टेट का कारभारी व अधिकारी होगा।

(९) धर्म श्रद्धा—गुरु की पूर्ण दृष्टि यदि धर्म (नवम) स्थान पर हो तो मनुष्य का धर्म पर पूर्ण विश्वास होगा परंतु गुरु यदि पाप ग्रह से युक्त हो तो वह प्रसंगावधानी होगा। इसके उलट यदि नवम भाव पर पाप ग्रह की दृष्टि हो और गुरु की दृष्टि न हो तो मनुष्य नास्तिक मत का होगा।

(१०) अधिकार योग—वृषभ का चंद्र अथवा सिंह का रवि यदि दशम स्थान में पाप ग्रह से दृष्ट व युक्त न हो तो मनुष्य को श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त होगा।

(११) धन लाभ—एकादश स्थान में मिथुन का बुध, राहु और रवि हो तो मनुष्य को सदैव धन लाभ होना निश्चित है परंतु पाप ग्रह की दृष्टि न हो तो यह फल मिलेगा।

(१२) धन नाश—द्वादश भाव में नीच राशि का श० मं०

रा० हो अथवा इनकी दृष्टि हो तो मनुष्य को राजदंड व कैद होगा व उसके धन का नाश होगा।

इस तरह किसी भी विषय का भविष्य कथन करते समय उसके भाव, भाव स्वामी, कारक ग्रह, राशि, राशि स्वामी, दृष्टि युति योग आदि का विचार करने से संतोषजनक फल मिलेगा इसमें संदेह नहीं।

ज्योतिष चमत्कार

ज्योतिष शास्त्र का सच्चा रहस्य आकाश के नानाविध चमत्कारों को जानने में और उनके क्रिया व प्रति क्रिया का निर्णय कर भविष्य कथन में है। यह विषय इतना चित्ताकर्षक और आश्चर्यजनक है कि राजा से लेकर रंक तक प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक क्षण आतुर रहता है। यथार्थ में फलित शास्त्र तथा भविष्य कथन में प्राविण्य प्राप्त करने के लिये अत्यंत बुद्धिमत्ता, परिश्रम तथा वर्षों के अनुभव की आवश्यकता है परंतु कई सज्जन स्थूल-मान से भविष्य कथन कर इस विद्या में निपुण होने का दावा करने लगते हैं और श्रद्धालु लोगों के मन में विश्वास उत्पन्न करा आर्थिक प्राप्ति की चिंता में निमग्न रहते हैं। अतः प्रत्येक समंजस मनुष्य को चाहिये कि वे इस विद्या से अवगत हों और योग्य पुरुषों को ही उत्तेजना दें। इस शास्त्र में प्रवीण न होते हुवे भी कुछ बातें इस तरह कही जा सकती हैं कि इनपर विश्वास करने के सिवाय मनुष्य को मार्ग ही नहीं। जैसे जन्मकुण्डली पर से जन्म समय, तिथि, पक्ष, मास आदि का स्थूलमान से वर्णन करना। नीचे लिखे हुवे उदाहरण से यह स्पष्ट होगा। जैसेः—

जन्म समय
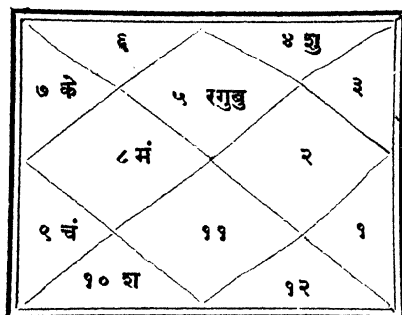
जन्म कुण्डली देखतेही स्थूलमान से यह कह सकते हैं कि इस कुण्डलीवाले का जन्म प्रातःकाल ६ से ८ बजे के अंदर हुआ। रवि लग्न से प्रत्येक भाव २ घंटे के गति से भ्रमण करते हुए द्वादश भाव से द्वितीय में अपना क्रमण पूरा करता है। जन्म समय रवि लग्न में है अतः जन्म समय ६ से ८ का होना निश्चित है इसी तरह द्वादश में रवि हो तो जन्म ८ से १० तक हुआ, एकादश में हो तो १० से १२ बजे तक हुआ व आगे इसी क्रम से जानना।

जन्म तिथि

इसी तरह जन्म तिथि भी स्थूल मान से मालूम करना सहज है। चंद्र एक महीने में बारह राशि का भ्रमण पूरा करता है अर्थात् प्रत्येक राशि २॥ दिन के गति से क्रमण करता है अमावस्या के पूर्व दिन प्रति मास चंद्र और सूर्य एक ही राशि में रहते हैं व इसके पश्चात् चंद्र अगले राशि में जाता है। अर्थात् अमावस्या के बाद चंद्र जिस राशि में हो उतनी राशि

२॥ दिन के गति से उसने क्रमण किया यह मालूम हो सकता है। जैसेः—

सूर्य सिंह राशि का लग्न में है अर्थात् चंद्र और सूर्य अमावस्या के दिन तक सिंह राशि में थे व इसके बाद चंद्र कन्या, तुला व वृश्चिक इन तीन राशियों को ७॥ दिन में क्रमण कर वह धन राशि में स्थित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि चंद्र शुक्ल पक्ष प्रतिपदा से अष्टमी तक आठ तिथियाँ क्रमण कर चुका अर्थात् जन्म तिथि अष्टमी से दशमी के अंदर होना निश्चित है।

जन्म-पक्ष

स्थूलमान से यह भी मालूम करना सहज है क्योंकि अमावस्या समाप्त होते ही शुक्ल पक्ष का प्रारम्भ होता है और यह पक्ष १५ दिन का है व इसके बाद १५ दिन कृष्ण पक्ष रहता है। एक महीने में चंद्र १२ राशि भ्रमण करता है अर्थात् एक पक्ष में ६ राशि क्रमण करता है। जन्म कुंडली में कन्या राशि से कुंभ राशि तक यदि चंद्र हो तो शुक्ल पक्ष में जन्म हुआ और मीन से सिंह राशि तक हो तो कृष्ण पक्ष में जन्म हुआ यह समझना चाहिये। कुंडली में चंद्र धन राशि में है इससे जन्म शुक्ल पक्ष में हुआ यह स्पष्ट सिद्ध होता है।

जन्म-मास

यह भी स्थूल मान से मालूम होना कठिन नहीं है। क्योकि रवि प्रति मास नीचे लिखे हुए राशियों में अमावस्या के दिन रहता है और जिस राशि में रवि जन्म समय हो वही जन्म मास जानना चाहिये। जैसेः—

रवि	मेष	चैत्र	रवि	तुला	आश्विन
,,	वृषभ	वैशाख	,,	वृश्चिक	कार्तिक
,,	मिथुन	ज्येष्ठ	,,	धन	मार्गशीर्ष
,,	कर्क	आषाढ़	,,	मकर	पौष
,,	सिंह	श्रावण	,,	कुंभ	माघ
,,	कन्या	भाद्रपद	,,	मीन	फाल्गुन

यहाँ पर जन्म मास का सूक्ष्म विचार करने के लिये यह भी ध्यान रखना चाहिये कि रवि से चंद्र किस भाव में है। कुंडली में रवि सिंह राशि में है और चंद्र धन में है। यदि चंद्र व रवि एक ही राशि में युक्त रहते तो श्रावण मास कृष्ण पक्ष अमावस्या कह सकते थे किंतु चंद्र धन राशि में है अतः जन्म भाद्रपद मास शुक्ल पक्ष में हुआ यह कहना चाहिये। ऐसी स्थिति में चंद्र यदि रवि के पिछले राशि में हो तो रवि के समक्ष दिया हुआ मास कहना चाहिये अन्यथा अगला मास समझना चाहिये।

अंग्रेजी मास

प्रायः १३-१४ जनवरी को प्रति वर्ष मकर संक्रांति होती है अर्थात सूर्य मकर राशि में इस दिन रहता है। कुण्डली में रवि सिंह राशि में है और मकर राशि से या १३ जनवरी से उसे सिंह राशि तक भ्रमण करने के लिये ७ मास का समय लगा। अतः १३ अगस्त से १३ सेप्टेंबर के अंदर जन्म होना निश्चित पाया जाता है।

जन्म-वर्ष

गुरु का राश्यांतर होना यदि ध्यान में रहे तो जन्म वर्ष जानना भी सहज है जैसेः—गुरु प्रत्येक राशि में १३ महीने रहता

है और जन्म समय वह सिंह राशि में था किन्तु आज गुरु मेष राशि में है। आज की तारीख २०-२-४२ है। गुरू को मेष राशि में प्रवेश करने के लिये उसे ८ राशियां क्रमण करनी पड़ीं अर्थात् १३ महीने के हिसाब से कुंडली वाला यदि बालक हो तो ८ या ९ वर्ष की उम्र होना चाहिये और युवा हो तो २१-२२ की उम्र होना चाहिये।

इस तरह कुण्डली देखते ही बिना गणित किये स्थूल मान से कई बातें कही जा सकती हैं और वे अनेक समय सत्य ठहरती हैं। अतः ऐसे भविष्य कथन पर श्रद्धालु लोगों का विश्वास होना स्वाभाविक है परन्तु इसी तरह महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का फलित समाधान पूर्वक वर्तना असंभव है यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

विवाह पद्धति विचार

इस विषय पर लिखने के पूर्व प्रथम यह जानना उचित होगा कि विवाह पद्धति के उत्पत्ति का कारण क्या है। विद्वज्जनों के मतानुसार सृष्टि कर्ता परमेश्वर ने सृष्टि निर्माण कर सब से प्रथम मनुष्य प्राणि की उत्पत्ति की, किंतु प्रथमतः वे अपना आयुष्य पिशाश्च वृत्ति से क्रमण किया करता थे कुछ काल के पश्चात् उन्हें स्वयं अनुभव से यह ज्ञात हुआ कि इस तरह आयुष्य क्रमण करने से न तो वे मनुष्य जाति की प्रगति कर सकते हैं या देश की उन्नति। अतः मनुष्य जाति के उन्नति के लिये किन उपायों की योजना करना चाहिये यह एक बड़ी समस्या उनके समक्ष उपस्थित हुई। इस समस्या को हल करने के हेतु अनेक दृष्टि से विचार कर यह निश्चित् किया गया कि वैवाहिक जीवन के

सिवाय मनुष्य जाति के उन्नति का अन्य मार्ग ही नही है। यह ज्ञान होने पर भी उनकी पू[°] पिशाच वृत्ति कायम ही थी अतः सब से प्रथम उन्होंने अधर्म विवाह का मार्ग अवलंबन किया। इस मार्ग का अवलंबन करने पर भी इच्छित फल का मिलना अशक्य हुआ इसलिये इस पद्धति में क्रमशः नीचे लिखे अनुसार सुधारणा होती गई। जैसेः—

(१) पिशाच विवाह—निद्राधीन स्त्री से बलात्कार कर विवाह करना।

(२) राक्षस विवाह—लड़की को जबरदस्ती से भगा ले जाकर विवाह करना।

(३) गांधर्व विवाह—तरूण स्त्री पुरुष ने परस्पर की संमति से विवाह करना।

(४) आसुर विवाह—वधू को तथा उसके पिता को धन देकर वधू के सम्मति से विवाह करना।

(५) आर्ष विवाह—वर से १–२ गाय लेकर लड़की के पिता ने कन्या दान करना।

(६) प्राजापत्य विवाह—पिता के सम्मति से लड़की का सुविद्य वर से धर्म कार्य के लिये कन्या दान पद्धति से विवाह करना।

(७) दैव विवाह—यज्ञ के प्रसंग पर पुरोहित को कन्या दान करना।

इन सात प्रकार के विवाह पद्धति से स्वधर्म, कुटुंब, समाज व देश का कोई हित साध्य न होने के कारण अंत में सर्व सम्मति से यह निश्चय किया गया कि ब्राह्मविवाह के सिवाय मनुष्यजाति

के लिये तरणोपाय नहीं। अतः इस पद्धति ने आज मनुष्य जातिपर अपना वर्चस्व प्रस्थापित किया और वह निचे लिखे अनुसार है:-

(८) ब्राह्म विवाह--कन्या के पिता ने सुविद्य तरुण वर को स्वधर्म, कुटुंब, समाज व स्वदेश के उन्नति के लिये कन्या दान करना।

इस धर्म विवाह का जन्म अनेक वर्षों के अनुभव के पश्चात् उपर लिखेहुए कारणों से हुआ और वह अनादि काल से आजतक हिंदुओं में प्रचलित है। यहांपर यह लिखना अनुचित न होगा कि देश के हित के लिये अपना सर्वस्व त्याग कर दत्तचित्त होने वाले आर्यपुत्र महात्मा गांधी को यदि अवतारी पुरुष कह सकते हैं तो अनादि काल के पूर्व मनुष्य जाति के दो भिन्न वर्गों को धर्म के बंधन से एकत्रित करने वाले, उनमें परस्पर प्रेम, धर्म, काम व अर्थ की भावना उत्पन्न करने वाले, समाज को धर्म के पथपर लानेवाले और इस पवित्र संस्था को जन्म देने वाले महान तपस्वी, त्यागी, त्रिकालज्ञ मनु व पाराशर जैसे महर्षियों को किन विशेषणों से संबोधित करना चाहिये? इसका विचार पाठकगण स्वयं कर सकते हैं। हमारे मत से जिन महर्षियों ने इस पवित्र धर्म संस्था को दृढ़ बनाकर समाज में धर्मपद्धति प्रस्थापित की उनका अनंत उपकार मनुष्य शब्दों से व्यक्त करना केवल मनुष्य के लिये अशक्य है।

यथार्थ में वे महर्षि धन्य हैं कि जिन्होंने अत्यंत विचारपूर्वक इस पवित्र विवाह पद्धति को अनेक परिस्थिति का विचार कर जन्म दिया और इसका उल्लेख उन्हों ने अपने अपने स्मृतियों में कर रक्खा जो कि आज पाश्चात्य न्यायालय

में भी सर्वमान्य व आधारभूत ग्रंथ माने जाते हैं। इस पवित्र पद्धति को सम्मति देने के पूर्व इन महर्षियों की यह सद्इच्छा होना कि विवाहित स्त्री पुरुष का सांसारिक जीवन प्रत्येक दृष्टि से सुखमय हो अत्यंत स्वाभाविक है और इसीलिये इस देश के महर्षियों ने हजारों वर्ष पूर्व हिंदू वधू वर का विवाह हिंदू धर्म शास्त्रानुसार ज्योतिष शास्त्र के आधार पर भविष्य का विचार कर जो पृथा स्थापन की वह सर्वथा स्तुत्य है। उनका मुख्य उद्देश यही था कि यदि आकाशस्थ ग्रहस्थिति का प्रभाव माता के गर्भ में आते ही प्राणिमात्र पर पड़ता है तो यह प्रभाव मनुष्य पर आजन्म पड़ना अत्यन्त स्वाभाविक है। विवाह के पश्चात् पति पत्नि के अशुभ ग्रहों का अनिष्ट परिणाम परस्पर पर पड़ कर उनका वैवाहिक जीवन दुःखमय न हो और वैवाहिक जीवन परस्पर के आयुष्य, संतत्ति, संपति के दृष्टि से अत्यन्त उत्कर्षानुकूल व सुखमय होकर कुटुम्ब व समाज में सुव्यवस्था व सदाचार की घृद्धि तथा स्वधर्म व स्वजाति की उन्नति होते हुए देश में सुपुत्र निर्माण हों। और इन सुपुत्रों के बल स्वधर्म, स्वजाति, समाज की पूर्ण रक्षा होकर देश शीघ्र ही उन्नति और संपन्नावस्था के शिखर पर पहुँचे। यही इस धर्म विवाह पद्धति का मुख्य उद्देश है।

उपर लिखे हुए इस श्रेष्ट उद्देश, तत्व व सिद्धांत के पाया पर खड़ा किया गया हुआ यह धर्म विवाह का पवित्र मंदिर इतने मजबूती से बनाया गया है कि इसे पूर्ण करने में और इसकी रक्षा करने के लिये जुल्मी राजाओं के जमाने में अनेक धर्माभिमानी लोगों ने असह्य कष्टों का सामना किया तथा धर्म

वीरों ने स्वधर्म, स्वजाति और स्वदेश की रक्षा करने के हेतु अपने प्राण अर्पण कर इस पवित्र हिंदूधर्म व प्राचीन संस्कृति को आजतक कायम रक्खा।

इस धर्म विवाह पद्धति का इतिहास इतना उज्वल होते हुए वर्तमान युग में कायदे पंडितों का इस ओर दुर्लक्ष हो रहा है यह अत्यन्त खेद से कहना पड़ता है। इतना ही नहीं किंतु पिछले १५० वर्ष के पाश्चात्य विद्या का प्रभाव उनपर इस तरह पड़ा है कि उन्होंने इस धर्म संस्था को समाधि देने के हेतु अदालती विवाह (रजिस्टर्ड मेरेज) का कानून पास कराया और नवयुवकों को इस धर्म विवाह पद्धति को तिलांजली दे अधर्म विवाह पद्धति का अनुकरण करने के लिये उत्तेजित किया है। अनादिकाल पूर्व से हिंदुओं की यह धर्म विवाहपद्धति पवित्र, पोषक व स्त्री पुरुष, कुटुम्ब व समाज को एकत्रित रखने की है किंतु यह आर्वाचीन अदालती विवाह या अधर्म विवाहपद्धति अपवित्र, नाशक तथा स्त्री पुरुष, कुटुम्ब व समाज को विभक्त करने वाली है। ऐसे हालत में इस अर्वाचीन पद्धति का अनुकरण करने से या जाति पाति का भेद भाव नष्ट कर गांधर्व विवाह का उपक्रम पुनश्च प्रचार में लाने से कुटुम्ब, समाज व देश का किसी तरह उद्धार होगा? यह एक महत्व का प्रश्न है। हमारा यह मत है, कि अर्वाचीन विवाह पद्धति के अनुसार विषयांध व प्रवाह पतित नवयुवकों का वैवाहिक जीवन सुखमय होने के अपेक्षा दिनों दिन दुःखमय हो रहा है क्योंकि वे परस्पर के बंधनों से मुक्त होने के हेतु त्याग पत्र का आश्रय ले अपने प्रेम विवाह को अदालत के पुजारियों द्वारा शीघ्र ही जल समाधि

देते हुए दिखाई देते हैं। इस से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि *वर्तमान समय सुशिक्षित* कहलाने वाले लोग अधर्म विवाह का अनुकरण कर आगे बढ़ने की अपेक्षा पीछे जा रहे हैं व उनका ऐसा करना कुटुम्ब, समाज व देश के उन्नति के लिये कितना घातक है इसका विचार वे स्वयं कर सकते हैं।

देश के पाश्चात्य संस्काराभिमानी तथा नवयुवकों की यह शोचनीय स्थिति का अवलोकन करते हुए इस विषय पर हमारा लिखने का विचार न था किंतु प्राचीन धर्माभिमानी लोगों को तथा इस धर्म विवाह पद्धति पर अविश्वास करने वाले सज्जनों को इसका रहस्य तुरन्त ध्यान में आ सके इस हेतु से यहाँ संक्षिप्त में वर्णन करना हमने आवश्यक समझा। हिंदु धर्म शास्त्रानुसार ज्योतिष शास्त्र के आधार पर विवाह निश्चित करने का कारण हम पहिले लिख चुके हैं किंतु प्रथमतः वधू और वर की कुंडली पर से परस्पर के गुणों का विचार किस तरह किया जता है यह क्रम वद्ध नीचे लिखा है जैसेः—

१ वर्ण— १
२ वश्य— २
३ ताराबल—३
४ योनि— ४
५ ग्रहमैत्री—५
६ गण— ६
७ राशिकूट-७
८ नाड़ी— ८
३६

वधू वर के कुंडली से इन गुणों का विचार कर यदि ३६ का पूर्णांक मिलता हो तो वह विवाह अत्यंत सुखावह समझा गया है किंतु इस तरह का गुण मिलन प्रत्येक प्रसंग पर होना अशक्य है इसलिये १८ गुण के आगे विवाह करना योग्य व १८ गुण के नीचे का अंक आता हो तो विवाह करना अयोग्य माना गया है।

इन गुणों में से नाड़ी को अत्यंत महत्व दिया गया है। वधू वर इन दोनों की नाड़ी यदि एक ही हो तो वह विवाह अत्यंत वर्जित समझा गया है। इसका कारण क्या है यह लिखना कठिन है तथापि शरीर की गति नाड़ी पर अवलंबित है। नाड़ी तीन प्रकार की है अर्थात वात, पित्त, कफ, या आद्य, मध्यम और अंत्य। प्रत्येक प्रकृति के मनुष्य पर ऋतु व रोग का परिणाम समसमान पड़ता है यह सभी जानते हैं और इसी हेतु से स्त्री व पुरुष यदि दोनों एक ही नाड़ी के हों तो ऐसे प्रसंग पर वे समान रोग से ग्रसित होने के कारण परस्पर को सहायक नहीं हो सकते यह स्पष्ट दीखता है। और इसी हेतु एक नाड़ी वाले स्त्री पुरुष का विवाह त्याज्य माना गया है। इसी तरह गण का विचार करने से यह ज्ञात होगा कि गण तीन प्रकार के हैं अर्थात् देव गण, मनुष्य गण, व राक्षस गण। एक गण के स्त्री पुरुष से विवाह करना निषिद्ध माना गया है क्योंकि स्त्री पुरुष दोनों का गुण एक समान होने के कारण किसी भी क्षुल्लक बातों पर यदि उनका मत भेद हुआ तो गुणधर्म स्वाभावानुसार उनका मतभेद मिटना और उन्हें परस्पर सुख मिलना अशक्य है। वैवाहिक जीवन सुखमय होवे इसी उद्देश से शास्त्रकारों ने देव व मनुष्य गण को सर्व श्रेष्ठ समझकर देव व राक्षस गुण तथा राक्षस व मनुष्य गुण को त्याज्य समझा है। स्त्री पुरुष का धर्म विवाह निश्चित करते समय वधू वर के परस्पर प्रकृति, ग्रह मैत्री व गुण आदि का सूक्ष्म विचार उनके जन्म कुंडली द्वारा ज्योतिष शास्त्र के आधार पर करने के लिये

शास्त्रकारों ने जो कहा है वह कितना उपयुक्त व लाभदायक है यह स्पष्ट सिद्ध होता है।

वैवाहिक जीवन क्रमण करने वाले स्त्री पुरुषों की आपत्तियाँ दूर करने के हेतु त्रिकालज्ञ महर्षियों ने इन बंधनों का पालन करने के लिये यदि शास्त्र में कहा हो तो वह लोगों के लिये लाभदायक है परन्तु प्राचीन विवाह पद्धति अत्यन्त क्लिष्ट है अतः वह त्याज्य है ऐसा समझकर त्याग पत्र देने वाले अधर्म विवाह पद्धति को आलिंगन देना यह समाज और देश के उन्नति के दृष्टि से कितना घातक इसका विचार वे स्वयं कर सकते हैं। वधू वर के जन्म कुंडली पर से दोनों की राशि और नक्षत्र ध्यान में लाकर पंचांग में दिये हुए गुण मेलन कोष्टक के अंकों पर से कितने गुण मिलते हैं यह सहज मालूम हो सकता है।

उपर दिये हुए प्राचीन विवाह पद्धति पर लोगों का विश्वास हो अथवा न हो किंतु वैवाहिक जीवन व्यतीत करने वाले प्रत्येक अविश्वासी स्त्री पुरुष को यह शास्त्र आह्वान करता है कि उन्हें अपना जीवन सुखमय बनाने के लिये इस शास्त्र के ज्ञातों की सहायता अवश्य लेनी पड़ेगी। अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि मनुष्य किसी भी धर्म या मत, कट्टर अविश्वासी या नास्तिक क्यों न हो किंतु उसका पुरुषार्थ निष्फल ठहरने पर तथा दुर्भाग्य के फेरों में पड़ने पर वह उससे मुक्त होने के लिये इसी शास्त्र का आश्रय ले अपने भावी जीवन की दिशा निश्चित करता है यह अनेकों के अनुभव से सिद्ध हो चुका है। मनुष्य का विश्वास ग्रहों पर हो अथवा न हो परन्तु उनके क्रिया व प्रतिक्रिया का कार्य सदैव चालू रहता है और उनके शुभ तथा अशुभ परिणाम का

प्रभाव वधू वर के स्वास्थ्य, आयुष्य, संतति, संपत्ति व सुख-दुःखादि पर पड़ता है इसमें संदेह नहीं है। उदाहरणार्थ मंगल ग्रह यदि स्त्री या पुरुष के जन्म कुंडली में लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम और द्वादश स्थान में हो तो वह वैवाहिक जीवन के दृष्टि से पति पत्नी के लिये अशुभ माना गया है। क्योंकि यह ग्रह अत्यन्त क्रूर, बलिष्ट और अशुभ है यह वियोग प्रिय ग्रह है इसीलिये इसे विवाह वर्जित ग्रह कहते हैं। नीचे लिखे हुए उदाहरण से इसके अशुभ फल का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को सहज हो सकता है। जैसेः—

लग्न कुंडली
वर
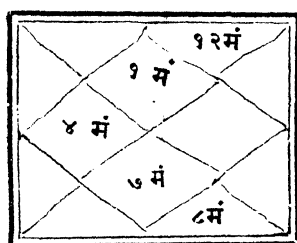
लग्नकुंडली
वधू
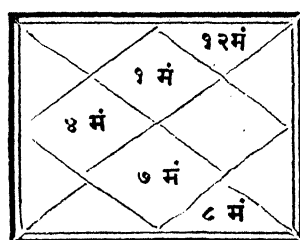
वर के कुंडली में लग्न से सप्तम स्थान यह पत्नी का और वधू के कुंडली में लग्न से सप्तम स्थान यह पति का स्थान कहलाता है। अतः इनके सुख दुःख का विचार इन दोनों स्थानों से किया जाता है। क्योंकि पत्नी के सिवाय पति को और पति के सिवाय पत्नी को सुख मिलना असंभव है। यहांपर यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि मंगल जिस स्थान में स्थित हो उस स्थान से उसकी संपूर्ण दृष्टि ४–७–८ स्थान पर पड़ती है।

वर की कुंडली में मंगल का फल

लग्न में यदि मंगल हो—तो उसकी चतुर्थ दृष्टि मातृस्थान व सुख स्थान पर पड़ती है सप्तम दृष्टि भार्या स्थान और अष्टम दृष्टि मृत्यु स्थान पर पड़ती है। वर का चतुर्थ स्थान यह वधू के स्थान से दशम अर्थात् पिता का स्थान कहलाता है और वर का अष्टम स्थान यह वधू के कुटुंब पक्ष का स्थान है अतः इस स्थान के मंगल से वरको श्वसुर तथा स्त्री पक्ष के कुटुंब का सुख मिलना असंभव है इसलिये यह अशुभ माना गया।

चतुर्थ में मंगल—इसकी चतुर्थ दृष्टि भार्या स्थान पर पडती है, सप्तम दृष्टि पितृ स्थान जो कि भार्या के भाव से मातृ स्थान अर्थात् वर के सास के भाव पर पडती है, अष्टम दृष्टि स्वतः के लाभ स्थान तथा वधू के बुद्धि, संतति स्थान पर पडती है इसलिये इस स्थान का मंगल अशुभ समझा गया।

सप्तम में मंगल—इसकी चतुर्थ दृष्टि स्वतः के पितृ स्थान व भार्या के मातृ स्थान पर पडती है, सप्तम दृष्टि स्वतः के लग्न स्थान व भार्या के पति स्थान पर पडती है और अष्टम दृष्टि स्वतः के धन स्थान व भार्या के मृत्यु स्थान पर पडती है इसलिये इस स्थान का मंगल अशुभ समझा जाता है।

अष्टम स्थान में मंगल—इसकी चतुर्थ दृष्टि स्वतः के लाभ स्थान व भार्या के बुद्धि संतति स्थान, सप्तम दृष्टि स्वतः के धन स्थान व भार्या के मृत्यु स्थान, अष्टम दृष्टि स्वतः के बंधु या पराक्रम स्थान व भार्या के भाग्य स्थान पर पडती है, अतः अशुभ है।

द्वादश भाव का मंगल—इसकी चतुर्थ दृष्टि स्वतः के बंधु व पराक्रम भाव व भार्या के भाग्य भाव, सप्तम दृष्टि स्वतः के रोग

व रिपु भाव पर अर्थात् भार्या के व्यय भावपर, अष्टम दृष्टि भार्या भाव पर पडती है इसलिये इस भाव का मंगल अशुभ माना गया।

वधू के कुंडली में मंगल का फल

लग्न में मंगल—चतुर्थ दृष्टि स्वतः के मातृ स्थान व पति के पितृस्थान पर पडती है, सप्तम दृष्टि पतिस्थान पर पडती है और अष्टम दृष्टि स्वतः के आयुमर्यादा तथा पति के पितृपक्ष स्थान पर पडती है, इसलिये यह अशुभ होता है।

चतुर्थ में मंगल—चतुर्थ दृष्टि पति स्थान पर, सप्तम दृष्टि स्वतः के पितृ भाव तथा पति के मातृभाव पर, अष्टम दृष्टि स्वतः के लाभ स्थान तथा पति के संतति व बुद्धि स्थान पर पडती है इसलिये अशुभ।

सप्तम में मंगल—चतुर्थ दृष्टि स्वतः के पितृस्थान व पति के मातृस्थान पर, सप्तम दृष्टि पति स्थान पर, अष्टम दृष्टि स्वतः के धन स्थान व पति के आयुमर्यादा स्थान पर पडती है इसलिये अशुभ।

अष्टम में मंगल—चतुर्थ दृष्टि स्वतः के लाभ स्थान पर व पति के संतति व बुद्धि स्थान पर, सप्तम दृष्टि स्वतः के धन भाव पर व पति के आयुष्य मर्यादा भावपर, अष्टम दृष्टि स्वतः के बंधु भाव तथा पति के भाग्य भाव पर पडती है अतः इस स्थान का मंगल अशुभ माना गया।

द्वादश में मंगल—चतुर्थ दृष्टि स्वतः के बंधु व पति के भाग्य भाव पर, सप्तम दृष्टि स्वतः के रोग व रिपु भाव और पति के व्यय भावपर, अष्टम दृष्टि पति भावपर पडती है इसलिये इस स्थान का मंगल अशुभ समझा जाता है।

सारांश—किसी भी दृष्टि से विचार करने से यह सिद्ध होता है कि वधु या वर के कुंडली में यदि लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम व द्वादश में मंगल हो तो वह विवाह होनेपर वर व वधू के लिये विघातक है । वैवाहिक जीवन सुख से व्यतीत करने में किसी प्रकार की बाधा न आवे इस दृष्टि से यदि शास्त्रकारों ने इन स्थानों का मंगल अशुभ व वर्जित कहा हो तो वह यथार्थ है यह स्पष्ट सिद्ध होता है ।

उपर दिये हुए केवल एक ग्रह के उदाहरण से प्रत्येक सुशिक्षित सज्जन के ध्यान में यह सहज आ सकता है कि तरुण तरुणी का वैवाहिक जीवन सुखमय बनाने के लिये तथा उन्हें भावी संकटों से बचाने के लिये उनके कुंडली के शुभाशुभ ग्रहों का विचार कर विवाह करना कितना आवश्यक है । आधुनिक लोगों का इस शास्त्र पर विश्वास हो अथवा न हो किंतु शुभाशुभ ग्रहों का परिणाम मिलना आवश्यक है । विवाह निश्चय करते समय यदि वर के कुण्डली में १–४–१२ स्थान में मंगल हो तो पत्नी के कुण्डली में इन्हीं स्थानों में मंगल का होना आवश्यक है क्योंकि मंगल के अशुभ दृष्टि का परिणाम मंगल पर नहीं पड़ सकता । परन्तु इन स्थानों में यदि मंगल न हो तो शनि का रहना अत्यंत आवश्यक है। क्यों कि शनि भी क्रूर ग्रह है और मंगल के अशुभ दृष्टि के परिणामों को नष्ट करने की शक्ति केवल शनि मे है । ऐसे स्थिति में मंगल के दोष का निवारण होता है । हमारे मत से मंगल के शुभाशुभत्व का निर्णय केवल उसके स्थान से ही नहीं किंतु राशि व अंश द्वारा उसके पूर्णबली अथवा निर्बली दृष्टि पर भी अवलंबित है इसलिये दृष्टि का विचार करने के पूर्व उसके शुभा-

शुभत्व का प्रथम विचार कर निर्णय करना उचित होगा। संभव है कि कुछ प्रसंगोपर इस पद्धति का अनुकरण किये बिना कुछ लोंगो का वैवाहिक जीवन सुखमय दिखता हो किंतु यह उनके अविश्वास पर नहीं परन्तु आकस्मिक गुण मिलने पर है। उसी तरह अनुकरण करने वाले लोगों का वैवाहिक जीवन जो दुःख-मय दिखाई देता है उसका मुख्य कारण शुद्ध जन्म कुण्डली का अभाव है चाहे वह वर की हो या वधू की अन्यथा किसी अन्य कारण का होना असंभव है।

स्त्री जातक

जातक तथा फलित शास्त्र भाग के दो विभाग हैं अर्थात् पुरुष जातक व स्त्री जातक। इन भिन्न जातकों से यह स्पष्ट होता है कि पुरुष और स्त्री जाति की कुण्डली का फलित वर्तने की रीति भिन्न है। इस संबंध से विद्वानों का यह मत है कि स्त्री के सुख दुःखादि का बिचार विवाह के पश्चात उसके पति के कुण्डली पर सर्वस्व निर्भर है। विद्वज्जनों को यह सिद्धांत बहुत सत्य है। परंतु यह निर्णय करते समय देश, काल, राजा आदि का भी विचार करना अत्यंत आवश्यक है। मान लो कि यदि स्त्रियों ने अविवाहित रहने का संकल्प किया अथवा त्याग पत्र द्वारा पति के पतित्व को नष्ट किया तो उनके कुंडली का भविष्य किस आधार पर वर्तना चाहिये यह एक समस्या है। इस दृष्टि से विचार करने का मुख्य उद्देश यह है कि देश में स्वतंत्रता प्राप्त करने का बिगुल बज चुका है। परंतु पुरुष वर्ग का अकेला बिगुल स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये असमर्थ है अतः स्त्री वर्ग ने भी अपनी बांसुरी बजाई और इस वर्ग ने अपना प्रयत्न इतने वेग से करना आरंभ

किया कि थोड़े समय के अंदर देश के अनेक राजनैतिक संस्थाओं में उन्होंने अपना स्थान प्राप्त किया । इतना ही नहीं किन्तु वे इस देश के पाश्चात्य संस्कृताभिमानी हिंदू पुजारियों के सहायता से कानूनधारा सभाओं के द्वारा, डायवोर्स बिल (हिंदू धर्म विवाह रद्द करार देने का कानून), इंटरमेरेज बिल (विजातीय विवाह को स्वजातीय विवाह करार देने का कानून), रजिस्टर्ड मेरेज बिल (अदालती विवाह को धर्म विवाह करार देने का कानून) आदि कई प्रकार के कानून पास कराने में निमग्न हैं । इन सब बिलों का मुख्य उद्देश यह दिखता है कि स्त्री जाति को धर्म विवाह तथा अधर्मविवाह के बंधनों को तोड़ने में अधिक से अधिक स्वतंत्रता शीघ्र ही प्राप्त हो सके और पुरुषों के बंधनों से मुक्त होकर वे स्त्री जाति की स्वतंत्रता सबसे प्रथम घोषित कर सकें । इस तरह स्त्री वर्ग स्वतंत्र होने पर पुरुष वर्ग स्वभावतः स्वतंत्र हो देश को स्वतंत्रता शीघ्र ही प्राप्त होगी यही उद्देश इन आंन्दोलन के पुजारियों का होना संभव है । उद्देश दिखने में तो अच्छा है कि "न रहेगा बन्धन न रहेगी परतंत्रता" । किंतु समाज सुरक्षित रखने के स्वजाति, स्वधर्म, स्वसंस्कृति, स्वधर्म विवाह पद्धति आदि सब बंधनों को नष्ट भ्रष्ट, व भस्म कर देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने में हिन्दुस्तान के हिन्दुओं का विकाश होगा या विनाश प्रगति होगी या अवनति इसका विचार सूज्ञ पाठकगण स्वयं कर सकते हैं ।

स्त्री जातक या फलित के संबंध से नारद शौनकादि महर्षियों का यह मत है कि स्त्री कुण्डली का फलित उसके लग्न, राशि, पंचम, सप्तम, अष्टम व नवम स्थान से करना चाहिये । इसके

सिवाय प्रत्येक भाव, राशि और ग्रहादि के शुभाशुभ स्थिति पर भी निर्भर है। लग्न या राशि से शरीर संम्बंधी विचार, पंचम भाव से संतति का विचार और सप्तम भाव से सौभाग्य का विचार किया जाता है यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

द्वादश लग्न का फल विचार

लग्न में द्वादश राशि में से प्रत्येक राशि का क्या फल मिलेगा इसका प्रथम विचार करें। जैसे :—

मेष लग्न—इस लग्न की स्त्री मिथ्या व निष्ठुर भाषी, घातक, कफयुक्त, क्रोधी, व बन्धु वर्ग से विरक्त होगी।

वृषभ लग्न—आज्ञाधारी, विनयशील, सत्यभाषण प्रिय, सुंदर, सर्व कला निपुण व पति को प्रिय होगी।

मिथुन लग्न—कामासक्त, कठोरभाषी, गुणहीन, बहुत खर्ची, क्रूर कर्म करने वाली कफवात युक्त होगी।

कर्क लग्न—कांतियुक्त, सुखरूप, नीतिप्रिय, साधु शील, सब सुखों से युक्त व बन्धु प्रिय होगी।

सिंह लग्न—दूषित शरीर, कलहप्रिय, कठोर स्वभाव, परोपकारी, कफयुक्त होगी।

कन्या लग्न—सौभाग्य युक्त, सुवर्ण व सुख युक्त, हितकारी, सब कला में निपुण, जितेंद्रिय व धर्म करने वाली होगी।

तुला लग्न—मंद, मतिहीन, प्रीतिहीन, गर्विष्ट, क्षमा रहित, किंतु नीतियुक्त होगी।

वृश्चिक लग्न—सुन्दर, रूपवान, गुणवान, सत्यवादिनी, पुण्यशील, पतिव्रता होगी।

धन लग्न—प्रीति से वश होनेवाली, उत्तम बुद्धि, प्रीति हीन, स्नेहहीन, कठोर कर्म करने वाली होगी।

मकर लग्न—सुदैवी, शत्रु को पराभूत करने वाली, सत्य भाषी, स्तुत्य कर्म करने वाली, गुणवती, पुत्रवती, रूपवती, समाज व लोगों में प्रख्यात होगी।

कुंभ लग्न—रक्तदोष युक्त, मद से युक्त, पुरुषासक्त, कृतज्ञता रहित, विशेष खर्चीली होगी।

मीन लग्न—पुत्रवती, पतिव्रता, देवद्विज भक्त, विनय शील, बंधु प्रिय, गुरु वचन मानने वाली होगी।

द्वादश राशि फल

स्त्री के जन्म समय जो राशि हो उसका फल नीचे लिखे अनुसार मिलेगा। जैसेः—

मेष राशि—रूपवती, श्रेष्ठ, पतिप्रिय, पुत्रवती, संसार दक्ष, गुरुजन पर प्रीति रखने वाली होगी।

वृषभ राशि—विद्या संपन्न, सुशील, विचार शील, धन युक्त, पतिप्रिय, तीर्थसेवा प्रिय, रूपवती व पुत्रवती होगी।

मिथुन राशि—अत्यंत रूप व गुणवती, धनधान्य युक्त, कुशल परोपकारी, सुंदर शरीर व नेत्रवाली होगी।

कर्क राशि—आप्तवर्ग में पूज्य, बंधुजन मान्य, शत्रु रहित, देव-द्विज भक्त, रूपवती होगी।

सिंह राशि—क्रूर कर्म प्रिय, मांसाहारी, सर्वश्रेष्ठ, वस्त्र भूषण युक्त, सौभाग्य युक्त होगी।

कन्या राशि—धन व पशु युक्त, शुद्धाचरणी, पतिप्रिय, शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाली, क्षमा शील स्त्री होगी ।

तुला राशि—व्रत वैकल्य प्रिय, पतिव्रता, पुत्रवती, दंभ व काम-वर्जित, बंधुजन प्रीति युक्त होगी ।

वृश्चिक राशि—गुप्त पाप करने वाली, निराभिमानी, अत्यंत कुशल कर्म करने वाली, धन युक्त, स्थिर स्वभाव व प्रिय होगी ।

धन राशि—गति प्रिय, विनय शील, व्रत संपन्न, नीति प्रिय, दानी, कन्या संतति व प्रीति करने वाली होगी ।

मकर राशि—विद्या संपन्न; नीति युक्त, नियमित, सत्य प्रिय, गंभीर, सुंदर, रूपवती, शत्रु का पराजय करने वाली होगी ।

कुंभ राशि—हास्यमुखी, चंद्र वदनी, सत्कर्मी, दानशील, संतति संपति युक्त किंतु अभिमानी होगी ।

मीन राशि—धर्म श्रद्धा युक्त, लज्जा युक्त, रूप व गुणवती, पुत्रवती, मानी, सर्वकला निपुण, जितेन्द्रिय होगी ।

द्वादश भावग्रह फल

रवि

तनु स्थान—इस स्थान में रवि हो तो स्त्री तीव्र स्वभाव, क्रूर, कृश, दुष्ट, रोग युक्त, परान्नप्रिय व कांतिहीन होगी ।

धन स्थान—कलह प्रिय, द्वेषी, दुष्ट, स्नेहहीन, कठोर भाषी, धन धान्य पराक्रम हीन होगी ।

सहज स्थान—हास्य मुखी, सुंदर वदनी, सुखी, अतिनम्र, विशाल स्तनी, किंतु रोग ग्रस्त होगी ।

सुहृत् स्थान–सुखहीन, रोगी, बड़े दाँत वाली, स्वजनों से तिरस्कृत, प्रभाव हीन होगी।

सुत स्थान–अल्प संतति, व्रताचरणी, प्रिय भाषी, धर्म तत्पर, मातृ प्रितृ देव द्विज भक्त व स्त्रियों में श्रेष्ठ होगी।

रिपु स्थान–शांत स्वभाव, धर्म तत्पर, स्त्रियों में दक्ष, सौभाग्य युक्त, सुस्वरूप, प्रौढ़ स्वभाव की होगी।

पति स्थान–कुरूप, पापिनी, पति से त्याज्य, सुखहीन, क्रूर कफयुक्त शरीर की होगी।

मृत्यु स्थान–अधर्माचरणी, रक्तदोष शरीर, दारिद्र युक्त, आप्त व बन्धु वर्ग से दुःख, पीड़ित, उत्साह हीन होगी।

धर्म स्थान–भाग्यहीन, ऐश्वर्य हीन, क्रोधी, शत्रुयुक्त अधर्माचरणी होगी।

कर्म स्थान–कार्य में बेफिकिर, कुकर्मी, साहसी, मेहनती, निस्तेज कांति वाली होगी।

आय स्थान–संतति, संपति, लाभ, कला, व क्षमाशील आदियुक्त होगी और बन्धु वर्ग को प्रिय होगी।

व्यय स्थान–क्रूर कर्मी, पातकी, पर पुरुष गामिनी, खर्चीली होगी।

चंद्र

लग्न में–शुक्लपक्ष का चंद्र हो तो गौरवदनी, सुस्वरूप, कृष्णपक्ष का चंद्र हो तो रोगी, कृश शरीर, विवादशील, कुवस्त्र धारिणी होगी।

धन में–धर्मानुकूल, पति कार्य में दक्ष, नम्र स्वभाव, नीतियुक्त, द्विजमान्य, धन संपन्न व श्रेष्ठ होगी।

सहज में–कृपण, दुष्ट स्वभाव, नीति रहित, कुसंगति प्रिय, कठोर वाणी व पीड़ित होगी।

सुहृत् में–देव द्विज गुरु भक्त, धर्म कर्म तत्पर, सुख व अलंकार युक्त भाग्यवान होगी।

सुत में–संतति, गुण, गौरव, रूप, नौकर युक्त होगी व पति आज्ञा में निमग्न रहने वाली होगी।

रिपु में–चंचल स्वभाव, कृश, रोगी, अल्पधन, द्वेषी विनय हीन होगी।

पति में–पति प्रिय, धर्मशील, चतुर, मधुरभाषी, विवेकयुक्त, शुद्धाचरणी, तेजस्वी, ऐश्वर्य संपन्न व सुखी होगी।

मृत्यु में–विद्रूप, घातकी, क्रोधी, कुरूप नेत्र वाली व निंदित होगी।

धर्म में–धर्म में रत, अति सुंदरी, पुत्र पौत्र, धनधान्य, बारीक कमर सुख व ऐश्वर्य भोगने वाली भाग्यवान होगी।

कर्म में–निरीच्छ, उत्तम कुल, कीर्ति बढ़ानेवाली, दानशूर, पुण्यशील, निरोगी, सत्यभाषिणी, सुवर्ण धन युक्त व दयावान होगी।

आय में–सर्व कला कुशल, लाभवती, इंद्रिय निग्रही, संतुष्ट चित्त, भव्य शरीर, नम्र स्वभाव, दान शूर, निरोगी होगी।

व्यय में–दरिद्री, अन्यायी, क्षमाहीन, बहुखर्ची, तेज स्वभाव व वात प्रकृति वाली होगी।

भौम

लग्न में–भाग्य व पराक्रमहीन, पति से तिरस्कृत, गर्विष्ट रक्तदोष युक्त, क्रूर प्रकृतिवाली होगी।

धन में–स्थूलदेही, कामातुर, परपुरुषगामिनी, रोगी, अल्पकेशाभूषी, दरिद्री, कुत्सित मर्द की पत्नी होगी ।

सहज में–पराक्रमी, साहसी, शत्रु को पराभूत करने वाली, आप्त वर्ग प्रिय, निर्मल मन, निरोगी व प्रख्यात होगी ।

सुहृत् में–क्रोधी, शरीर से ऊँची, सुखहीन, जन से तिरस्कृत व निंद्य स्वभाववाली होगी ।

सुत में–धर्मविरोधी, लज्जाहीन, पाप कर्म करने में चतुर, कुपुत्रवती, बन्धु व आप्त वर्ग सुख रहित होगी ।

रिपु में–निरोगी, धनयुक्त, शत्रुरहित, पतियुक्त, सज्जनों पर प्रेम करने वाली होगी ।

पति में–बाल विधवा, ऐश्वर्य हीन, गुण रहित, कुरूप व दुष्ट स्वभाव वाली होगी ।

मृत्यु में–विधवा, रोगी रक्त दोष युक्त, शोक व दुख युक्त, कृशांगी होगी ।

धर्म में–सुंदर मुखी, स्त्री धर्महीन, भाग्यहीन, रोगी, मांस व सुरा भक्षक, सज्जनों से त्याज्य, धन हीन होगी ।

कर्म में–कुबुद्धि, लज्जाहीन, कुकर्मी, रति प्रिय, अधर्मी, शील हीन ।

आय में–पति प्रीति में आसक्त, धर्म शील, निरीच्छ, बहु लाभवती व सौभाग्य युक्त होगी ।

व्यय में–व्यभिचारिणी, कामातुर, मद्यपान प्रिय व घातकीहोगी ।

बुध

लग्न में–सत्य भाषिणी, नीति, धर्म, धन, धान्य संपन्न पति मान्य, सबको प्रिय, शुद्धाचरणी होगी ।

धन में–रूप गुण व लक्ष्मी युक्त, देवद्विज भक्त, मधुर भाषी होगी।

सहज में–पुत्र पौत्र, कीर्ति, सुख, युक्त, धनाढ्य, समर्थ, लोकानुकूल व प्रिय होगी।

सुहृत में–धर्माचरणी, देव द्विज भक्त, बहु सुखी होगी।

सुत में–अल्प संतति, संपत्ति, दरिद्री, कलह प्रिय, कुकर्मी होगी।

रिपु में–अल्पायुषी, परोपकारी, सत्कर्मी होगी।

पति में–पुण्यकर्मी, शास्त्रीय, नम्र, चतुर, श्रेष्ठ होगी।

मृत्यु में–भय युक्त, कृतघ्न, दुखी, धर्म रहित, निरभिमानी होगी।

धर्म में–सत्य प्रिय, धर्माचरणी, धनयुक्त, विनयशील, भाग्यवती होगी।

कर्म में–पति को प्रिय, सत्कर्मी, सुस्वरूप, धन संपन्न नीति श्रेष्ठ, धर्म भक्त होगी।

आय में–पतिव्रता, शील युक्त, बहुलाभ युक्त, द्रव्य का लेन-देन करने में चतुर, संसार दक्ष होगी।

व्यय में निर्गुणी, व्याकुल, पराक्रमहीन, कलह प्रिय, कृशांगी होगी।

गुरु

लग्न में–सुंदर शरीर, सत्य प्रिय, गंभीर, अनेक उपभोगों से युक्त व स्त्रियों में श्रेष्ठ।

धन में–धन संपन्न, सौभाग्य युक्त, धर्म शील, श्रेष्ठ व निरीच्छ।

सहज में—पराक्रम हीन, बहुदोषी, कृश शरीर।

सुहृत में—विद्या, धन, धान्य, गुण, गौरव, सुख, संपन्न व प्रख्यात।

सुत में—सुपुत्रवती, सत्य व पति प्रिय, धर्म कर्म में दक्ष, समाज विभूषी।

रिपु में—शत्रुयुक्त, आपत्ति, त्रास किंतु नीति युक्त।

पति में—पति प्रिय, धर्म कर्म शील; किर्ती संपन्न, शास्त्र निपुण।

मृत्यु में—व्यसनाधीन, कामातुर, पति से त्याज्य, रोगी विशाल देही।

धर्म में—श्रीमान्, भाग्यवान, सुंदर शरीर, देव व सत्य प्रिय।

कर्म में—सत्कर्म शील, पुण्य कर्म वाली, गुणी, नम्र, प्रौढ़ विचार।

आय में—जितेंद्रिय, सत्यभाषी, कीर्तियुक्त।

व्यय में—अधर्माचरणी, लाभ हीन, पापकर्मों में धन का व्यय, कुल धर्म का त्याग करने वाली।

शुक्र

लग्न में—सुंदर वदन, रूपवान, सुशील, कुशल, निरोगी, शत्रु रहित, श्रीमती, सौभाग्यवती।

धन में—भाग्यवती, धर्मवती, मृदुभाषी, सघन, कुशल।

सहज में—दरिद्री, बंधुवर्ग से त्याज्य, पति से त्यक्त, शोकयुक्त।

सुहृत में—धर्मप्रिय, धनाढ्य, सुखयुक्त, वंश भूषण।

सुत में—धन संपन्न, कन्या संततिवाली, कुल की नेता, उत्तम कर्म करने वाली।

रिपु में—द्वेषी, क्रोधी, तीव्र स्वभाव पति पुत्र से त्याज्य।

पति में—शास्त्ररत, सर्वजन मान्य, द्रव्य युक्त, पति प्रिय, प्रौढ़ स्वभाव।

मृत्यु में—निष्ठुर, दरिद्री, अधर्मी, उत्श्रृंखल।

धर्म में—धन धान्य वस्त्रयुक्त, संतुष्ट चित्त, धर्मरत।

आय में—आश्रयदायी, प्रभावशालिनी, लाभवती व निर्दोषी।

व्यय में—निर्बुद्धि, दुःखी, रोगी, कपटी।

शनि

लग्न में—नेत्र में दोष, विरूपदेही, कीर्ति रहित।

धन में—दरिद्री, घातकी, अपयशी, कष्टिक, तिरस्कृत, मातृ सुखहीन।

सहज में—संतति युक्त, दक्ष, श्रेष्ठ, धनधान्य संग्रही।

सुहृत् में—चंचल स्वभाव, नीच संग, मतिहीन, कृतघ्न, दरिद्री।

सुत में—पुत्र रहित, निर्दयी, साधु विरोधी, वेश्यासम व्यवहार।

रिपु में—मंद स्वभाव, संतानयुक्त, पुत्र प्रिय, श्रेष्ठ।

पति में—विधवा, पति से त्याज्य, मद्यपान प्रिय, रोगी, कपटी।

मृत्यु में—दुष्ट स्वभाव, धर्मरहित, पापिनी।

धर्म में—ज्ञानहीन, कुकर्मी, खर्चीली, नीच मित्र युक्त।

कर्म में—दुष्ट, दरिद्री, व्यसनी, कुकर्मी।

आय में—धन संपन्न, सुंदर तन, निर्भय, सुपुत्रवती।

व्यय में—कुटिल, व्यसनी, अविचारी, वातकफ दोषयुक्त।

फलित का निर्णय करते समय ग्रहों के शुभाशुभ दृष्टि, युति व योग का विचार अवश्य करना चाहिये अन्यथा उपर लिखे हुए

ग्रहों के फल में अंतर पड़ना स्वाभाविक है। किंतु शुभाशुभ ग्रहों के स्थिति अनुसार लिखे हुए फल में फेर बदल होना भी संभव है।

लग्न भाव फल

जन्म लग्न या चंद्र यदि समराशि हो तो स्त्री स्थिरचित्त, शांत प्रकृति की होगी और लग्न या चंद्र पर शुभग्रह की दृष्टि हो या युक्त हो तो वह रूप, गुण, अलंकार युक्त व पति प्रिय होगी।

(२) जन्म लग्न या चंद्र विषम राशि का हो वह चंचल-चित्त व अस्थिर प्रकृति की होगी। और यदि अशुभ ग्रह से चंद्र व लग्न युक्त व दृष्ट हो तो वह रूपहीन, गुणहीन, रोगी व पति सुख रहित होगी।

(३) जन्म लग्न में शुक्र हो तो वह रूपवती, मंगल हो तो अहंकार युक्त, बुध हो तो कुटिल, गुरु हो तो धर्माचरणी, चंद्र हो तो रूपवती, शनि हो तो दरिद्री व दैवहीन होगी।

(४) जिसके लग्न में शुक्र व चंद्र हो तो वह अनेक सुख से युक्त व बुध व चंद्र हो तो कला निपुण होगी।

(५) लग्न में मिथुन व कन्या राशि का चंद्र व बुध हो तो सुखी किंतु पति व पिता के द्वेष को पात्र होगी।

सप्तम भाव फल

(१) जिस स्त्री के सप्तम भाव में एक शुभ ग्रह हो या उसकी दृष्टि हो तो वह पति प्रिय, दो की दृष्टि व युति हो तो श्रेष्ठ योग और तीन ग्रह युक्त व दृष्ट हो तो श्रेष्ठ भूपति की भार्या होगी।

(२) सप्तम भाव में वृषभ का चंद्र हो तो उत्तम वस्त्र व अलं-कार भूषण युक्त होगी।

(३) सप्तम भाव में उच्च का, बुध, गुरु, शुक्र में से एक भी ग्रह हो तो वह स्त्री धर्मवान्, श्रीमान और सुवर्ण रत्न से युक्त आनंदी वृत्ति वाली होगी।

(४) सप्तम भाव में मीन का शुक्र हो तो वह गायन-वादन में निपुण, उत्तम वस्त्र व अलंकार धारण करनेवाली, चंचल नेत्र, तीक्ष्ण बुद्धि, सुंदर शरीर वाली होगी और पति कुशल, धनुर्धारी, शूर, सुंदर, काम शास्त्र में निपुण, इंद्रिय दमनशील होगी।

(५) सप्तम भाव में एक पापग्रह हो या उसकी दृष्टि हो तो चंचल नयनी, दो पापग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो नीचवृत्ति, तीन से हो पर पुरुष गामिनी और जाति भ्रष्ट होगी।

(६) सप्तम भाव में रवि होकर शनि से दृष्ट हो तो पतिका त्याग करेगी, मंगल होकर शनि से दृष्ट हो तो वैधव्य प्राप्त होगा, शनि होकर मंगल से दृष्ट हो तो व्यभिचारिणी होगी।

(७) उच्चका शनि हो तो उसका पति श्रीमान व प्रसिद्ध होगा।

(८) उच्च राहु हो तो पति सुख युक्त किंतु नीच का होकर पापग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो कुलको कलंकित करेगी।

(९) सप्तम भाव में चर राशि का बुध व शनि हो तो पति निरंतर प्रवासी होगा।

अष्टम भावफल

(१) जिसके अष्टम भाव में गुरु या शुक्र हो तो गर्भनाश, मंगल हो तो व्यभिचारिणी, चंद्र हो तो पति सुखहीन, शनि हो तो रोगी, रवि हो तो शोक व क्रोधयुक्त, राहु हो तो पर पुरुष से रत करेगी।

नवम भावफल

जिसके नवम भाव में शुभ ग्रह हो या शुभ ग्रह से दृष्ट हो वह संतति युक्त तथा अष्टम भाव में पाप ग्रह होते हुए भी नवम भाव में शुभ ग्रह हो तो वह पतिपुत्र सुख से युक्त होगी।

उपर दिये हुए स्थानों के अतिरिक्त यदि ग्रह अन्य भावों में स्थित होकर वे उसस्थान से परस्पर शुभ और अशुभ योग करते हों तो उसका फल निचे लिखे अनुसार मिलेगा। जैसेः—

शुभ योग

(१) जिस स्त्री के लग्न में कर्क का चंद्र हो या सप्तम भाव मे गु. बु. शु. हो तो वह अत्यंत गुणवान, रूपवान व धनवान होगी।

(२) जिसके लग्न में मकर का मंगल, चतुर्थ मे मेष का सूर्य, सप्तम में कर्क का गुरु दशम में तुला का शुक्र, नवम में कन्या का बुध हो तो वह सुवर्ण, मोती रत्न के माला से सुशोभित व धन धान्य युक्त होगी।

(३) जिसके केन्द्र या त्रिकोण में स्वगृह या मूलत्रिकोण का गुरु बुध शुक्र हो वह स्त्री रूपवान, पुत्रवान, धनवान होकर दोनों कुलों के नाम की वृद्धि करेगी।

(४) सम राशि सप्तम भाव शुभ ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो वह पुण्यवान व राज्य पूज्य होगी।

राज योग

(१) जिसके लग्न में कर्क का गुरु या चंद्र, वृषभ का शुक्र या चंद्र, मीन का गुरु या चंद्र, कन्या का बुध या चंद्र हो और अशुभ ग्रह से दृष्ट न हो तो वह राज पत्नी होगी।

अशुभ योग

(१) जिसके लग्न या चंद्र के द्वितीय व द्वादश भाव में पाप ग्रह हों अथवा पाप ग्रह से दृष्ट हों तो वह दोनों कुल को कलंकित करेगी।

(२) जिसके लग्न में कर्क का मंगल होकर वह शुक्र से युक्त हो वह स्वेच्छाचारी हो जारकर्म करेगी।

(३) जिसके लग्न में चं. या शु. १–८–१०–११ राशि में होकर वे पापग्रह से युक्त या दृष्ट हों तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होगी।

(४) जिसके केंद्र में बलिष्ठ पापग्रह हों और लग्न या राशि चरराशि का होकर उसपर स्त्री ग्रह की दृष्टि हो तो वह एक से अधिक पति करेगी।

वंध्या योग

(१) जिसके लग्न में १–८-१०–११ राशि हो और उसपर पापग्रह की दृष्टि हो तो वह वंध्या होगी।

(२) जिसके सप्तम और पंचम भाव में पाप ग्रह राशि होकर वह शत्रु पाप ग्रह से युक्त वह दृष्ट हो तो वह वंध्या होगी!

सुवासिनी मरण योग

(१) जिसके लग्न में शुभ या पाप ग्रह हो और द्वितीय द्वादश में शुभ ग्रह हों वह पति रहते मरेगी।

संतति योग

(१) पंचम भाव में बलिष्ट गुरु हो या गुरु की दृष्टि हो तो पाँच पुत्र, शुक्र या चंद्र हो अथवा उनकी दृष्टि हो तो कन्या संतति

और शुक्र या चन्द्र गुरु से पूर्ण दृष्ट हों तो पुत्र व कन्या दोनों संतति का सुख मिलेगा।

(२) पंचमेश केन्द्र व त्रिकोण में हो अथवा पंचम भाव में रवि होकर वह गुरु से दृष्ट हो तो एक पुत्र होवे और वह प्रतापी व राजयोगी होगा। मंगल हो तो तीन और गुरु हो तो पाँच पुत्र होंगे।

(३) पंचम भाव में चंद्र हो तो दो कन्या, बुध हो तो चार, शुक्र हो तो सात कन्या होगी। नवम भाव में शुक्र हो तो भी कन्या होगी।

(४) सप्तम भाव में रवि होकर शनि राहु से दृष्ट हो तो मृत-संतान होगी।

वैधव्य योग

(१) लग्न या चन्द्र से सप्तम या अष्टम स्थान में मं० श० रा० र० के० हो।

(२) अष्टम या द्वादश भाव में मेष या वृश्चिक राशि का पाप ग्रह युक्त राहु हो।

(३) लग्न चतुर्थ, सप्तम, अष्टम व द्वादश भाव में मंगल हो।

(४) लग्न में र० मं० रा० हो।

(५) सप्तमेश अष्टम भाव में और अष्टमेश सप्तम भाव में होकर पाप ग्रह से दृष्ट हो।

(६) लग्न या सप्तम में अथवा षष्ठ या अष्टम में चंद्र हो तो ८ वर्ष के बाद वैधव्य योग।

वधू के कुण्डली में यदि ऐसा योग हो तो वैधव्य परिहारक सावित्री तथा पीपलव्रत करने के बाद विवाह करने से यह योग

भङ्ग होता है। अथवा विवाह मुहुर्त पर प्रथम, पीपल, विष्णु मूर्ति तथा कुम्भ से गुप्त विवाह करने के पश्चात् दीर्घायु वर से विवाह करना उचित होगा।

विष कन्या योग

(१) शनिवार, द्वितीया, आश्लेषा नक्षत्र तथा मंगलवार, सप्तमी शततारका नक्षत्र इन योगों पर जिसका जन्म हो वह विष कन्या होगी।

(२) मुहुर्त मार्तण्ड ग्रंथ के अनुसार रविवार, मंगलवार व शनिवार द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी, कृत्तिका, आश्लेषा, शततारका इस वार तिथि व नक्षत्र में कन्या का जन्म हो तो वह विष कन्या होगी।

(३) जन्म कुंडली में लग्न में शनि, नवम में मंगल, व पंचम में सूर्य, हो तो वह विष कन्या होगी।

(१) राज योग

(२) राज योग
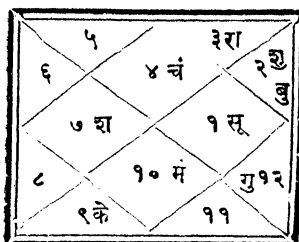
(३) धन योग
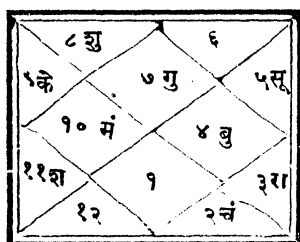
(४) धन योग
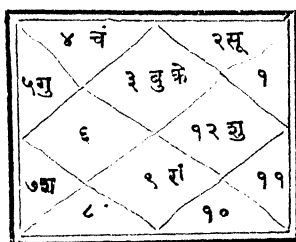
(५) भाग्यवान योग
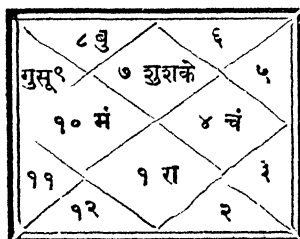
(६) भाग्यवान योग
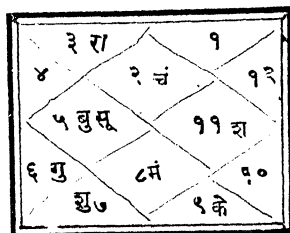
(७) धनहीन योग
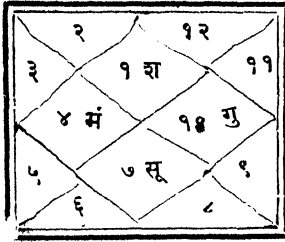
(८) मातृ सुख योग
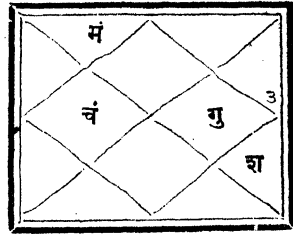
(९) मातृसुखनाशयोग

(१०) पितृसुखयोग
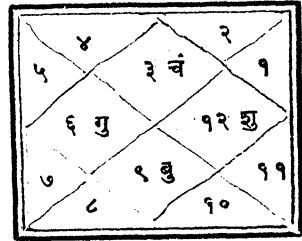
(११) पितृसुखनाशयोग

(१२) भ्रातृसुखनाशयोग
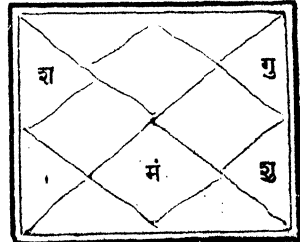
(१३) भ्रातृसुखनाश योग
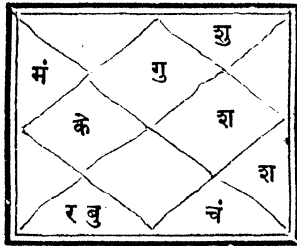
(१४) स्त्रीलाभयोग
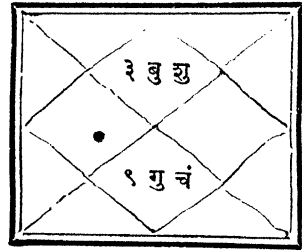
(१५) स्त्रीहीनयोग
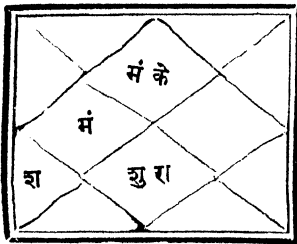
(१६) द्विभार्यायोग
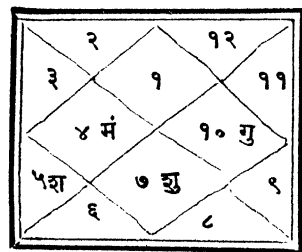
(१७) बहुभार्यायोग
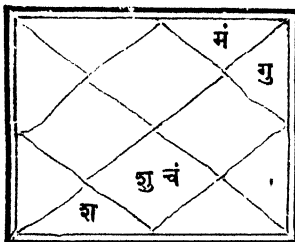
(१८) परस्त्रीरतयोग
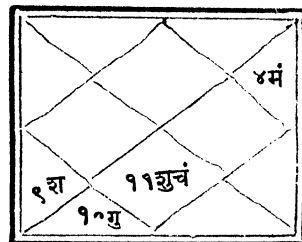
(१९) अचानक द्रव्य लाभ योग

(२०) लक्षाधीश योग
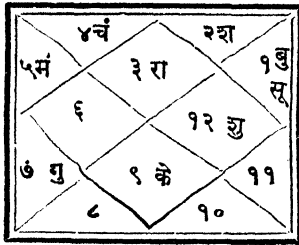
(२१) शेअर्स शर्यतधन लाभ

(२२) सट्टा रेसेस लाटरी लाभ
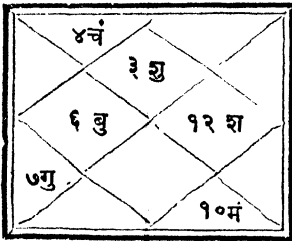
(२३) अंध योग

(२४) नेत्रदोषयोग
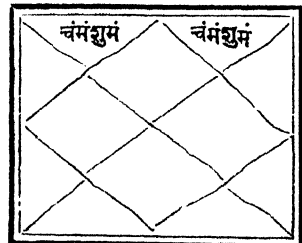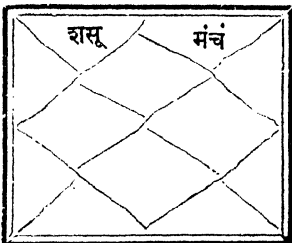
विद्वज्जनों का अभिप्राय

महामहोपाध्याय–राय बहादुर, जगन्नाथ प्रसाद–भानु, साहित्य वाचस्पति–साहित्याचार्य–रिटायर्ड एक्स्ट्रा असिस्टंट कमिश्नर, बिलासपुर। सी. पी.:—

मुझे लिखने में परम हर्ष होता है कि प्रस्तुत ग्रंथकर्ता पं० वासुदेव सदाशिव खानखोजे ने ज्योतिष विद्या के सब अंगो पर विस्तीर्ण और गहन शोध का सुंदर परिचय देते हुए विषय का प्रतिपादन विद्वत्तापूर्वक किया है। आकाशस्थ ग्रह नक्षत्रादि का पृथ्वी पर रहने वाले प्राणिमात्र से क्या संबंध है और मानवी जीवन यात्रा को सुखमय बनाने के लिए अशुभ ग्रहों के सम्यक् परिहार करने के शास्त्रीय निर्धारित विधान कौन-कौन से हैं इन सबका विशद विवेचन इस अनुपम ग्रन्थ में ग्रन्थकर्ता ने प्रगाढ़ पाण्डित्य से किया है।

इस शास्त्र पर यद्यपि भारत के अनेक विद्वानों ने अनेक विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ लिखे हैं तथापि संस्कृत भाषा की अज्ञानता और विषय के विवेचन की क्लिष्टता के कारण अधिकांश अशिक्षित और सुशिक्षित समाज में इस विद्या के संबंध से अश्रद्धा, कुतर्क तथा उसकी उपयोगिता पर निर्मूल भ्रम उत्पन्न हो चुके हैं। उपर्युक्त अभाव तथा उनके परिणामों को दूर करने के हेतु लेखक ने इस ग्रन्थ को सर्वोपयोगी बनाने में जो परिश्रम किया है वह सर्वथा स्तुत्य और प्रशंसनीय है।

हिन्दी भाषा में सर्व साधारण के लिये ऐसा कोई ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हुआ है जिसमें इन सब ग्रन्थों में वर्णित विषयों का समावेश हो और सरल हिन्दी भाषा में उन पर विवेचन किया गया:हो। किंतु लेखक महोदय ने इस ग्रन्थ द्वारा इस अभाव को दूर कर दिया है। मुझे आशा है कि सर्व साधारण सुशिक्षित सज्जन इस अप्रतीम ग्रन्थ से लाभ उठाकर लेखक महोदय के परिश्रम को सार्थक करेंगे।

डाक्टर बल्देव प्रसाद मिश्र एम. ए. एल. एल. बी. (डी, लिट.) हिन्दी भाषा परीक्षक नागपुर, कलकत्ता, पटना, और पंजाब युनिवर्सिटीज, नागपुर युनिवर्सिटी हिंदी विभाग के सर्व श्रेष्ठ अधिकारी, व अन्य कई साहित्य व सामाजिक संस्थाओं के अध्यक्ष, रिटायर्ड दीवान, रायगढ़ स्टेट, जिला विलासपुर, राय-पुर सी. पीः—

श्री वासुदेव सदाशिव खानखोजे महोदय के स्वरचित 'सुलभ ज्योतिषज्ञान' नामक पुस्तक का यत्र तत्र अवलोकन किया। ज्योतिष विषय पर इस प्रकार की पुस्तकें हिन्दी में नहीं के बराबर हैं। अतएव उनका यह प्रयत्न सर्वथा स्तुत्य है। इसे पढ़कर केवल हिन्दी जानने वाले सज्जन भी फलित ज्योतिष की अनेक ज्ञातव्य बातें सरलता पूर्वक जान सकते हैं। मुझे आशा है कि ज्योतिष प्रेमी तथा हिन्दी प्रेमी सज्जन इस उपयोगी पुस्तक को हर तरह अपनावेंगे।

पुरुषोत्तम बालकृष्ण साठे, मीमांसा भूषण, बी. ए. एल. एल. एम. (बंबई), एम, आर. ए. एस, (लंडन), डायरेक्टर एल. एल. एम. स्टडीज (नागपुर युनि.) लेक्चरर कास्टिट्यूशनल

ला (नागपुर युनि.) सुलभ अर्थ शास्त्र-पूर्व मीमांसा आदि अनेक मराठी ग्रंथ के लेखक, सब जज्ज, द्रुग. सी. पीः—

पं. वासुदेव सदाशिव खानखोजे जी ने मुझे अपने हस्त लिखित "सुलभ ज्योतिषज्ञान" नाम का ग्रन्थ देखने का अवसर दिया। ग्रन्थ को इतस्ततः थोड़ा सा पढ़ने के पश्चात मुझे अत्यंत समाधान हुआ और मैं यह कह सकता हूँ कि सन्मान्य लेखक ने इस शास्त्र का विचार ठीक रीति से सहृदयता पूर्वक किया है। यथार्थ में मनुष्य कार्य करने के लिये स्वतंत्र है किंतु इस दुनियाँ में देखा जाता है कि मनुष्य के कार्य शक्ति पर सामाजिक और राजनैतिक परिस्थिति आदि का बहुत प्रभाव पड़ता है। दुनियाँ की परिस्थिति जिस तरह मनुष्य के कार्य शक्ति पर अपना असर दिखा सकती है उसी तरह विश्व की परिस्थिति (जिस विश्व में अपनी दुनियाँ एक भाग है) मनुष्यों के कार्यों पर अपना असर दिखा सकती है। मैं समझता हूँ कि इस शास्त्र का निदान अखिल विश्व की परिस्थिति और मनुष्य की कर्तृत्व शक्ति इन दोनो के समन्वय में है।

मैं आशा करता हूँ कि साधारण पाठक भी इस पुस्तक से ज्योतिष शास्त्र का साधारण ज्ञान सुलभ रीति से प्राप्त कर सकता है। मैं पं० खानखोजे जी को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने ऐसी सुलभ और उपयुक्त पुस्तक लिखी है। और आशा करता हूं कि ईश्वर उनके अंगिकृत कार्य में उन्हें यश दे।

श्रीयुत ठाकुर छेदीलाल एम ए. (आक्सफोर्ड) बारिस्टर एट. ला, अध्यक्ष महाकोशल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी तथा मेंबर लेजिस्लेटिव असेम्बली नागपुर, बिलासपुर सी. पी.:—

श्रीमान खानखोजे द्वारा लिखित ज्योतिष शास्त्र के हस्तलिपि देखने का मुझे सुअवसर मिला। एक महाराष्ट्रीय सज्जन द्वारा राष्ट्र भाषा में ऐसे गूढ़ विषय पर लिखने का प्रयत्न सर्वथा स्तुत्य है। मैं कह सकता हूँ कि लेखक महोदय ने एक कठिन विषय को सरलता से लिखने में सफलता प्राप्त की है। एक साधारण व्यक्ति भी इसे पढ़कर इस गहन विषय में अच्छा प्रवेश पा सकता है और राष्ट्र भाषा में उनका यह प्रयत्न स्थायी स्थान रखेगा ऐसा मेरा मत है। मुझे विश्वास है कि राष्ट्र भाषा का प्रत्येक प्रेमी ग्रन्थ कर्ता महोदय को हर प्रकार से उत्साहित करेगा।

Rao Bahadur, G. R. Goverdhan, L. M. & S. Retd. Civil Surgeon, Bilaspur C. P. write:—
I am glad to write that I have carefully gone through the Book-Astrological knowledge made Easy (सुलभ-ज्योतिषज्ञान) written by Mr. W. S. Khankhoje. The difficult Subject of Astrology has been treated in the book in such a simple and lucid style that an amcteur desiring to learn the science can follow it very easily.

The Author in his comprehensive introduction has traced the history of Astrology in different countries with great thoroughness and has taken great pain to prove its utility in every day life removing at the same time the disbelief and misconception of the present day

educated class of people. A good deal of space has been alloted to explain the reading of Indian almanec so that a beginner can follow the movements of different planets thro: various Zodiacs and constellations without any difficulty. The influence of planets on human life with their importance on occupaying particulars houses of the birth-map and the Astrological ways to mitigate their evil influences are thoroughly explained for the benifit of readers which, in my opinion, enhances the value of this book to a great extent.

I am very much thankful to Mr. Khankhoje for having extended to me the courtsey of reading the book in its munscript form and I sincerely believe that the general public will profit by his hard labour.

श्रीमान् दीवान रुद्र सरन प्रताप सिंह जमीनदार उपरोरा स्टेट व सरबराकार कोरबा स्टेट विलासपुर सी. पी.:—

मुझे लिखने में परम हर्ष होता है कि सुलभ ज्योतिषज्ञान नामक ग्रन्थ के निर्माता पं० वासुदेव सदाशिव खानखोजे, महोदय ने ज्योतिष शास्त्र जैसे महान क्लिष्ट तथा गहन विषय का विवेचन इस ग्रन्थ में अत्यन्त सरलता पूर्वक व सुंदर रीति से किया है और ज्योतिष शास्त्र का प्राचीन काल से वर्तमान काल तक का इतिहास लिखकर इस ग्रन्थ की उपयोगिता अधिक बढ़ा दी है।

मैं आशा करता हूँ कि इस शास्त्र के प्रेमीजन जिज्ञासु तथा सुशिक्षित सज्जन इस अप्रतीम ग्रन्थ से लाभ उठाकर लेखक महोदय को उत्साहित करेंगे।

सर्वतन्त्र स्वतंत्र ज्यौतिष, सिद्धान्त भास्कर, श्रीयुत गेनालाल चौधरी, टीकमणी कालेजाध्यापक काशी :—

हिन्दी भाषा निर्मित यह "सुलभ ज्योतिषज्ञान" नाम का ग्रन्थ महाशय वासुदेव सदाशिव खानखोने जी ने लिखा है। इससे अल्पज्ञ मनुष्य को भी साधारण ज्ञान सुख से हो सकता है। इसलिये इस ग्रन्थ के निर्माणकर्ता को आशीश पूर्वक धन्यवाद देता हूं।

ज्यौतिष शास्त्र मार्तण्ड श्रीयुत दाऊजी दीक्षित दैवज्ञ वाचस्पति, दैवज्ञ चूडामणि काशी :—

ज्योतिषशास्त्र की महानता एवं उसकी अनमोल उपयोगित्ता को ध्यान में रखते हुए सर्व साधारण में इस विद्या का प्रचार करने के लिये एक छोटी किंतु उपयोगी पुस्तक का हिन्दी भाषा में लिखा जाना अत्यंत आवश्यक था। प्रसन्नता की बात है कि पण्डित वासुदेव सदाशिव खानखोजे जी ने अपने "सुलभ ज्योतिष ज्ञान" में प्रायः सभी आवश्यक विषयों का संकलन तथा प्राच्य एवं पाश्चात्य उभय फलित सिद्धान्तों का संमिश्रण सुंदर रीति से सरल भाषा में किया है। यह पुस्तक संस्कृत न जानने वाले ज्यौतिष प्रेमियों और विशारद आदि हिंदी परीक्षाओं के परीक्षार्थियों के लिये विशेष उपयोगी होगी। आशा है कि इस शास्त्र के प्रेमीजन इससे अवश्य लाभ उठावेंगे।

ज्योतिषाचार्य श्रीयुत अनूप मिश्र ज्यौतिष प्रधानाध्यापक, गवर्नमेंट संस्कृत कालेज बनारस:—

पं. श्री वासुदेव, सदाशिव, खानखोजे महोदय जी ने "सुलभ ज्योतिष ज्ञान" नामक अपूर्व पुस्तक लिखकर फलित विभाग एवं हिन्दी भाषा भाषियों पर परम उपकार किया है। इसमें ऐतिहासिक दृष्टि से भी प्रत्येक विषयों का वस्तु स्थिति पर निरूपण पूर्वक समुचित समाधान दिया गया है। मैं हृदय से ऐसे ग्रन्थों का स्वागत करता हूँ जिनके साधारण अध्ययन से भी सनातन गार्हस्थ्य जीवन सुखमय हो सकता है। प्रायः विशुद्ध हिन्दी भाषा में इस विषय की यह पहिली ही पुस्तक है। अधिक अच्छा होता यदि शिक्षालयों में अन्यान्य विषयों की भाँति ऐच्छिक रूप में एक यह भी रख लिया जाता।

ज्यौतिषाचार्य श्रीयुत बल्देव पाठक प्रधान ज्यौतिःशास्त्राध्यापक हिंदु विश्वविद्यालय काशी बनारसः—

पं० श्री वासुदेव सदाशिव खानखोजे महाशयजी का "सुलभ ज्यौतिषज्ञान" नामक संग्रह मैने देखा। इन्होंने बडे परिश्रम तथा विचार से उत्तमोत्तम विषयों का क्रमबद्ध यह संग्रह किया है। आशा है कि ज्योतिष विषय के जिज्ञासुओं को इससे विशेष लाभ होगा अतः यह किसी ज्योतिष के पाठकक्रम में अवश्य रहना चाहिये। श्री विश्वनाथ से प्रार्थना है कि उक्त पंडित जी के परिश्रम से लाभ उठाकर हमारे देशके छात्रगण वंचकों से जगत की रक्षा करें।

ज्योतिषाचार्य श्रीयुत सीताराम झा प्रधानाध्यापक ज्योतिष विभाग संन्यासी संस्कृत कालेज काशीः—